

अगस्त अंक पढ़ा। बुन्देलखंड के काली कवि लेखक प्रो. कृष्णदत्त जोशी, एक खिड़की की खातिर (अंग्रेजी कहानी) तथा साहित्य में दोहरी नैतिकता (परिचर्चा) रचनाएं पर्याप्त प्रभाव छोड़ती हैं। शिक्षा की ज्वलंत समस्याओं को लेकर यदि कोई सारगर्भित रचनाएं **नवनीत** के माध्यम से पढ़ने को मिलें तो सोने में सुहागा।

वैसे **नवनीत** की एक अलग से पहचान तो है ही।

– शांति राजपाल, नया बास, अलवर

* * *

मैं हिंदी भाषा में प्रकाशित सभी पत्रिकाओं का अवलोकन करता हूं, परंतु **नवनीत** पढ़ता हूं। क्या आप अपनी पत्रिका का एक खासा भाग धारावाहिक उपन्यास के रूप में प्रकाशित करने के बजाय इन पृष्ठों का उपयोग अन्य सामग्रियों के लिए कर सकेंगे?

– बी. सहाय, धनबाद, बिहार

* * *

नवनीत अपने नाम को सार्थक करने वाली एक श्रेष्ठ साहित्यिक पत्रिका है। आज के वातावरण में यदि साहित्यिक पत्रिकाओं के सागर का मंथन किया जाये तो नवनीत स्वरूप एक ही पत्रिका हाथ लगती है और वह है **नवनीत**।

नवनीत का प्रत्येक अंक पठनीय ही नहीं, अपितु ज्ञान-लाभ की दृष्टि से संग्रहणीय भी है।

नवनीत का अगस्त - ९१ अंक मनोहारी था। अंग्रेजी कहानी, 'एक खिड़की की खातिर' ने हृदय को झकझोर दिया। प्रेमतपस्वी : ईसुरी धारावाहिक रोचक ढंग से अपने पथ पर अग्रसर हो रहा है। **– उमाकांत दुबे, गुना, म.प्र.**

* * *

'साहित्य में दोहरी नैतिकता का सवाल' (अगस्त अंक) विषयक परिचर्चा के अंतर्गत प्रमुख साहित्यकारों के विचार जानने को मिले। इसके लिए **नवनीत** द्वारा पहल प्रशंसनीय है। आपने इस परिचर्चा के माध्यम से साहित्य के स्पंदित हृदय को छूने का प्रयास किया, निस्संदेह यह एक शुभ शकुन है। बहस को निरंतर रखा जाये, ताकि समकालीन साहित्य दोहरी नैतिकता की भूलभुलैया से निकल सके। **– प्रद्युम्न भट्ट, मंदसौर, म.प्र.**

नवनीत के अगस्त अंक में श्रद्धेय श्री माचवेजी का साक्षात्कार पढ़ा। सचमुच माचवेजी के अवसान से हिंदी साहित्य जगत की अपूरणीय क्षति हुई है। जटिल से जटिल विषय को भी अपनी सरल, सुबोध शैली के जरिये संप्रेषणीय बना देना उनकी विशेषता थी। दैनिक 'चौथा संसार' के जरिये उन्होंने पत्रकारिता जगत में भी अपनी उपस्थिति दर्ज करायी। निःसंदेह हिंदी साहित्य जगत में उनकी सेवाओं को भुलाना नहीं जा सकता।

— आनंद निगम, तराना, म.प्र.

* * *

आपके कार्यालय-माध्यम से प्रेषित **नवनीत** का अगस्त अंक नसीब हुआ। आत्मिक अशेष आभार। दिन-ब-दिन सारस्वत पत्रिका के निखरते साहित्यिक कलेवर से अभिभूत हूं। अध्यात्म से लगायत युगीन तल्खि़यों की-आईनादारी करती हुई पत्रिका, भरपूर-रसपूर है। बहुआयामी याहित्यिक संयोजना के लिए संपादकीय विभाग को अनेकशः बधाइयां।

— मधुर नज्मी, मऊ, उ.प्र.

* * *

अगस्त ९१ का **नवनीत** अंक देखा। अधिकांश सामग्री काफी अच्छी रही। लेख, कविताएं, कहानियां पसंद आयीं। 'नागपंचमी' पर्व पर लिखा गया लेख सरल एवं साहित्यिक भाषा से ओतप्रोत था। बालकथा भी अच्छी थी। दिनेश शुक्ल व कुंवर चंद्रप्रकाश सिंह की कविताएं अच्छी रहीं।

— वासुदेव मिश्र, सुल्तानपुर, उ.प्र.

* * *

नवनीत अगस्त अंक में आचार्य नरेन्द्रदेवजी व डॉ. संपूर्णानंदजी की मित्रता और आपसी विश्वास वाला प्रसंग पभावशाली रहा।

समाजवादी विचारक आचार्य नरेन्द्रदेव द्वारा एक अलग विचारधारा रखने वाले कांग्रेसी मुख्यमंत्री डॉ. संपूर्णानंदजी से अपने दल का घोषणा-पत्र तैयार कराकर बिंना जांच किये मुद्रणालय में छपने के लिए भेज देना एक मिसाल है। ऐसे उदाहरण महा-पुरुषों के जीवन में ही मिल सकते हैं।

— चरणदास प्रजापति, पन्ना, म.प्र.

* * *

नवनीत के अगस्त अंक में श्री कमला शंकर त्रिपाठी की कहानी 'साढ़े सात साती' काफी पसंद आयी। श्री त्रिपाठी ने कहानी के माध्यम से कभी शनि तो कभी किसी अन्य ग्रह का प्रकोप बतलाकर सीधे-साधे यजमानों को ठगनेवाले तथाकथित पंडितों की मक्कारी पर करारी चोट की है। इसी अंक में डॉ. प्रतीक मिश्र के गीत में नायिका की देह, उसके प्राण एवं रूप का सूक्ष्म एवं सरस वर्णन मन को मुदित कर गया। **— भरत सिंह, पटना, बिहार**

विविध उपयोगी सामग्री और साज-सज्जा की दृष्टि से **नवनीत** अभिनंदनीय है। जुलाई अंक में अयोध्या पर डॉ. कृष्णनारायण पांडेय का शोध-लेख मननीय है। वैदिक सरस्वती नदी का प्रवाह गुजरात की साबरमती से जोड़ना प्रमाणसम्मत नहीं है।

इस अंक में इतिहास-विषयक दूसरा लेख श्री अश्विनी केशरवानी का है।

अनेक वर्ष पूर्व मेरे निर्देशन में मध्य प्रदेश के ऐतिहासिक स्थल मल्हार का उत्खनन किया गया था। मेरे पूर्व शिष्य (अब पुरातत्व विभाग, सागर वि. वि. में प्रवाचक) डॉ. श्यामकुमार पांडेय का उस उत्खनन में सहयोग था। कार्य पूरा होने के बाद हम दोनों के नाम से ''मल्हार'' नामक पुस्तक प्रकाशित हुई थी। श्री केशरवानी ने इस पुस्तक से उक्त लेख के लिए सामग्री ली, पर पुस्तक या लेखकों के नाम देना उचित नहीं समझा। पुस्तक को ठीक से पढ़ कर यदि लेख लिखा जाता तो अशुद्धियां न होतीं। लेख में कोसल प्रदेश का नाम ''कौशल'' या ''कोशल'', स्कंद का नाम स्कंध, लकुलीश का लकुशीश, मल्हार के प्राचीन नाम मल्लिकापुर और मल्हापत्तन आदि अशुद्ध दिये हैं। कलचुरि-वंश का शासनकाल १०० से १३०० ई. दिया है। प्रसिद्ध डिंडिनेश्वरी देवी का निर्माण-काल कलचुरि संवत् ९०० से १३०० तक माना है। शिव की मूर्ति को सूर्य लिखा है। किसी पुरातत्ववेत्ता ने मल्हार से प्राप्त प्राचीनतम चतुर्भुज विष्णु मूर्ति को द्वारपाल नहीं कहा, जैसा लेखक ने लिखा है। विष्णु के हाथ में दंड न होकर गदा है। उनके सामने के दोनों हाथों में शंख था।

रामायण में कहीं ऐसा नहीं मिलता कि श्रीराम ने अपने वनवासी जीवन के दस वर्ष पंचतारा नामक स्थान में व्यतीत किये थे, जो मल्हार के समीप स्थित है।

आशा है इस प्रकार के लेख तैयार करते समय लेखक सावधानी बरतेंगे।

– कृष्णदत्त वाजपेयी, सागर, म.प्र.

* * *

नवनीत के जुलाई अंक में प्रकाशित सभी रचनाएं ठीक लगीं। 'कूड़े का ढेर' 'पगडंडी से राजमार्ग तक' एवं 'मिल ही जाते हैं सहारे ढूंढ़ने से' रचनाएं बहुत कुछ सोचने तर विवश करती हैं। 'भारतीय संस्कृति में संगीत' लेख के माध्यम से गर्गजी ने जिस सरलता से हमें संगीत से जोड़ा है, उसके लिए हम लोग उनके आभारी हैं।

ईसुरी बुंदेलखंड के कितने भी महान कवि रहे हों, किंतु अपनी प्रेयसी को इंगित करके गाये फाग किसी भी दृष्टि से उचित नहीं थे। जबकि रजऊ एक सम्मानित परिवार की बेटी और बहू थी। हां एक बात है कि 'दिव्य'जी ने

(शेषांश पृष्ठ ११ पर)

नवनीत

संपादक गिरिजाशंकर त्रिवेदी
उप-संपादक रामलाल शुक्ल
अतिरिक्त सहयोग किशोरीरमण टंडन
प्रकाशक सु. रामकृष्णन्
वर्ष ४०, अंक १०

संस्थापक : कन्हैयालाल मुंशी
भारती : स्थापना १९५६
श्रीगोपाल नेवटिया
नवनीत : स्थापना १९५२

अक्तूबर १९९१

आवरण चित्र : डॉ. जयसिंह नीरज (राधाकृष्ण, अलवर शैली)

साज-सज्जा : ओके, शेणै, नीरज, पुरोहित, गोदीका,

कार्यालय : भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई - ७

फोन : ८११४४६२/८११८२६१



हमारी हिन्दी जननी है

हम हिन्दी के पूत हमारी हिन्दी जननी है
जनम-जनम तक हमें इसी की सेवा करनी है
हम सब इसके माली हैं हिन्दी फुलवारी है
बलिहारी है हिन्दी की सौ-सौ बलिहारी है
हम हैं इसके सेवक रक्षक हम अनुयायी हैं
हम विषपायी जनम-जनम के हम विषपायी हैं
यही हमारी हंसी-ठिठोली बोली-भाषा है
संवेदन की करुणा की हिन्दी परिभाषा है
यही पर्व-त्यौहार राग-रंगों की दुनिया है
यही हिरामन तोता है, यह रावल मुनिया है
यह रहीम रसखान जायसी नानक वाली है
तरह-तरह के गीत चौपदे बानक वाली है
दोहे छप्पय छंद और चौपाई गहने हैं
अवधी, ब्रज, बुन्देली जानें कितनी बहनें हैं
तन है गंगा-जमुना इसका मन हरियाली है
ओस नहायी सुबह-सुबह की यह शेफाली है
नदियों-सी बलखाती चलती जंगल टीलों में
इसकी डुबकी धूप-चांदनी झरना झीलों में
तन भी इसका न्यारा सबसे मन भी न्यारा है
सूरदास की आंखों का यह सपना प्यारा है
हिन्दी के आंसू की कीमत आंकी नहीं गयी.

□ **कैलाश गौतम**

लछिमन रेखा कभी आज तक लांघी नहीं गयी
रत्नाकर पद्‌माकर दिनकर देव बिहारी हैं
पंत निराला इसकी थाली पान-सुपारी हैं
दीप शिखा देहरी की शोभा झिलमिल झिलमिल है
बच्चों की मीठी किलकारी इलबिल सिलबिल है
गांधी जैसे संरक्षक थे संग-संग रहते थे
फादर काभिल बुल्के इसको माई कहते थे
हिन्दी ने ललकारा है अंग्रेज भगाया है
भारतेन्दु ने इसे गले का हार बनांया है ।
प्रेमचन्द के जाने कितने नायक जीती है
जन गण मन के साथ-साथ अधिनायक जीती है
महावीर के तप का फल विस्तार है हिन्दी का
और हमारा जन मानस संसार है हिन्दी का
यही हमारे दद्‌दा की भगवान भारती है
यही चेतना यही प्रार्थना यही आरती है
जब तक हम जीयेंगे जै-जैकार मनायेंगे
नये-नये भावों से हम श्रृंगार सजायेंगे ।

– १३५, एम.आई.जी.,
प्रीतमनगर, सुलेय सराय,
इलाहाबाद, उ.प्र.

अध्यक्ष के पत्र

राजभवन,
मलाबार हिल,
बम्बई.

प्रिय सुहृद्

भूतकाल में पुलिस को अपराधियों को पकड़ने और अपराध दर्ज करनेवाला स्रोत समझा जाता था। वे कानून-व्यवस्था और अपराध के शोधक-स्रोत थे। बड़े शहरों की समस्याएं छोटे शहरों और देहातों की अपेक्षा भिन्न हैं। आज बड़े शहरों की तमाम समस्याओं में से सबसे बड़ी समस्या यातायात भी है, जिसका हमें सामना करना पड़ता है। हमारी कोई यातायात नीति नहीं है। हम भीड़ के घण्टों में शहर की सड़कों पर अतिक्रमण और गतिरोध देखते हैं और एक स्थान से दूसरे स्थान तक यात्रा करना कठिन हो जाता है। इसलिए वाहनों का संचालन पुलिस के प्रमुख कार्यों में से एक है। जब तक इसकी योजना ठीक ढंग से नहीं बनती, तब तक गड़बड़ी होती ही रहेगी। इसके लिए बहुत अच्छी योजना और समस्याओं की बहुत अच्छी समझ की जरूरत है। हमारे पास अपने यातायात सिग्नल्स के लिए नयी तकनीकें हैं। ये तमाम तकनीकें यातायात को सुचारु और व्यवस्थित रूप से चलाने के लिए एक साथ लायी गयी हैं। नहीं तो हम ऐसी स्थिति में पहुंच जायेंगे कि जिन वाहनों से हम प्रति घण्टा ६० से १०० कि. मी. तक की यात्रा कर सकते हैं, उनसे रेंगते हुए यात्राएं करेंगे और समय पर अपने गंतव्य तक नहीं पहुंच पायेंगे। इसलिए यह उन प्रमुख समस्याओं में से एक है, जिसकी योजना ठीक से बनायी जानी चाहिये।

जब औद्योगिक विकास होता है तो उसका संबंध दूसरों से भी होता है और इस विकास के साथ ही पुलिस की जिम्मेदारियां भी बढ़ जाती हैं। जब कभी औद्योगिक संबंधों में तनाव आता है, तब कानून और व्यवस्था की समस्याएं उपस्थित हो जाती हैं और अपराधियों की तरह नहीं, बल्कि एक दूसरे ढंग से संभालना पड़ता है। दूसरी ओर बड़ी समझदारी से काम लेना पड़ता है। मजदूरों में यह धारणा घर न करे कि उद्योगपतियों ने उन पर नजर रखने के लिए पुलिस बुलायी है या उद्योगपति यह न समझें कि पुलिस मजदूरों का

पक्षपात कर रही है। उन्हें इस संबंध में उचित दृष्टिकोण अपनाना चाहिये। इसके लिए नये विशेषज्ञों की आवश्यकता है।

पुलिस को बहुत ही संवेदनशील समस्याओं का सामना करना पड़ता है, जैसे कि - राजनैतिक समस्याएं। आज देश में बहुत से राजनैतिक दल हैं और राजनैतिक दलों के कार्य विभिन्न प्रकार के प्रदर्शन हैं। विधान-सभा के अतिरिक्त गलियों और सड़कों पर भिन्न-भिन्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्रदर्शन होते हैं। मामूली से मामूली घटनाओं पर प्रदर्शन के लिए आह्वान किये जाते हैं। राजनैतिक अपने व्यक्तिगत कारणों से भी बन्द का आवाहन करते हैं और वह भी पूरे समाज के कार्यों को पंगु बनाते हुए। इन परिस्थितियों से कैसे निपटें? जुलूस वाहनों के मार्गों पर चलते है। सच कहा जाय तो जुलूस के प्रदर्शनकारी यह सोचते हैं कि जनता पर प्रभाव डालने का सबसे अच्छा तरीका यह है कि यातायात को अस्त-व्यस्त और अव्यवस्थित कर दिया जाय।

पुलिस अधिकारियों को मात्र कानून और व्यवस्था का ही व्यक्ति नहीं होना चाहिये, बल्कि उन्हें राजनीतिज्ञ और प्रशासक भी होना चाहिये। उन्हें भिन्न-भिन्न परिस्थितियों का सामना करने का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिये।

इस संबंध में एक और प्रमुख और खतरनाक समस्या यह है कि जैसे-जैसे महानगरों का विकास होता जा रहा है, वैसे-वैसे राजनैतिक दलों की भांति असामाजिक तत्वों के संगठन भी बनते जा रहे हैं। वे अकेले या छोटे दलों में ही नहीं, बल्कि बड़े माफिया गिरोहों में अलग-अलग शहरों में काम करते हैं और वे समग्र समाज के लिए खतरनाक ताकतें बनते जा रहे हैं। वे मादक द्रव्यों के व्यापार में संलग्न हैं, जो करोड़ों का मुनाफा देनेवाला व्यापार है। वे तस्करी भी करते हैं। इस प्रकार मादक द्रव्यों के माफिया और तस्कर हमारे सामने हैं, उनसे कैसे निपटा जाय?

हम काले धन की बातें करते आ रहे हैं। मैं एक भूतपूर्व अर्थमंत्री के अनुभव से कहता हूं कि काला धन उद्योगों और व्यापारियों के पास नहीं है, बल्कि आज यह माफिया गिरोहों के पास है, जो मादक द्रव्यों और तस्करी का व्यापार करते हैं। उनके पास राजनीतिज्ञों और अधिकारियों को प्रभावित करने के तमाम साधन हैं। आज यह वास्तविक खतरा पैदा हो गया है। हमें इसकी जानकारी होनी चाहिये। यदि हम इन्हें ऐसा करने की छूट देते हैं तो हमारे यहां कानून का शासन नहीं, बल्कि माफिया गिरोहों का शासन होगा।

जबतक पुलिस बल को ठीक से सुसज्जित (साधनों से) और शिक्षित-

प्रशिक्षित नहीं किया जायेगा, तब तक इन समस्याओं का सामना करना संभव नहीं होगा।शहरों में पुलिस को एक विशेष कार्यभार संभालना है और यह तभी संभव होगा जब उसे विशिष्ट रूप से प्रशिक्षित, सुसज्जित और बेहतर समझदारी से लैस किया जायेगा।

इस प्रकार की अन्य समस्याएं भी हैं, जिन्हें हम सब जानते हैं। अंततः एक सभ्य समाज कानूनों को बनाता है और कानून लोगों को उसके पालन करने के लिए तैयार करते हैं। एक सभ्य समाज में अधिकांश लोग कानून के पाबंद होते हैं।

अतः समाज में व्यवस्था और शांति इस बात पर निर्भर करती है कि हम सब कानून के कितने पाबंद हैं। जब तक सब लोग कानूनों का पालन नहीं करेंगे, तब तक यह संभव नहीं होगा कि कानूनों को व्यवहारों में परिणत किया जाय और एक सुव्यवस्थित समाज तैयार किया जाय।

एक और बात जिसे कहना चाहता हूं कि हममें से कुछ लोग तथाकथित वी. आई. पीज. में लगे रहते हैं। एक राज्यपाल को एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाना पड़ता है और वे वाहनों को संचालित करते हैं। हां, इसके लिए कुछ आवश्यक व्यवस्था होनी चाहिये, किंतु जनता को असुविधाओं में डालकर नहीं। कभी राष्ट्रपति तो कभी राज्य-पाल या कभी मुख्य मंत्री का आगमन होता है और वे सोचते हैं कि दस-पंद्रह मिनटों के लिए यातायात अवरुद्ध कर दिया जाय। दुर्भाग्य से हम में से कुछ समय की चिंता नहीं करते और इससे दूसरों की समस्याएं बढ़ जाती हैं। इस स्तर पर भी अध्ययन किया जाना चाहिये कि वाहनों का संचालन बिना किसी को असुविधा में डाले कैसे किया जाये ?

मैंने वाहनों की बड़ी भीड़ में रानी और ब्रिटेन के प्रधानमंत्री को लंदन की गलियों में घूमते देखा है। वहां भी यातायात का संचालन होता है, किंतु कोई भी एक मिनट से अधिक की असुविधा का अनुभव नहीं करता। इसलिए मेरी इस संदर्भ में भी रुचि है, क्योंकि मैं राज्यपाल के पद पर हूं और मैं चाहता हूं कि लोगों की असुविधा का कारण न बन सकूं।

— आपका

सी. सुब्रमण्यम्

(पृष्ठ ३ का शेषांश)

उपन्यास को आंचलिक शब्दों में पिरोकर सुंदर शैली में लिखा है। इसके लिए वे निश्चय ही प्रशंसा के पात्र हैं।

– उर्मिला सिंह, कानपुर उ.प्र.

* * *

नवनीत हिन्दी की पत्रिकाओं में भारतीय संस्कृति का वास्तविक **नवनीत** है। जुलाई अंक आद्योपांत पढ़ा। 'अयोध्या की प्राचीनता', 'मिथिला स्थापत्य कला' तथा 'जहां मर्द परदा करते हैं' में जानकारी खोजपूर्ण एवं संग्रहणीय थी। 'पगडंडी से राजमार्ग तक' बहुत ही रोचक तथा 'अनाम रिश्ते' कहानी बहुत ही मार्मिक थी। आवरण-चित्र के लिए श्री देवव्रत बनर्जी को बधाई। बच्चों के लिए छोटे नाटक भी जरूर दिया करें, नाटक बिल्कुल नहीं आते, जिसकी कमी खलती हैं।

– के. सी. राठौर, भोपाल, म.प्र.

* * *

नवनीत के जुलाई अंक से रोचक सामग्री तथा साहित्यिक गतिविधियों की पूरी जानकारी मिली। 'देवीदत्त शुक्ल' शताब्दी समापन समारोह का ब्यौरा पढ़कर बेहद खुशी होना स्वाभाविक है। शुक्लजी ने 'सरस्वती' के माध्यम से नये लेखकों को प्रोत्साहन दिया - मुझे भी। उनकी स्मृति को मेरा प्रणाम। पं. देवीदत्त शुक्ल संस्थान की स्थापना का स्वागत है। एक भरा-पूरा ग्रंथ शुक्लजी पर निकलना आवश्यक है। उनके योगदान पर जितना भी लिखा जाय कम है। पं. रमादत्त शुक्ल बधाई के पात्र हैं।

– रमा सिंह, लखनऊ, उ.प्र.

* * *

नवनीत का जुलाई अंक देखने का अवसर मिला। पत्रिका का आवरण-पृष्ठ काफी चित्ताकर्षक बन पड़ा है। बधाई। प्रकाशित सभी स्तंभ महत्वपूर्ण एवं रुचिकर प्रतीत हुए। कहानी 'एक और सीता', 'अनाम रिश्ते', 'नीड़ की तलाश' ने मन को काफी प्रभावित किया। रचनाकारों को साधुवाद। पत्रिका में अंतिम स्तंभ 'दो क्षण हंस न लें' का अभाव बहुत ही खटका।

– डॉ. रामप्रेम सिंह 'निराला', समस्तीपुर, बिहार

* * *

जुलाई अंक में **नवनीत** की रचनाएं लगभग सभी मैंने पसंद की हैं। लोग अच्छा लिख रहे हैं या आप अच्छा लिखवा लेते हैं - सोच रहा हूं। सच, पुराने तो पुराने (वरिष्ठ) लेखकों के साथ कनिष्ठों की लेखनी भी स्थान पा रही है।

डॉ. कृष्णनारायण पांडेय ने 'अयोध्या की प्राचीनता' में जैनों की पुरातनता पर कलम नहीं चलायी, उसे भी स्पर्श किया जा सकता था।

– सुरेश सरल, जबलपुर, म.प्र.

सांस्कृतिक मंच

शुक्लजी का नार्वे में सम्मान

ओसलो में गत दिनों भारतीय साहित्यकार एंव पत्रकार सुरेशचन्द्र शुक्ल का सम्मान किया गया। श्री शुक्ल का यह सम्मान उनके सांस्कृतिक एंव मानवाधिकार के कार्यों के लिए एक प्रतिष्ठित नार्विजन संस्थान द्वारा किया गया।

नार्विजन राजा के पदक से सम्मानित एवं संस्थान के अध्यक्ष एडवोकेट सिगरीद ओइहाडगेन ने कहा कि सुरेशचन्द्र शुक्ल के कार्यों से नार्वे और भारत के सांस्कृतिक संबंध मजबूत हुए हैं।

श्री सुरेशचन्द्र शुक्ल ग्यारह वर्ष पूर्व नार्वे आये थे। नार्वे में वे भारतीय संस्कृति एंव हिन्दी का प्रचार और प्रसार कर रहे हैं तथा नार्विजन पत्र (समाचार पत्र) से जुड़े हुए हैं।

श्री शुक्ल के चार काव्य संग्रह भारत से प्रकाशित हो चुके हैं।

— माया भारती

* * *

बेल्जियम में रामायण की गूंज

हाल में ही बेल्जियम के ल्युबेन नगर में स्थित कैथोलिक विश्वविद्यालय में त्रिदिवसीय अष्टम 'अंतर्राष्ट्रीय रामायण सम्मेलन' सम्पन्न हुआ। इसका उद्घाटन भारत के राजदूत श्री ए. के. सेन गुप्ता ने किया तथा समापन करते हुए श्री लल्लन प्रसाद व्यास ने नवां 'अंतरराष्ट्रीय रामायण सम्मेलन' इण्डोनेशिया में आयोजित करने की घोषणा की।

सम्मेलन की मुख्य चर्चा 'रामायण में विश्वव्यापी मानव मूल्यों' विषय के इर्द-गिर्द घूमती रही। इसमें १२ देशों के ५० रामायण के विद्वानों ने भाग लिया, जिसमें भारत की संख्या लगभग २० थी। यूरोप में होने वाला यह अपने ढंग का पहला रामायण आयोजन था।

— अखिल

* * *

'शिल्पी' की चित्र-प्रदर्शनी

कानपुर विश्वविद्यालय के रजत जयंती समारोह के अवसर पर प्रख्यात चित्रकार संस्था 'शिल्पी' ने एक चित्र-प्रदर्शनी का आयोजन किया, जिसमें कानपुर विश्वविद्यालय से संबद्ध चित्रकारों ने अपनी कृतियां प्रदर्शित कीं। इस चित्र-प्रदर्शनी में ३२ कलाकारों की बत्तीस कृतियां प्रदर्शित

की गयी थीं।

डॉ. मकबूल अंसारी, डॉ. एस. एन. सक्सेना, डॉ. एस. पी. सक्सेना, डॉ. प्रेमा मिश्र, डॉ. आईवी. रुवेन, डॉ. शशी भटनागर, व दिनेश कुमार मिश्र आदि के चित्र पूर्व- प्रदर्शित थे। श्रीमती कोनिका बनर्जी का चित्र 'मून लाइट' तो वर्ष १९६८ का बना चित्र था।

श्रीमती शान्ती चौधरी, श्रीमती चित्रा शर्मा, कु. अलका कटियार, कु. दीपा मिश्र 'दीपाली', श्रीमती रमा वर्मा, योगेन्द्र देव सिंह, डॉ. रामेश्वर वर्मा, कु.विनीता सक्सेना, श्रीमती सरला सिंह आदि की कृतियां कलाकार की साधना को मुखरित करती हैं। बी. एन. सिंह की कृति 'विरहणी' धातु–मिश्रित सुंदर रचना है।

इस चित्र-प्रदर्शनी का उद्घाटन कानपुर विश्वविद्यालय के कलुपति श्री विश्वम्भर नाथ उपाध्याय ने किया।

– डॉ. रामेश्वर वर्मा

* * *

मुकेश की पुण्य-तिथि

'सत्कार' म्युजिकल आर्गनाइजेशन, रायबरेली के तत्वावधान में अमर गायक मुकेश की १५ वीं पुण्य-तिथि 'एक शाम मुकेश के नाम' संगीत-संध्या का आयोजन किया गया। जिसमें टी. एन. मिश्रा एवं अनिल-नीता वैलिंगटन ने मुकेश के हृदयस्पर्शी गीत गा कर एक बार पुनः स्व. मुकेश की याद को ताजा कर दिया।

कार्यक्रम के अध्यक्ष श्री ए. सी. गौड़ ने मुख्य अतिथि श्री वाई. एन.पाठक, मुख्य चिकित्साधिकारी का स्वागत किया। श्री पाठक ने मुकेश के चित्र पर माल्यार्पण कर दीप प्रज्वलित किया। संयोजक उजैर अहमद खां वारसी ने इस अवसर पर संरक्षक श्री रवीन्द्र जैन (संगीतकार बंबई) एवं डॉ. गिरिजा-शंकर त्रिवेदी (संपादक 'नवनीत' बंबई) के बधाई संदेशों को पढ़कर सुनाया

– टी.एन. मिश्र

* * *

कवि दिवस पर नवगीत संग्रह

हिन्दुस्तानी एकेडमी ने दिनांक ३ अगस्त को राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त का जन्म दिन इलाहाबाद में कवि दिवस के रूप में मनाया। इसी आयोजन में हिन्दुस्तानी एकेडमी द्वारा प्रकाशित कवि अमरनाथ श्रीवास्तव के नवगीत संग्रह 'गेरू की लिपियां' का विमोचन कथाकार श्री अमरकांत ने किया। इस अवसर पर श्री कैलाश गौतम ने लोकार्पित काव्य संग्रह 'गेरू की लिपियां' पर एक चर्चा पढ़ा। संग्रह के रचनाकार अमरनाथ श्रीवास्तव ने नवगीत की दृष्टि और उसकी भाषिक संरचना पर अपने विचार व्यक्त किये। कवि श्री शिवकुटीलाल वर्मा की अध्यक्षता में एक

कवि-गोष्ठी भी आयोजित की गयी।

— **अखिलेश शुक्ल**

* * *

'पत्नी चालीसा' का विमोचन

विगत दिनों रांची में स्थानीय हास्य-व्यंग्य रचनाकारों का एक साहित्यिक सम्मेलन हुआ। प्रयोजन था युवा व्यंग्यकार शंकर मुनि राय गड़बड़ के कविता संग्रह 'पत्नी चालीसा' का विमोचन। विमोचनकर्ता थे बिहार राष्ट्रभाषा हिन्दी प्रगति समिति के अध्यक्ष डॉ. रामवचन राय तथा विशिष्ठ अतिथि के रूप में उपस्थित थे वेंकटेश्वर विश्वविद्यालय तिरूपति के हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ.डी. दस्तागिरि।

व्यंग्यकार डॉ. सिद्धनाथ कुमार ने अध्यक्षता की। डॉ. रामवचन राय व डॉ. अशोक प्रियदर्शी ने प्रस्तुत काव्यसंग्रह में हास्य-व्यंग्य के माध्यम से सांस्कृतिक मूल्य की बात कही। कार्यक्रम का संचालन कर रहे थे डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी।

— **शंकर मुनि राय 'गड़बड़'**

* * *

तुलसी जयंती सम्पन्न

फैजाबाद : गत १६ अगस्त को अवधी के प्रसिद्ध कवि पंडित सत्य-नारायण द्विवेदी 'श्रीश' की अध्यक्षता में तुलसी जयंती सम्पन्न हुई।

कार्यक्रम के प्रारंभ में अवधी साहित्य संस्थान के अध्यक्ष पंडित राजबहादुर द्विवेदी ने संत तुलसीदास के चित्र पर माल्यार्पण किया।

उक्त अवसर पर श्री द्विवेदी ने संत तुलसीदास के जीवन पर प्रकाश डालते हुए कहा कि वे सर्वव्यापी हो गये हैं। उन्होंने ऐसे आदर्श मानव का अपने रामचरित मानस में चित्रण किया है, जो अन्य किसी भी साहित्य में दुर्लभ है। डॉ. रामशंकर त्रिपाठी ने कहा कि तुलसीदास का रामचरित जन मानस के गले का कंठहार है।

इस अवसर पर स्थानीय कवियों में सर्वश्री अम्बिका प्रसाद त्रिपाठी 'मतवाला', राजेन्द्र प्रकाश वर्मा, रामानंद सागर व डॉ. राधा पांडेय ने तुलसीदास के प्रति अपनी काव्यांजलि अर्पित की। — **राजेन्द्र प्रकाश वर्मा**

* * *

'अक्षर देश' का लोकार्पण

कानपुर नगर की प्रतिष्ठित साहित्यिक संस्था 'अनुरंजिका' तथा 'उपनिषद' के तत्वावधान में तुलसी जयंती उत्सव के साथ कविवर ओमकारनाथ मिश्र वीरेश कात्यायन की चौथी काव्यकृति 'अक्षर देश' का लोकार्पण सम्पन्न हुआ। कृति का लोकार्पण मुख्य आयकर आयुक्त जी. सी. अग्रवाल ने किया।

मानस संगम की ओर से मदन शर्मा ने उत्तरीय एवं मानस संगम द्वारा प्रकाशित साहित्य प्रदान किया। उपनिषद के संरक्षक श्रीकांत तिवारी ने उत्तरीय वस्त्र आदि के साथ रु.५०१ की धनराशि प्रदान की। नागरिक जागृति मंच की ओर से भी रु. ५०१ की धनराशि प्रदान की गयी तथा सेठ छन्नूलाल की ओर से अभिनंदन पत्र भेंट किया गया। श्रीमती सरला सिंह 'मंजु' ने कवि को तैलचित्र समर्पित किया।

समारोह के अध्यक्ष डॉ. बृजलाल वर्मा, मुख्य अतिथि जी. सी. अग्रवाल, हिन्दी संस्थान के उपाध्याय परिपूर्णानंद वर्मा, प्रो. सेवक वात्स्यायन, डॉ. माधवीलता शुक्ल एवं कालीशंकर अवस्थी ने कृतिकार तथा तुलसी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डाला। **— मधुलिका जयराम**

* * *

कवि-गोष्ठी

विगत १५ अगस्त को 'प्रगतिशील लेखक संघ' समस्तीपुर की ओर से स्वाधीनता दिवस के उपलक्ष्य में एक भव्य कवि-गोष्ठी आयोजित की गयी। गोष्ठी की अध्यक्षता एम. पी. 'जौहर' ने की तथा संचालन किया गीतकार लक्ष्मी ना. 'जिज्ञासु' ने।

भाग लेने वाले कवियों में प्रमुख थे सर्वश्री नाशाद 'औरंगावादी', रजा 'अश्क', रघुवंश 'रसिक', बालेश्वर 'अभिनव', अजीम 'अशरफ' अरुण 'अभिषेक', चंद्रभूषण 'चंद्र', भोला ठाकुर, दिनेश ठाकुर, 'बारूद'जी तथा नंदकिशोर शर्मा। **– नंदकिशोर शर्मा**

* * *

साहित्यकारों को श्रद्धांजलि

'संबोध' और 'मुखौटा' नाटय संस्था ने हिन्दी हाई स्कूल घाटकोपर में दिवंगत साहित्यकारों डॉ. शंभुनाथ सिंह, शरद जोशी और रमाकांत को श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए डॉ. गिरिजाशंकर त्रिवेदी की अध्यक्षता में एक सभा आयोजित की। इस अवसर पर डॉ. त्रिवेदी ने अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा कि शंभुनाथ सिंह सजग निर्भीक और मिट्टी से जुड़े हुए रचनाकार थे और शरद जोशी मानवीय पक्ष के व्यंग्यकार। सच्चिदानंद सिंह समीर ने शंभुनाथ सिंह को जीवट और संघर्ष का नवगीतकार बताया। डॉ. रविनाथ सिंह ने डॉ. शंभुनाथसिंह को गंतव्य का ज्ञाता गीतकार बताते हुए शरद जोशी को वर्तमान परिवेश का व्यंग्यकार माना।

इस अवसर पर भगवत्लाल उत्पल, संतोष जैन, राजाराम सिंह, एन. बी. सिंह नादान, प्रीतम कुमार सिंह त्यागी, देवधुरन्धर समीर, विधु भूषण त्रिवेदी, राजीव सारस्वत, राजदेव सिंह, मुरलीधर पाण्डेय और डॉ. कैलाशनाथ पवार ने भी अपने श्रद्धा-पुष्प दिवंगत रचनाकारों को अर्पित किये।

— सच्चिदानंदसिंह समीर

मासिक भविष्यफल : अक्तूबर - ९१

□ पं. वी. के. तिवारी

मेष : (१४ अप्रैल - १३ मई)

दस तारीख तक ग्रह गोचरजन्य स्थितियां आपके अनुकूल प्रभावदायिनी रहेंगी। समय का सदुपयोग राजनीति एवं व्यवसाय से संबद्ध व्यक्तियों को करना चाहिये। व्यवधान, जटिलता एवं प्रतिकूलता पर आप विजयश्री हासिल करने में सफल रहेंगे। ११ से मास के अंत तक अपने ही लोग कठिनाइयों को जन्म देने वाले सिद्ध होंगे। दांपत्य साथी की पीड़ा बढ़ेगी। पारिवारिक सुख में बाधा रहेगी। राजनीतिक जीवन में प्रतिष्ठा बढ़ेगी। नौकरी में परीक्षा में सफलता मिलेगी।

वृष : (१४ मई - १४ जून)

दिनांक १५ तक पूर्व स्थितियों में कोई परिवर्तन होगा, कहना कठिन है। प्रतिकूल प्रभाव से मन में उद्वेग, उदासीनता एवं चिंता बढ़ती रहेगी। १५ के उपरांत मासांत तक अभीष्ट मंतव्य पूर्ण होंगे। धन, सुख, उपभोगादि में वृद्धि होगी। राजनीतिकों को जनसंपर्क से लाभ होगा। मनोबल एवं शारीरिक सुख में वृद्धि होगी। विरोधियों पर विजय होगी। कार्य की दिशा में प्रगति होगी।

मिथुन : (१५ जून - १६ जुलाई)

माह का पूर्वार्ध दांपत्य सुख की दृष्टि से उत्तम है। आपसी संबंधों में प्रगाढ़ता आयेगी। स्थायी संपत्ति हेतु अनुकूल स्थितियां बनेंगी। यात्रा असुविधापूर्ण रहेगी। मानसिक कष्ट से मुक्त हो पाना आपके मनोबल पर निर्भर करेगा। स्वास्थ्य के प्रति ध्यान रखना अपरिहार्य रहेगा। इस माह संतान पक्ष एवं विरोधी पक्ष की ओर से विशेष ध्यान रखना उपयुक्त रहेगा। माह के उत्तरार्ध में आर्थिक कठिनाई एवं वार्ता असफलता की स्थिति बनी रहेगी। विद्या के क्षेत्र में सफलता मिलेगी। यह माह यात्रा एवं नये कार्य हेतु उपयोगी नहीं है।

कर्क : (१७ जुलाई - १५ अगस्त)

दिनांक ११ तक महत्वपूर्ण कार्य, यात्रा एवं जोखिम के कार्यों का सूझबूझ

के साथ श्रीगणेश करें। शारीरिक सुख उत्तम रहेगा। संतान पक्ष से यश वृद्धि होगी। गृहिणी का सहयोग वांछित रूप से मिलेगा। पूर्वार्ध की तुलना में उत्तरार्ध में पारिवारिक सुख एवं मैत्री सुख यथेष्ठ मिलेगा। राजनीतिज्ञों को उत्तरार्ध में सर्वसाधारण से असहयोग मिलेगा। स्थायी सम्पत्ति के कार्यों में व्यवधान उत्पन्न होंगे। आर्थिक स्थिति सामान्यतः संतोषप्रद रहेगी।

सिंह : (१६ अगस्त - १६ सितंबर)

यह माह विचित्र आकस्मिकताओं से पूर्ण रहेगा। कब पारिवारिक सुख-सहयोग प्राप्त होने लगे और कब आरोप, अवमानना और असहयोग मिले कहना मुश्किल है। व्यावसायिक उलझनें बढ़ेंगी। आर्थिक स्थिति संतुलित रहेगी। उत्तरार्ध में शनै : शनैः आपकी स्थिति सुदृढ़ होती जायेगी। लंबित कार्यों का निपटारा त्वरित गति से होता जायेगा। विद्यार्थी वर्ग को सुख के अवसर यथेष्ठ मिलेंगे।

कन्या : (१७ सितंबर - १६ अक्तूबर)

माह के पूर्वार्ध में स्वास्थ्य के प्रति विशेष ध्यान रखें। जोखिम लेना हित कर नहीं होगा। दुर्घटना अथवा विरोधी वर्ग की शक्ति का आकलन कम न करें। मान-सम्मान प्रभावित रहेगा। कार्य में प्रगति विलंबित गति से होगी। आत्मीय वर्ग से विवाद की स्थिति निर्मित हो सकती है। उत्तरार्ध में धीरे-धीरे स्थिति आपके पक्ष में होती जायेगी। कोई विशेष सफलता मिलना तो संदिग्ध ही है, परंतु परिवार एवं मित्र वर्ग के वांछित सुखों की सृष्टि होगी।

तुला : (१७ अक्तूबर - १५ नवंबर)

वर्ष के प्रतिकूल समय के दौर से आप गुजर रहे हैं। ग्रहजन्य प्रतिकूलता में कमी आपके विगत कार्यों, मित्रों एवं सूझबूझ के माध्यम से ही हो सकती है। स्वास्थ्य में गिरावट आयेगी। नौकरी में पद-हानि या प्रतिष्ठा हानि संभावित है। व्यवसाय में कठिनाइयों का सैलाब उमड़ता प्रतीत होगा। उदर या नेत्र-पीड़ा संभावित है। दांपत्य साथी से कलह या कष्ट रहेगा। विद्यार्थी एवं वकील वर्ग को विशेष प्रतिकूलता मिलेगी। इस माह नये कार्य का श्रीगणेश, विशेष उद्देश्य से यात्रा, महत्वपूर्ण वार्ता आदि में विशेष व्यवधान उत्पन्न होंगे।

वृश्चिक : (१६ नवंबर - १५ दिसंबर)

प्रारंभिक दिनों में सुखद समय आपके साथ चलेगा, परंतु आने वाले दिनों में स्थिति बदल जायेगी। मानसिक कष्ट बढ़ता जायेगा। नौकरी या रोजगार में कार्य या परिश्रम का यथेष्ठ प्रतिफल मिलना कठिन है। दांपत्य साथी से दुःख ही हाथ लगेगा। व्यय में वृद्धि होगी। मतभेद एवं विरोध बढ़ेगा। प्रत्येक कार्य में चिंतन, मनन, धैर्य के उपरांत ही प्रवृत्त होना उचित रहेगा। उच्चपदस्थ

३।

व्यक्तियों को परेशानी होगी।

धनु : (१६ दिसंबर - १३ जनवरी)

वर्ष का श्रेष्ठ समय आपके जीवन में पदार्पण कर रहा है। वर्ष भर की पीड़ा और वेदना समाप्त होगी। दीर्घकालिक लाभ होगा। मंगलोत्सव के अवसर हैं। स्वार्थ से परे व्यक्ति आपके लिए उपयोगी सिद्ध होंगे। लंबी यात्रा के सयोग हैं। सामाजिक, राजनीतिक एवं व्यावसायिक स्तर में वृद्धि होगी। मानसिक शांति एवं गृह सुख में वृद्धि होगी। योजनाबद्ध प्रयासों की परिणति आपके पक्ष में होगी।

मकर : (१४ जनवरी - १२ फरवरी)

माह का पूर्वार्ध बाधाओं से युक्त रहेगा। शारीरिक पीड़ा, कार्यावरोध, पराजय जैसे उत्पीड़न को भोगना पड़ सकता है। धन का अपव्यय, गृह सुख में कमी, यात्रादि की स्थिति बनेगी। ११अक्तूबर तक महत्वपूर्ण वार्ता, यात्रा, जोखिम आदि की दृष्टि से नितांत अनुपयुक्त समय है। उत्तरार्ध में पद प्रतिष्ठा कार्य दायित्व में वृद्धि एवं सुयश मिलेगा। परहित के कार्य संपादित होंगे। व्यक्तिगत प्रभाव बढ़ेगा।

कुंभ : (१३ फरवरी - १४ मार्च)

यह माह विभिन्न स्तरों पर प्रतिकूलता स्थिति वाला रहेगा। पत्नी के स्वास्थ के प्रति ध्यान रखें। रोग के प्रति सावधानी उपयोगी रहेगी। धैर्य, मनोबल एवं स्थितिपरक विश्लेषण कर अपने कार्य में प्रवृत्त होना उचित रहेगा।

मीन : (१५ मार्च - १३ अप्रैल)

आपके प्रेम संबंधों में बिखराव आ सकता है। संयत, सौम्य व्यवहार आपको कठिनाई से बचायेगा। दांपत्य सुख में कमी आयेगी। मनोकष्ट या मनोवेदना की संभावना है। राजनीति एवं व्यवसाय में संधि की विवशता उत्पन्न होगी। यात्रादि में कष्ट होना सहज है। आत्मीय वर्ग का व्यवहार भी शत्रुवत प्रतीत होगा। स्त्रीपक्ष की ओर से समस्याएं बढ़ेंगी। ११ तारीख के पश्चात् निश्चय ही सफलता सुख, समृद्धि, संतान सुखादि की स्थितियां उत्पन्न होंगी।

— देवलोक कॉलोनी, सी.टी.ओ.
बेरागढ़, भोपाल, म.प्र.

□

चंदे की दरें : एक वर्ष ८० रु.; दो वर्ष : १५० रु.; तीन वर्ष : २०० रु.; पांच वर्ष : ३५० रु.; दस वर्ष : ७०० रु.; □ **विदेशों में समुद्री मार्ग से (एक वर्ष के लिए)** पाकिस्तान, श्रीलंका १४० रु.; अन्य देश २०० रु. □ **हवाई डाक से (एक वर्ष के लिए) प्रत्येक देश के लिए** : ३३० रु.; □ बम्बई से बाहर चेक भेजनेवाले ७ रु. अधिक भेजें □ चेक ड्राफ्ट 'भारतीय विद्या भवन' के नाम से भेजें।

बुद्धिमान ब्राह्मण

□ श्याममनोहर व्यास

धारानगरी के राजा भोज विद्वानों की बुद्धिपरीक्षा लेने में बड़े चतुर थे। वे अपने दरबार में गुणीजनों को पूरा आदर देते थे। एक से बढ़कर एक गुणीजन उनके दरबार की शोभा बढ़ाते थे।

धारानगरी से दूर एक गांव में एक ब्राह्मण रहता था। वह विद्वान् था पर गरीब था। उसे इतनी आय नहीं होती थी कि उसका जीवन-यापन ढंग से हो सके। उसका नाम चन्द्र शर्मा था।

एक दिन उसकी पत्नी ने उसे राय दी, 'प्रिय! आप इतने विद्वान् हो, क्यों नहीं धारानगरी के राजा भोज के दरबार में जाकर अपनी विद्वता का परिचय दो। वे विद्वानों का बड़ा सम्मान करते हैं।'

चन्द्र शर्मा ने पत्नी की बात मान कर धारानगरी जाने का निश्चय किया।

जब वह धारानगरी पहुंचा तो राजमहल के वैभव को देख कर चकित हो गया। भव्य ऊंचा राजमहल, बड़ा-सा दरवाजा, उसके बाहर खड़े सतर्क पहरेदार। बिना जांच-पड़ताल किये वे किसी को अन्दर नहीं जाने देते थे।

चन्द्र शर्मा दरवाजे के पास पहुंचा तो पहरेदार ने टोका - 'तुम किससे मिलना चाहते हो, अपना परिचय दो।'

चन्द्र शर्मा ने कुछ सोच कर कहा - 'भाई मैं राजा भोज से मिलना चाहता हूं। उन्हें कहना कि उनका मौसेरा भाई आया है।'

पहरेदार ने चकित होकर उसे घूरा। उसने सोचा, यह दीन-हीन व्यक्ति राजा का मौसेरा भाई कैसे?

वह राजा भोज के पास गया और उन्हें चन्द्र शर्मा के आने की सूचना दी।

राजा भोज उस समय अपने दरबारियों से कुछ सलाह-मशविरा कर रहे थे। उन्होंने सोचा - मेरा कौन-सा मौसेरा भाई? मेरी मां के तो कोई बहन ही नहीं है।

फिर भी राजा ने चन्द्र शर्मा को आदर के साथ दरबार में बुला भेजा।

दीपावली विशेषांक

हमारा नवंबर-१९९१ का अंक दीपावली विशेषांक के रूप में मनोहारी साज-सज्जा के साथ विविधतापूर्ण विशिष्ट सामग्री के साथ प्रकाशित होगा। अतएव पाठकों एवं एजेन्टों से अनुरोध है कि उसकी अग्रिम प्रतियां सुरक्षित कराना न भूलें। **—व्यवस्थापक**

चन्द्र शर्मा राजा का अभिवादन कर एक नियत स्थान पर बैठ गया। राजा ने पूछा - 'विप्रवर, आप मेरे मौसेरे भाई कैसे लगते हैं? मेरे तो कोई मौसी ही नहीं है।'

विद्वान् चन्द्र शर्मा ने उत्तर दिया - 'महाराज! परम पिता परमात्मा की दो पुत्रियां हैं। पहली सम्पत्ति और दूसरी विपत्ति। आप पहली पुत्री के पुत्र हैं, क्योंकि उसकी आप पर कृपा है। मैं दूसरी पुत्री का बेटा हूं, निर्धन और अभावग्रस्त। चूंकि आप का विपत्ति से पाला नहीं पड़ा है, अतः आप उसे पहचानते नहीं।'

चन्द्र शर्मा का ऐसा सूझ-बूझ भरा उत्तर सुन कर राजा भोज बड़े प्रसन्न हुए।

राजा ने कहा — 'विप्रदेव, अब मैं आपसे चार प्रश्न पूछूंगा, सही उत्तर मिलने पर आपको दरबार में रख लिया जायेगा।'

भोज ने पहला पश्न पूछा - 'दूध किसका अच्छा होता है?'

चन्द्र शर्मा ने सोच कर उत्तर दिया - 'दूध मां का अच्छा होता है, जो हमें प्राणदान देता है।'

भोज ने दूसरा प्रश्न पूछा - 'पत्ता किसका अच्छा होता है?'

विद्वान् चन्द्र शर्मा ने थोड़ा विचार कर कहा, 'पत्ता पान का अच्छा होता है, जिसे राजा, रईस, गरीब सब खाते हैं।'

भोज ने तीसरा प्रश्न पूछा - 'फूल किसका अच्छा होता है?'

विद्वान् ब्राह्मण ने उत्तर दिया - 'महाराज! फूल कपास का अच्छा होता है, जो हमें कपड़ा देता है, जिससे हम अपना शरीर ढकते हैं।'

राजा ने अंतिम प्रश्न पूछा - 'मिठास किसकी अच्छी होती है?'

चन्द्र शर्मा ने उत्तर दिया -- 'महाराज, मिठास वाणी की अच्छी होती है, जो हर एक को अपने वश में रखने की ताकत रखती है। मीठी वाणी का असर तुरन्त होता है।'

राजा भोज चारों प्रश्नों के तर्कयुक्त सही उत्तर सुन कर बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने चन्द्र शर्मा को काफी धन दिया और दरबार में रख लिया।

— १५ पंचवटी, उदयपुर (राज.)

□

गांधीजी की चुनौती पर

☐ डॉ. शीला टावरी



गांधीजी एक युग पुरुष रहे हैं। उन्होंने भविष्य को ध्यान में रखते हुए, आनेवाले समय में किस तरह का सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा औद्योगिक ढांचा बने, इस पर गहराई से सोचा, मनन किया और अपने विचारों को लिखित रूप में रखा। शायद उन्हें कुछ कमियों की भनक अपने जीवन में अंतिम क्षणों में लग गयी थी। उनके विचारों को कई जगह तोड़मरोड़ कर भी प्रस्तुत किया गया। एक भ्रांति यह भी फैलायी गयी कि गांधीजी विज्ञान-विरोधी और यंत्र-विरोधी रहे। किंतु सच्चाई यह है कि उन्हें ग़लत तरीके से दर्शाया गया। वे बराबर कहते रहे कि उनका विरोध यंत्रों के संबंध में फैले हुए दीवानेपन से है, यंत्र से नहीं। यंत्र व्यक्ति के लिए है, न कि व्यक्ति यंत्र के लिए। ऐसे सादे यंत्र बनें, जिससे व्यक्ति की मेहनत बचे, झोंपड़ी में रहनेवालों के कामों का बोझा

कम करें और उनके जीवन की गुणवत्ता बढ़ायें। आज हम स्पष्ट रूप से देख सकते हैं कि शहरों तथा बड़ी-बड़ी फैक्टरियों ने जीवन स्तर कहां से कहां पहुंचा दिया। बड़े-बड़े बांधों और फैक्टरियों ने जीवन की गुणवत्ता बढ़ाने के बजाय उसे समाप्त कर दिया। विज्ञान का अध्यात्म से जो समन्वय होना चाहिये था, उसके अभाव में हम देख रहे हैं कि किस तरह परावलम्बन बढ़ गया है और संतुलन बिगड़ गया है। भौतिक शक्ति और भौतिक आवश्यकताएं ही मानवता का पर्याय नहीं हैं। अपनी संस्कृति के साथ वर्तमान के वैज्ञानिक तारतम्य को बैठाना जरूरी है।

ग्रामोद्योगों के बारे में भी यही धारणा फैला दी गयी कि ग्रामोद्योगों से उत्पादित वस्तुएं महंगी हैं और इस तरह देश का विकास सम्भव नहीं हैं। किंतु यदि हम संकलित रूप से आर्थिक नज़रिये से अध्ययन करें तो यह पता चलेगा कि यह भावना कितनी ग़लतफहमी से भरी हुई है। आज जिस तरह देश बेरोजगारी, शहरीकरण तथा प्रदूषण आदि समस्याओं से जूझ रहा है, उसका ग्रामोद्योग से अच्छा दूसरा कोई विकल्प नहीं हो सकता। आर्थिक स्वावलम्बन के बजाय, हर तरीके से परावलम्बी बनकर गांधीजी के विचारों को अव्यावहारिक दर्शाया जाता है। इसी तरह शराबबंदी गुजरात और वर्धा मे चलायी गयी। लेकिन उसे मानवता से न जोड़कर केवल तमाशे का एक जरिया बना दिया गया।

गांधीजी का सामयिक महत्व

आज की आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक परिस्थितियों में यदि हम गांधीजी द्वारा बताये गये रास्तों का परीक्षण करें तो हमें स्वयं पर आश्चर्य होता है कि हम कैसे ग़लत हो गये। अब समय आ गया है, जब हमें नये सिरे से अपनी दिक्कतों को संकलित दृष्टिकोण अपनाते हुए व्यावहारिक तरीके से जानना होगा। बेरोजगारी आज की ज्वलंत समस्या है और उसे यदि हम पूंजी की कमी के साथ जोड़ दें तो और भी स्पष्ट चित्र सामने आयेगा। वास्तविक समस्या अनपढ़ बेरोजगारों की नहीं है, बल्कि शिक्षित बेरोजगारों की है। पिछले कई वर्षों में किस तरह से स्कूल, कालेज हर स्तर पर खुले हैं, उससे सभी वाकिफ हैं। समस्या स्कूलों के खुलने की नहीं है, बल्कि वहां से केवल डिग्री लेकर निकलनेवाले विद्यार्थियों से है। सफेद कपड़े पहन लेने से या कापियां दुनिया के ज्ञान से भर देने से शिक्षा के मुख्य उद्देश्य की प्राप्ति नहीं होती।

१) शिक्षा से रोजगार के साधन मिलने चाहिये,

२)शिक्षा से व्यक्ति के व्यक्तितत्व का

सर्वांगीण विकास होना चाहिये।

३) शिक्षा से अच्छे नागरिक बनने चाहिये।

ये तीनों आवश्यकताएं अलग-अलग नहीं, बल्कि एक ही उद्देश्य के तीन पहलू हैं। अब यदि हम देखें कि हमारे विद्यार्थी इन मापदंडों पर कितना सही उतरते हैं तो स्थिति निश्चय ही भयावह दिखेगी। फिर चाहे कितना भी शिक्षा में संशोधन किया जाये। चाहे वह १०+२+३ हो या वोकेशनल प्रशिक्षण हो, या समाज को लाभदायी कार्यक्रम देना हो। ये सब जमीन पर चल नहीं पाये। दोष किसका है, समझने के पहले नियोजनकर्ता की मनोवृद्धि समझना ज़रूरी है। किसी भी नये कार्यक्रम को सरकारी ढांचे में, अमानवीयता से, केवल बजट का माध्यम बनाकर, मशीन के तरीके से चला दिया जायेगा तो उसका फल असफलता ही होगा। फिर मानवता, सहिष्णुता, संवेदन-शीलता का जो सर्वांगीण ह्रास हुआ है, वह शिक्षा से भी होना अपरिहार्य है। ऐसी स्थिति में जो समन्वय इन कार्यक्रमों की सफलता के लिए ज़रूरी था, वह मिला नहीं। परिणाम हमारे सामने है।

विवेचना करने से जानकारी मिलती है कि विभाग के विशेषज्ञ तथा कार्यकर्ता जो इसमें जोड़ने का कार्य कर सकते थे और स्वरोजगारपूरक कार्यक्रमों को लाभदायक बना सकते थे, वह पूर्ण हुआ नहीं। संगठित विभाग एक ओर अपने लिए पूरी सुविधाएं लेते रहे, वहीं असंगठित सबसे ज़्यादा शोषित तथा लाभों से अछूते रहे। इसे देखने के लिए दूर जाने की आवश्यकता नहीं। हम वास्तविकता को देखें तो चित्र स्पष्ट दिखायी देता है। आदिवासी, महिलाएं, पर्वतीय क्षेत्र के निवासी और सभी असंगठितों ने आर्थिक विकास का भयानक मूल्य अदा किया है।

आश्चर्य की बात यह है कि यह सब स्पष्ट रूप से बड़े-बड़े विद्वानों द्वारा लिपिबद्ध किया गया है। इसकी गहनता के बारे में शंका का स्थान नहीं है। इन सबके बावजूद ऐसा लगता है कि हमने अपनी ग़लतियों से पूरा सबक नहीं सीखा है। उदाहरण के लिए मिल के कागज़ की हाथ-कागज की तुलना करते हुए, हम यह भूल जाते हैं कि मिलों ने संगठित होने के कारण किस तरह वन विभाग या वाणिज्य विभाग से पूरा फायदा उठाया।

वर्तमान परिपेक्ष्य में गांधीजी के औचित्य को समझने के लिए हमें मानवीय स्वभाव, शोषण की प्रवृत्ति, धर्म, घटते-बढ़ते प्रभाव तथा वैज्ञानिक प्रवृत्तियों का भी अध्ययन करना ज़रूरी है। फिर यह अध्ययन एक परिपूर्ण तरीके से होना चाहिये, न कि सीमित, संकुचित विचारधारा से। आज के युग की बहुत बड़ी मांग भी यही है कि हम

सर्वांगीण दृष्टिकोण अपनायें। निर्णय होने के पश्चात् कड़ाई से अनुसरण तथा सच्चाई को ठीक से तौलने और परखने की जिम्मेदारी बढ़ानी आवश्यक है। जड़ को समाप्त करने की प्रवृत्ति के बजाय, फल से संतोष करने की भावना बढ़ानी चाहिये।

आज के युग में, शिक्षा के क्षेत्र में भी सर्वांगीण विचार नहीं कर पा रहे हैं। क्योंकि शिक्षा से जुड़े व्यक्ति आज संकुचितता से ग्रसित हैं। यहां भी मेरिट का आधार अन्य तथ्यों ने ले लिया है। जरूरी है कि कोई भी अच्छे विचार किसी वर्ग या जाति विशेष का न मानकर, गुणों एवं व्यावहारिकता पर आधारित होना चाहिये। शिक्षा का एक बहुत बड़ा योगदान इस क्षेत्र की आवश्यकता है। यदि समस्या का विश्लेषण सही हो जाय तो रास्ता ढूंढ़ने में दिक्कत नहीं होगी।

— २ अभिषेक रो को आपरेटिव सोसायटी, डी. एन. नगर, अंधेरी (पश्चिम), बंबई - ५८

□

जब व्यक्ति इतना घमंडी हो जाय कि रो न सके। जब इतना गंभीर हो जाय कि हंस न सके और इतना स्वार्थी हो जाये कि अपने सिवाय किसी और की चिंता न कर सके तो समझना चाहिये कि उसने दारिद्र ही बटोर रखा है।

— डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'

करीम चाचा आये, बच्चों के लिए क्या लाये ?

□ बुद्धसेन अग्रवाल

लगभग छप्पन साल पहले की बात है। मैं छठीं कक्षा का विद्यार्थी था। करीम चाचा जब मेरे यहां आते, तो हम सभी पांचों भाई-बहन एक साथ तालियां बजा कर यह कहते हुए 'करीम चाचा आये, बच्चों के लिए क्या लाये' उनका स्वागत करते। करीम चाचा की आदत थी कि वे जब भी आते, हमारे लिए मिठाई जरूर लाते।

पिताजी टोपियों का व्यापार करते थे। वह जमाना था कि टोपी पहनना अनिवार्यता थी। पिताजी टोपियां सिलने के लिए करीम चाचा को देते थे। करीम चाचा को लगभग एक रुपये रोज की आमदनी हो जाती थी। कई बार आवश्यकता पड़ने पर वे पिताजी से अग्रिम पैसे भी ले जाते, पर पाई-पाई का हिसाब समय पर कर जाते। एक बार सिलाई के सामान के साथ कुछ रुपये ज्यादा चले गये। करीम चाचा दूसरे दिन पैसे तुरंत लौटा गये। जिस दिन वे एक रुपये से ज्यादा कमा लेते, हम बच्चों के लिए डेढ़ आने की मिठाई जरूर लाते।

घोर मंदी का जमाना था। १ रुपये में १ सेर घी, १६ सेर गेहूं, २ किलो मलाई और ४ किलो रबड़ी बिकती थी। डेढ़ आने में डेढ़ पाव मिठाई मिलती थी। पिताजी कई बार चाचा को टोक देते कि ऐसा मत किया करें। तब करीम चाचा बड़े स्नेह से कहते – 'यह तो आपका ही

पैसा है, मेरा क्या है। आप जो देते हैं, उसमें मेरा गुजारा बहुत अच्छी तरह हो जाता है।'

यदि हम बच्चों में कभी कोई बीमार होता तो करीम चाचा मस्जिद से मुल्लाजी को साथ लाकर फूंक डलवाते।

एक बार वे तीन-चार दिन नहीं आये। पिताजी ने उनके घर जाकर पता लगाने के लिए मुझसे कहा। पर मैं मुस्लिम मोहल्ले में जाने से डरता था-इन्कार कर दिया। उन्हीं दिनों कानपुर में साम्प्रदायिक दंगा हो गया और उसी में गणेशशंकर विद्यार्थी का बलिदान हो गया था। पर पिताजी उनके घर गये। करीम चाचा बुखार में पड़े थे। दवा के लिए कुछ पैसे दिये और कहा कि जरूरत पड़े तो और मंगा लेना।

ठीक हो जाने पर वे काम पर फिर आने लगे। उनका एक लड़का था-बरकत। ८ साल की उमर में ही बरकत की मृत्यु हो गयी। जिसके कारण चाचा विक्षिप्त-से हो गये। उनकी बेगम भी कुछ दिनों बाद खुदा को प्यारी हो गयीं।

वे दिन मुझे आज भी याद हैं। तब दंगे अंग्रेज करवाते थे और अब दूसरे ही लोग कराते हैं। उस जानलेवा माहौल में भी कितनों ने गणेशशंकर विद्यार्थी की तरह अपनी जान जोखिम में डालकर एक-दूसरे समुदाय के लोगों की प्राण-रक्षा की थी। आज जब वर्ण-विद्वेष और धार्मिक उन्माद से भरे झगड़ों को देखता हूं, तो ईश्वर से प्रार्थना करता हू कि क्यों न वह थोड़े-से और करीम चाचा जैसे मनस्वी और उदार-चेता लोगों को पैदा कर दे, जिससे वर्तमान ही नहीं, भावी पीढ़ी के बच्चे भी झूमकर गा सकें कि 'करीम चाचा आये, बच्चों के लिए क्या लाये?'

— ४८, कमला क्लब
फजलगंज, कानपुर, उ.प्र.

□

पैसे के प्रति परिवार की विरक्ति और ईमानदारी अति की सीमा तक पहुंची हुई थी। अपने बेटों से लालबहादुर शास्त्री हमेशा कहा करते थे, 'पैसे के पीछे कभी मत भागो, ईमानदार और मेहनती बनो।' एक और बात जो वे अक्सर कहा करते थे, वह थी, 'मेहनत प्रार्थना के समान है।' जब उनकी ८० वर्षीया मां रामदुलारी देवी ने बेटे को देश का सबसे बड़ा पद प्राप्त होने की बात सुनी, तो उन्होंने कहा था, 'मैं लालबहादुर से चाहती हूं कि जान जाये तो जाये, मगर देश बना रहे।' अपने बेटे को उस मां ने केवल एक बात के लिए मना किया था – 'ऐसा कोई काम न करना, जिससे गरीब को दुख पहुंचे।'

— डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'

नारीरत्नम्

संस्कृति का सावित्री उद्घोष : कमलारत्नम्

□ अरुण वर्मा

चार जुलाई को दोपहर टी.वी. समाचार में कमलारत्नम् के अवसान की खबर सुन कानों को यकीन नहीं हुआ कि यह सच भी है। लेकिन सच था समाचार। उनका जाना संस्कृत और संस्कृति प्रेमी संसार में एक खालीपन छोड़ गया है। बाकी रह गयी हैं उनकी असंख्य यादें, और उनके सुसंस्कृत, प्रेरणादायी व्यक्तित्व की यशकाया। महादेवी के बाद समकालीन परिदृश्य पर वे सबसे प्रमुख सम्मानित विदुषी नारी थीं, जिनके मेघमन्द्र स्वर को अनसुना करना असंभव था।

हमने वैदिक काल की कुछ विदुषियों के नाम अवश्य सुने हैं, जैसे गार्गी, मैत्रेयी, लोपामुद्रा, अरुन्धती, लेकिन उन्हें देखा नहीं कि वे कैसी थीं। लेकिन कमलारत्नम् को देख और सुनकर लगता था कि ये प्राचीन विदुषी नारियां भी ऐसी ही रही होंगी। सुसंस्कृत एवं सुरुचिपूर्ण व्यक्तित्व के साथ उनमें प्रज्ञा व प्रतिभा का एक अद्भूत संयोग था। यह भी एक संयोग है कि शरद पूर्णिमा ३ अक्टूबर १९१४ को इलाहाबाद में जन्मी कमलाजी का देहावसान ३ जून १९९१ को नई दिल्ली में हुआ। जिस देववाणी की वे सारी जिन्दगी प्रवक्ता रहीं, उसी संस्कृत भाषा में आपने लखनऊ विश्वविद्यालय से प्रथम श्रेणी में प्रथम स्थान के साथ एम. ए. किया। यूनीवर्सिटी ऑफ लंदन से उन्होंने ट्रेनिंग डिप्लोमा (प्रशिक्षण शास्त्र) की उपाधि पायी। कमलाजी का संस्कृत, हिन्दी और अंग्रेजी भाषाओं पर असाधारण अधिकार तो था ही, इसके अतिरिक्त फ्रेंच, जर्मन, रूसी, स्पेनी व जापानी भाषाओं का भी अच्छा ज्ञान था। दक्षिण-पूर्वी एशियाई देशों में भारत के सांस्कृतिक प्रचार व प्रसार की गौरव गाथाओं का आधुनिक संदर्भों में अनुशीलन कमांरत्नम् ने किया। उस समय जब उनके पति जापान और

इन्डोनेशिया में थे। उसी दौरान विशेष कर रामकथा, भारतीय नाट्य और रंगमंच तथा भारतीय मूर्तिकला के फैलाव पर उन्होंने विशेष कार्य किया।

कमलारत्नम् के राजनयिक पति श्री पेरालारत्नम् १९५२ से ही भारतीय विदेश सेवा के अंतर्गत कई देशों में राजदूत रहे। उनके साथ कमलाजी सही अर्थों में भारत की सांस्कृतिक प्रतिनिधि के रूप में अपना स्वतंत्र योगदान देती रहीं। इस दौरान रत्नम् दम्पत्ति ने जिन देशों की यात्रायें कीं उनमें सोवियत संघ, जापान, चीन, थाईलैण्ड, इंडोनेशिया, आस्ट्रेलिया, हंगरी, पौलैण्ड, जर्मनी, फ्रांस, ब्रिटेन, अमेरिका, मैक्सिको व चिली प्रमुख हैं। इन सभी देशों में कमलाजी द्वारा संस्कृत और संस्कृति के प्रचार-प्रसार का कार्य अबाध गति से किया गया। टोकियो, ऑस्ट्रेलिया, मास्कों तथा मैक्सिको के प्रचार-प्रसार का कार्य अबाध गति से किया गया। टोकियो, ऑस्ट्रेलिया, मास्को तथा मैक्सिको के विश्व-विद्यालयों में उन्होंने आठ वर्ष तक संस्कृत व हिन्दी का अध्यापन किया। मैक्सिको में ही वे एशियाई महिला लेखिका-पत्रकार विश्व संगठन की उपाध्यक्ष चुनी गयीं। दिल्ली के रामजस संस्थान में ३ वर्ष तक प्राचार्य रहीं तथा भारतीय विद्याभवन दिल्ली में भारतीय संस्कृति एवं विरासत की प्राध्यापिका रहीं।

कमलाजी असाधारण वक्ता व लेखिका रही हैं। १९६२ में भारत पर चीन के अचानक हमले के पश्चात् उनका कवि हृदय जाग उठा और अनेक रचनाओं का वे सृजन करती चली गयीं। उनकी कविताओं में भारत की संस्कृति, नारी का विद्रोह और पीड़ा, विश्व चेतना, पूर्व और पश्चिम की जीवन दृष्टियों का अंतर और मन की बेचैनी स्पष्ट दिखायी देती है। कविता और असंख्य लेखों के अतिरिक्त उन्होंने एक वार्त्ताकार के रूप में भी प्रसिद्ध पायी। स्मृति लेखन और रोचक यात्रा वर्णन लिखने में भी वे बेजोड़ थीं।

आपने अनेक ग्रंथों की रचना की जिनमें प्रमुख हैं, अक्षर गीत एवं दर्शन, कालिदास और नारी समस्यायें, हिमालय तथा अन्य कवितायें, भारतीय साहित्य, लाओस में रामकथा, इन्डोनेशिया की वायांग परम्परा, दिनकर और उनका काव्य, रामकृष्ण विवेकानन्द और निराला आदि। प्रख्यात समाज सेवी कमलादेवी चट्टोपाद्याय के जीवन और व्यक्तित्व को लेकर एक महत्वपूर्ण ग्रंथ 'कमलादेवी एक समर्पित व्यक्तित्व' अभी कुछ साल पहले प्रकाशित हुआ। यह भी एक संयोग है कि कमलाजी की हिन्दी से स्पेनिश में अनूदित कविताओं का संग्रह 'लूस ओस्कूरा' (काला

प्रकाश) के नाम से १९६४ में ही चिली में प्रकाशित हो गया था। और सबसे गर्व की बात यह है कि इस संग्रह पर अपनी टिप्पणी चिली के नोबेल पुरस्कार प्राप्त विश्व विख्यात कवि पाब्लो नेरूदा ने लिखी। नेरूदा लिखते हैं 'इस लूस ओस्कूरा (काला प्रकाश) का नाम है कमला। इसका जन्म एक ऐसे अगाध विद्वत्ता सम्पन्न देश में हुआ, जिसे मैं उसके वन पल्लव और प्राचीन ज्ञान वैभव के माध्यम से जानता हूं। संयोग से कमलारत्नम् ने रहने के लिए हमारी भूमि को चुना और यहीं विकसित हुआ यह काला गुलाब : उसकी कविता। उनके काव्य को तो हम सुरक्षित रखेंगे परंतु वह स्वंय हमें छोड़कर जा रही हैं। सच तो यह है कि उसकी उपस्थिति हमारे लिए एक राह दिखाने वाले तारे के समान थी, जो अमेरिका में उसके पांवों की चाप और उसके विलक्षण परिधानों के आग जैसे दमकते रंगों को अपने स्मृति कोष में सुरक्षित रखेगा'। हिन्दी भाषा में इन्हीं कविताओं का प्रकाशन २१ वर्ष बाद १९८५ में 'वहां सूरज नहीं चमकता' नामक संग्रह में हुआ।

हिन्दी जगत में शायद वे पहली रचनाकार हैं, जिनका संग्रह विदेशी भाषा में पहले तथा अपनी भाषा में बाद में छपा।

कमलारत्नम् संस्कृत और संस्कृति की प्राण रही हैं और भारत की इस अपूर्व विरासत को बचाने और फैलाने का जिम्मेदारी भरा कार्य मृत्यु पर्यन्त करती रहीं। संस्कृत भाषा के वगैर वे संस्कृति और भारतीय अस्मिता की कल्पना भी नहीं कर पाती थीं। इसी कारण कालिदास के प्रति उनके मन में असीम अनुराग था, क्योंकि वे यह भी मानती थीं कि कालिदास ही इस देश का ऐसा रचनाकार है, जिसके द्वारा संस्कृत, और राष्ट्र की पहचान विदेशों तक नयी-नयी ऊंचाईयों के साथ बिखरी है। कालिदास के साहित्य के प्रति उनका लगाव सबसे अनूठा था। उज्जैन में जब सरकारी पैमाने पर अखिल भारतीय कालिदास समारोह शुरू ही नहीं हुआ था उसके भी पहले वे स्व. पण्डित सूर्यनारायण व्यास द्वारा अखिल भारतीय कालिदास परिषद् के द्वारा आयोजित होने वाले कालिदास महोत्सव में न केवल आती रहीं, बल्कि उस परिषद् की सक्रिय सदस्य भी रहीं। भारत में शासकीय स्तर पर कालिदास समारोह शुरू होने के पहले वे १९५५ के सोवियत संघ द्वारा आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय कालिदास समारोह में स्वयं उपस्थित रहीं। उसी समय सोवियत संघ ने महाकवि कालिदास की स्मृति में पहला डाक टिकट जारी किया। कमलाजी ने सोवियत संघ के अलावा चीन, मैक्सिको, अमेरिका, इण्डोनेशिया आदि देशों में भी कालिदास समारोह आयोजित करने के लिए खासी महत्व-

ज़िंदगी का स्वार्थ से अनुबन्ध !

भावना का भाव से सम्बन्ध
ज़िंदगी का स्वार्थ से अनुबन्ध !

जी रहे कुंठित, विवश, ऊबे, सताये,
कौन ऐसे में किसी को पथ दिखाये !
हर किसी को भूख ने याचक बनाया,
कौन किसके पेट की ज्वाला बुझाये !

लोभ-लिप्सा में हुए सब अन्ध
जिंदगी का स्वार्थ से अनुबन्ध !

टूटते जाते हृदय के साज ऐसे,
आज गूंगी हो गयी आवाज कैसे !

वक्त की धड़कन हुई खामोश ऐसी
छा गयी है जिंदगी पर मौत जैसी

छिल रहे हैं चेतना के कंध
ज़िंदगी का स्वार्थ से अनुबन्ध !

व्यर्थ लगते प्रेम-साने गीत हमको
पी रहे हम मूक बन चुपचाप गम को !
ढो रहे हैं दर्द का अभिशाप अविचल
हर नहीं पाते व्यथा के क्रूर तम को

हर तरफ दुर्भाव की दुर्गन्ध
जिंदगी का स्वार्थ से अनुबन्ध !

– शंकर सुल्तानपुरी

सी- २१६७/९ इंदिरा नगर, लखनऊ - २२६ ०१६

पूर्ण भूमिका निभायी।

प्रशंसकों को हस्ताक्षर देते समय वे हमेशा 'पठ संस्कृतम' लिख दिया करती थीं। यह उनकी संस्कृत निष्ठा का ही परिणाम था। अंग्रेजी के भाषाई साम्राज्यवाद के प्रति उनमें तीव्र आक्रोश होता था और जो अक्सर उनके लेखों और वक्तव्यों में उजागर होकर रहता था। विगत कुछ वर्षों से उन्होंने दिल्ली में संस्कृत नाट्यमंच, संस्कृत बाल रंगमंच जैसी संस्थाओं को तैयार किया और संस्कृत के विभिन्न नाट्य प्रदर्शन दिल्ली के मुख्य सभागारों से लेकर दूरदर्शन तक प्रस्तुत हुए। उन्होंने कुछ संस्कृत नाट्य लिखे जिनमे 'बाल चरितम्' और 'जवाहर विजयम्' प्रगुख हैं। इन कुछ वर्षों में वे कालिदास पर एक महत्वपूर्ण पुस्तक अंग्रेजी में लिख रही थीं, जिसका शीर्षक उन्होंने एक पत्र में लिखा था 'कालिदासः दि पोयट ऑफ हिमालयाज' आशा है उनका यह ग्रंथ पूर्ण हो चुका होगा। १९८२ में सीहोर में आयोजित कालिदास समारोह की वे अध्यक्ष थीं। १९७३ में विक्रम विश्वविद्यालय की कालिदास समिति ने कमलारत्नम् को कालिदास और उसके साहित्य के प्रचार व प्रसार के प्रति उनके समर्पण हेतु सम्मानित किया।

– ८२, रवीन्द्रनगर, फ्रीगंज,
उज्जैन-४५६ ०१०, म.प्र.

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः

भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित

नवनीत

मनुष्य के नवोत्थान का सूचक
जीवन, साहित्य और संस्कृति का मासिक

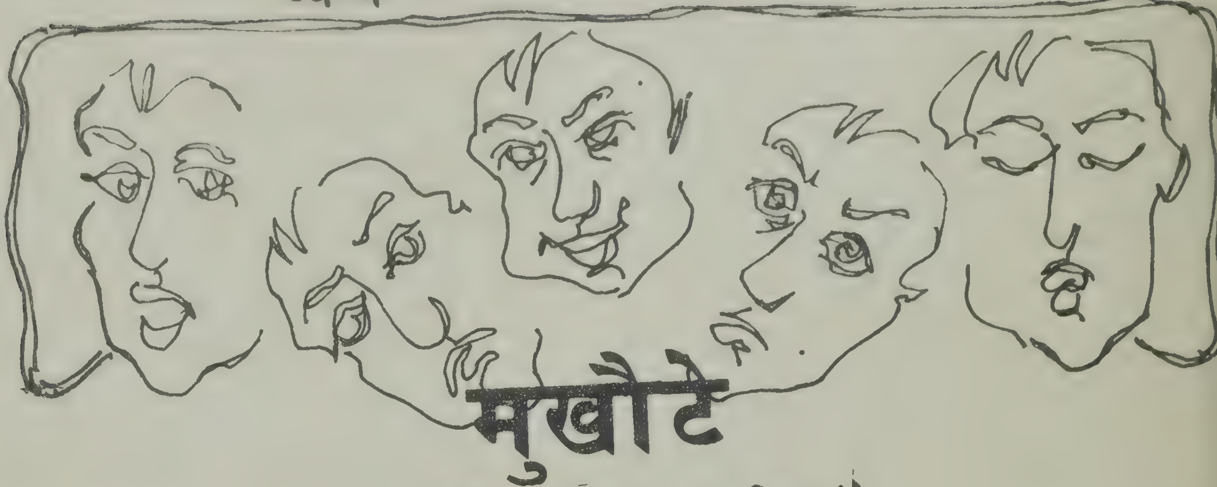
प्रार्थना

आ हि ष्मा सूनवे पिता, आपिर्यजत्यापये ।
सखा सख्ये वरेण्यः ।।

ऋक् १.२६.३ ।।

हे प्रभु मेरे परम सखा!
तुम्हीं बंधु हो, तुम्हीं सनेही, तुम्हीं हो मात-पिता ।
दुःख में धीरज देनेवाले, कष्टों में सुध लेनेवाले।
तुम्हीं सहाय सदा, हे प्रभु मेरे परम सखा ।
कभी प्यार से पिता पुकारूं, कभी बंधु कह तन-मन वारूं ।
कभी स्नेह से कहूं सखा, हे प्रभु मेरे परम सखा ।
तुम्हीं हमारे पथ-दर्शक हो, पूर्ण हमारे हितचिंतक हो ।
तुम्हीं से हृदय मिला, हे प्रभु मेरे परम सखा ।

(भावानुवाद : **स्व. पं. सत्यकाम विद्यालंकार**)



मुखौटे

□ हरीश कुमार 'अमित'

मुखौटे भी बड़ी काम आने वाली चीज़ है, साहब ! अलग-अलग लोगों का अलग-अलग मौकों पर अलग-अलग परिस्थितियों का अलग-अलग ढंग से सामना करने का सहारा ये मुखौटे ही बनते हैं। मुखौटों से हमारा मतलब उन भौतिक मुखौटों से नहीं है, जिन्हें बच्चे लोग बचपन में और सरकस के जोकर वग़ैरह जवानी में इस्तेमाल करते हैं। हमारा मतलब तो उन अदृश्य मुखौटों से है, जो आदमी (और औरतें भी!) वक्त-जरूरत पड़ने पर प्रयोग में लाया करते हैं।

अब देखिये न, मस्काबाजी करनेवाले लोग अपना मतलब साधने के लिए जब विशुद्ध मक्खन का प्रयोग करते हैं, तो उस समय उनकी मुखमुद्रा, वाणी, हावभाव आदि कैसे बदल जाते हैं। सामनेवाले को लगने लगता है कि वह तो खुदाओं का खुदा है और मक्खनबाज़ी करनेवाला इस संसार का तुच्छतम प्राणी। लेकिन जब मक्खनबाज़ी करनेवा़ले का काम सध जाता है या काम कर सकनेवाला काम करने से इन्कार या असमर्थता प्रकट कर देता है, तो मक्खनबाज़ के चेहरे का मुखौटा एक झटके से उतर जाता है। तब और पहले की उसकी शक्ल में ज़मीन-आसमान का अन्तर बड़ी आसानी से महसूस किया जा सकता है।

इसी तरह मौत की वारदात पर अफसोस करने जानेवालों को देख लीजिये। वे हंसते-मुसकुराते होंगे। लेकिन तब तक, जब तक उस घर में प्रवेश न किया हो जहां अफसोस करने जाना है। घर में घुसते ही ये दुःख की प्रतिमूर्ति बन जायेंगे। कुछ लोग तो इतने भावविह्वल हो जाते हैं कि आंसूरूपी जल से अपने आंखोंरूपी आंगन में बाढ़ तक ले आया करते हैं।

अफसोस करने के दौरान ये लोग यूं जताते हैं जैसे मृतक के मरने का सबसे ज़्यादा अफसोस इन्हें ही हुआ है। लेकिन जैसे ही ये अफसोस करके उस घर से बाहर निकलते हैं, इनके चेहरे की रौनक लौट आती है मानो किसी मुसीबत से छुटकारा मिल गया हो। घर से थोड़ी दूर जाने पर इन्हें हंसते-बोलते और ठहाके लगाते हुए भी देखा जा सकता है।

दफ्तरों में बाबू लोगों के हाल भी कुछ अलग नहीं हैं। मुखौटों का प्रयोग ये बन्धु भी जी खोलकर किया करते हैं। साहब के सामने इनके हावभाव और होंगे और साहब की गैर-मौजूदगी में यही लोग साहब को जूतियों के काबिल भी नहीं समझेंगे।

सिर्फ बाबू लोग ही मुखौटों का इस्तेमाल करते हों, ऐसी बात नहीं है। साहब लोग भी इनका भरपूर इस्तेमाल किया करते हैं। अपने मातहतों के सामने इनके चेहरे पर रौब और उच्चपने का जो मुखौटा होगा, वह इनके अपने साहब के पास जाने पर मक्खन की तरह मुलायम और नम्रता से परिपूर्ण हो जायेगा।

मुखौटों का बेहतरीन इस्तेमाल चुनाव-सभाओं के दौरान, विदाई, अभिनन्दन समारोहों में और किसी की झूठी चुगली भर्त्सना करने के क्षणों में देखा जा सकता है। सच तो यह है कि प्रायः हर आदमी दिन भर कोई-न-कोई मुखौटा लगाये ही रखता है। फर्क यह है कि कुछ लोग प्रायः एक-सा मुखौटा लगाये रहते हैं और कुछ बदलती परिस्थितियों के अनुसार दिन में पचासों बार मुखौटे बदलते हैं।

यह भी नहीं कि ये मुखौटे सदा लगे ही रहते हैं। कई बार ऐसे मौके भी आते हैं जब ये उघड़ जाते हैं और आदमी का असली चेहरा अन्दर से झांकने लगता है। तब इन्हें धारण करनेवालों की हालत देखने लायक होती है। मगर कुछ लोग ऐसे चतुर होते हैं कि ऐसी परिस्थितियों में भी अपने को संभाले रखते हैं और वक्त की नज़ाकत को देखते हुए एक अन्य अदद मुखौटा धारण कर लिया करते हैं।

मुखौटे धारण करने के लिए किसी विशेष प्रयत्न की जरूरत नहीं होती। परिस्थितियों के अनुसार अपने आप ही व्यक्ति इन्हें लगा लेता है। बस आदमी को अभिनय में प्रवीण होना चाहिये। जितना ज़्यादा कोई इस कला में प्रवीण होगा, उतनी सफलतापूर्वक ही वह मुखौटे लगा पायेगा।

अब हमें ही देखिये न, यह लेख लिखकर हमने भी अपने चेहरे पर लेखक होने का मुखौटा लगा लिया है, जबकि वास्तविकता जो है वह यह है कि हम....!

— २०बी/३२बी, तिलक नगर,
नयी दिल्ली

□

साहित्य को कानपुर जनपद की देन

□ बद्रीनारायण तिवारी

अंधकार है वहां, जहां आदित्य
नहीं है,
मुर्दा है वह देश, जहां साहित्य
नहीं है ।
जहां नहीं साहित्य, वहां आदर्श
कहां है ?
जहां नहीं आदर्श, वहां उत्कर्ष
कहां हैं ?

सत्साहित्य के द्वारा ही देश तथा समाज को प्रेरणा देने वाले राय देवीप्रसाद 'पूर्ण' ने जनपद कानपुर के साहित्यिक स्वरूप को अपनी इन पंक्तियों में व्यक्त किया है।

इसी जनपद के ब्रह्मावर्त जिसे आजकल 'विठूर' कहा जाता है— आदिकवि महर्षि वाल्मीकि वहीं हुए थे, जिन्होंने भारत के स्वर्णिम युग की गाथा को विश्व की प्राचीनतम देववाणी संस्कृत के २४००० श्लोकों में कालजयी महाकाव्य लिख कर राम-काव्य के सैकड़ों प्रणेताओं को प्रेरणा दी है। इस ग्रंथ की अनगिनत टीकायें तथा अनुवाद हुए हैं। शनैः शनैः संस्कृत का स्थान 'भाषा' यानी हिन्दी ने लेना प्रारंभ कर दिया। तुरंत कविता बनाने वाले संस्कृत एवं हिन्दी के आशुकवियों की श्रृंखला में आचार्य देवेन्द्रनाथ शास्त्री, केशवदेव शास्त्री 'केशव' तथा पं. कुंजबिहारी शुक्ल माने जाते हैं। इस क्षेत्र में 'समस्या पूर्ति' तथा 'आशु-कविता' का विशेष रूप से प्रचलन था।

हिन्दी साहित्य के रीतिकालीन युग में जब राज्याश्रित कवि अत्यधिक श्रृंगार और भक्ति साहित्य की रचनाओं के सृजन में व्यस्त थे, उसी समय जनपद के तिकवांपुर ग्राम में जन्मे वीर रस के शीर्षस्थ व स्वावलम्बी महाकवि भूषण ने अपनी लेखनी को गौरवान्वित किया। अहिन्दी प्रदेश महाराष्ट्र में हिन्दी साहित्य को गरिमा प्रदान कराने वाले

महाकवि भूषण के प्रति राष्ट्रकवि घासीराम रचित 'हम वाक्य वीर ही नहीं, कर्मवीर भी हैं' प्रस्तुत पंक्तियों में झलकता है –

'भूषण' विभूषन विभूषित कराय
भव्य,
सुमति अराम 'मतिराम' ने श्रृंगारी
है।

महाकवि भूषण के दोनों भाई मतिराम और चिंतामणि भी कविताएं करते थे।

कानपुर की इसी धरती पर जन्मे सम्राट अकबर के दरबार के नवरत्नों में बीरबल (द्विवेदी) 'ब्रह्म' उपनाम से रचनाएं करते थे।

भारत के प्रथम स्वातंत्र आंदोलन १८५७ में 'पयामे आजादी' नामक पत्र कई भाषाओं के साथ हिन्दी में भी प्रकाशित होता था, जिसके प्रेरणास्रोत कानपुर कुरसवां निवासी अजीमुल्ला खां क्रान्ति के सन्देशवाहक के अलावा साहित्य सृजन का कार्य भी कर रहे थे, उस पत्र में प्रकाशित रचनाएं देश तथा समाज को किस मोड़ पर ले जाने को प्रेरित करती हैं, इसकी बानगी देखिए –

'लूट लिहलें रजवा, सुरजवा,
समजवा हो,
हल - फाल, हंसुआ गढ़इबे
तरवरिया हो।'

इसका उत्तर 'पयामे आजादी' में प्रकाशित राष्ट्रगीत की इन पंक्तियों में निहित है -

हम हैं इसके मालिक, हिन्दुस्तान
हमारा।
पाक वतन है कौम का, जन्नत से भी
प्यारा।
ये है हमारी मिल्कियत, हिन्दुस्तान
हमारा।
इसकी अहमियत से, रोशन है जग
सारा।
आज शहीदों ने तुमको, अहले वतन
ललकारा।
तोड़ो गुलामी की जंजीरे,
बरसाओ अंगारा।
हिन्दु-मुसलमां-सिक्ख हमारा, भाई
भाई प्यारा।
ये है आजादी का झण्डा, इसे सलाम
हमारा।

साहित्य की अनेक विधाओं में हिन्दी पत्रकारिता का शुभारंभ कानपुर में जन्मे पं. युगलकिशोर शुक्ल के ३० मई १८२६ ई. को प्रकाशित 'उदन्त मार्तण्ड' का नाम सर्वप्रथम हिन्दी पत्रों में आता है, वह भी अहिन्दी प्रदेश बंगाल के कलकत्ता महानगर से उसके प्रथम अग्रलेख में उन्होंने अपने उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए लिखा –

यह "उदन्त मार्तण्ड" अब पहले-पहल हिन्दुस्तानियों के हित के हत जो आज तक किसी ने नहीं चलाया, पर अंग्रेजी ओ पारसी ओ बंगले में जो समाचार का कागज छपता है, उसका

सुख उन बोलियों के जानने ओ पढ़ने वालों को ही होता है। इससे सत्य समाचार हिन्दुस्तानी लोग देखकर आप पढ़ ओ समझ लेवें जो पराई अपेक्षा न करें जो अपने भाषा की उपज न छोड़ें।....

साहित्य की विभिन्न विधाओं में अग्रणी इस जनपद के एक-एक साहित्यकार का गद्य व पद्य में इतना अधिक योगदान हैं, जिन पर अनेक ग्रंथों में ही पूर्ण विवरण समाहित हो सकेगा। बहुभाषाविद् एवं बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी पं. प्रतापनारायण मिश्र गद्य-पद्य दोनों के समान रूप से हिन्दी साहित्य की सेवा करने के साथ ही 'ब्राह्मण' पत्र को (१५ मार्च १८८३ में) सम्पादित कर प्रकाशित किया। उसमें उस युग के अनेक हिन्दी पत्रकारिता के नये मानदंड स्थापित हुए। कविताओं के निखार के अतिरिक्त श्री मिश्र की गद्य शैली ने व्यंग्य लेखन की परंपरा चलायी थी। 'वर्तमान' पत्र के सम्पादक पं. रमाशंकर अवस्थी ने जिसकी पुनरावृत्ति की थी। हिन्दी मुहावरों में मिश्रजी अब भी बेजोड़ माने जाते हैं। गद्य शैली के विभिन्न आयामों का परिचय 'दांत', 'बुढ़ापा', 'मोह', 'बांह', 'मुच्छ', 'परीक्षा', 'ट' और 'द' शीर्षक निबंधों में मिलता है।

आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य के इतिहास में यग प्रवर्तक के रूप में सुविख्यात हैं। आपने संस्कृत तथा अंग्रेजी के अनेक उपयोगी महत्व-पूर्ण ग्रंथों के अनुवाद के अलावा दर्जनों कृतिया हिन्दी संसार को प्रदान कीं। आपने 'सरस्वती' के २० वर्ष के सम्पादन काल में भाषा के परिष्कार और इसके स्वरूप-निर्धारण के लिए अथक संघर्ष एवं परिश्रम किया था। आचार्य द्विवेदी ने लेखकों तथा कवियों की एक पीढ़ी का निर्माण भी किया था। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जैसे प्रतिभाशाली कवि और अमर बलिदानी गणेशशंकर विद्यार्थी जैसे तेजस्वी पत्रकार आपकी ही देन हैं। कानपुर स्थित जूही मोहल्ले में 'सरस्वती' के सम्पादन काल में नित्य मीलों चलकर विद्यार्थीजी ने द्विवेदीजी के सान्निध्य में साधना की थी। जब विद्यार्थीजी ने 'प्रताप' तथा 'प्रभा' पत्रों को प्रकाशित किया, उसमें 'प्रताप' के मुखपृष्ठ पर आचोर्य द्विवेदी की ये पंक्तियां सदैव प्रकाशित होती थी -

जिसको न निज गौरव तथा निज
देश का अभिमान है।
वह नर नहीं नर पशु निरा है और
मृतक समान है।

विद्यार्थीजी ने भी अपने गुरु के अनुरूप ही हिन्दी का वातावरण बनाकर सैकड़ों साहित्यकारों कवियों को तैयार किया था। आचार्य गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' जैसा विशिष्ट कवि काव्य रचना

की दीक्षा देकर कवियों का निर्माण करने वाला कोई अन्य आचार्य इस पूरी शताब्दी में नहीं हुआ। कविसम्मेलनों के माध्यम से सनेहीजी हिन्दी काव्यधारा को जन-जन तक पहुंचाने वाले केंद्र बिंदु हो गये थे। उनके 'सनेही मण्डल' ने अनेक प्रतिभाशाली कवियों में पं. जगदम्बाप्रसाद 'हितैषी' एवं असीम दीक्षित सदृश जाज्वल्यमान नक्षत्र दिये जो सवैये-छंदों के अथाह सागर थे। 'सनेही मण्डल' के प्रत्युत्तर में साहित्य गगन के सुदीप्ति नक्षत्र श्यामबिहारी शर्मा 'बिहारी' के अनुगामी 'हिन्दी साहित्य मण्डल' को कुछ लोग 'बिहारी मण्डल' भी कहते थे, वह मण्डल ललित घनाक्षरी, सवैया, और दोहा छन्दों का रचना संसार साहित्य सृजन कर रहा था।

महान लेखक एवं कवि पं. बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' का विद्यार्थीजी से जुड़ने के बाद (उनके अंतिम समय सन १९३१ तक) जो राजनैतिक तथा साहित्यिक निखार आया, उसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। उनके साहित्य सृजन पर शोध कार्य भी हो रहे हैं।

छैलबिहारी दीक्षित 'कंटक' देश के उन सशक्त कवियों में हैं, जो अपनी दो रचनाओं पर तीन वर्ष के कारावास का दण्ड भुगतने वाले देश के प्रथम कवि थे, यह भी सौभाग्य कानपुर जनपद को ही प्राप्त हुआ था। झण्डागान रचयिता पद्मश्री श्यामलाल गुप्त 'पार्षद' के इस गीत ने लाखों लोगों को आंदोलित कर राष्ट्र के प्रति समर्पण की भावना को सक्रिय रूप से जागृत किया।

कानपुर नगर के पटकापुर मोहल्ले में जन्मे श्री वेंकटेशनारायण तिवारी (१८९०-१९६९) हिन्दी के उन गिने-चुने पत्रकारों में थे, जो प्रत्येक विषय पर अपनी लेखनी उठाते थे। हिन्दी में उन्होंने अनेक आंदोलनों का सूत्रपात किया था, उनमें 'काव्य में स्वकीया और परकीया' प्रमुख था। उन्होंने अपने लेखों में 'राधा' को जब 'परकीया' का विशेषण दिया तो हिन्दी संसार में चर्चा का विषय हो गया। इसी प्रकार हरिऔधजी के प्रति 'बुडभस' शब्द के प्रयोग को लेकर भी साहित्य के क्षेत्र में हलचल रही थी। साहित्यिक समीक्षात्मक लेख लिखने में भी वे अद्वितीय थे। सन १९५५ में हिन्दी दैनिक 'जनसत्ता' के सम्पादन का भार ग्रहण करने के बाद उन्होंने 'हिन्दी की बिच बिंदी खोली किसने ?' शीर्षक से उनकी लेखमाला प्रकाशित हुई, उसने उन दिनों तहलका-सा मचा दिया, जो हिन्दी को विकृत करके उसको बदनाम कर रहे थे। तत्कालीन शिक्षा मंत्री मौलाना अबुल कलाम आजाद ने राष्ट्रभाषा हिन्दी के तत्सम नये शब्दों के निर्माण हेतु पं. सुन्दरलाल की नियुक्ति की थी। उनके विवादास्पद शब्द चयन

पर यह विवाद प्रारंभ होने पर तिवारीजी ने यह लेखमाला प्रस्तुत की थी। तिवारीजी सदैव ऐसे किसी भी 'दुष्चक्र' का संसद के भीतर या बाहर पुरजोर विरोध करने में अग्रणी रहे। उनकी प्रकाशित चर्चित कृतियों में 'चारु-चरितावली' एवं 'हिन्दी बनाम उर्दू' हैं, जिनकी भूमिका में तिवारीजी की पंक्तियों में मातृभाषा की अनन्य निष्ठा के प्रति कहा गया है - 'मेरे लिए भाषा का प्रश्न राजनीतिक स्वतंत्रता से कहीं अधिक महत्वशाली है। राजनीतिक पराधीनता से हमारे शरीरों पर कोई दूसरा राज्य भले ही करे, किंतु जब तक भाषा और साहित्य बचे हैं, तब तक हमारी आत्मा अमर है। लेकिन भाषा के नाश से तो समाज का ही अंत हो जायेगा, इसीलिए संसार की पराधीन जातियां मातृभाषा को सर्वस्व लुट जाने पर भी छोड़ने को तैयार नहीं होतीं। मैं चाहता हूं कि जनता अपनी उदासीनता छोड़कर इस मसले पर गंभीरता से विचार करे, और किसी ऐसे निर्णय का निर्भीकता से विरोध करे, जिससे राष्ट्रीयता के नाम पर राष्ट्रीयता ही की जड़ कट रही हो ....'

इस जनपद ने कहानी और उपन्यास के कलात्मक मानदण्डों की दृष्टि से साहित्य को विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक', भगवतीप्रसाद बाजपेयी, प्रतापनारायण श्रीवास्तव, भगवतीचरण वर्मा, बालकृष्ण बलदुआ जैसे राष्ट्रीय महत्व के नाम दिये हैं। मुंशी प्रेमचन्द जैसे अंतर्राष्ट्रीय स्तर के कथाकार की कर्मस्थली होने का गौरव कानपुर जनपद ने प्राप्त किया है। जिला विद्यालय निरीक्षक तथा मारवाड़ी विद्यालय में प्रधानाध्यापक रूप में कई वर्ष रहे, मुंशी दयानारायण निगम द्वारा परेड से प्रकाशित उर्दू मासिक पत्र 'जमाना' में उनकी अनेक कहानियों का प्रकाशन हुआ। उनके निधन पर सुकवि आचार्य सनेही ने शोक छन्द में लिखा था -

जिनकी कहानियां घर-घर में पढ़ी गयीं

वे ही प्रेमचन्दजी कहानी आज हो गये !

आचार्य हृदयनारायण पाण्डेय 'हृदयेश' कानपुर की उस ऐतिहासिक पीढ़ी के प्रतिनिधि कवि हैं, जिन्होंने द्विवेदी युग एवं सनेही युग से आरंभ कर अब तक लगभग ३० ग्रंथों का सृजन किया। उन पर शोधकर्ताओं ने उन्हें करुण रस प्रधान कवि होने के कारण हिन्दी जगत का 'शेली' कहा है।

कौशिकजी ने मां, भिखारिणी और संघर्ष तीन उपन्यास ही लिखे, तथापि संवेदन सम्पन्नता के कारण उपन्यास के क्षेत्र में आपका नाम अविस्मरणीय है। कौशिकजी द्वारा सृजित कहानियां लगभग ४०० हैं।

भगवतीचरण वर्मा के सामाजिक और राजनीतिक समस्याओं पर सीधी सच्ची बातें, प्रश्न और मरीचिका, चित्रलेखा, डेढ़े-मेढ़े रास्ते, सबहिं नचावत राम गोसाईं, सामर्थ्य और सीमारेखा, वह फिर नहीं आयी, घुप्पल तथा चाणक्य आदि उपन्यास विशेष चर्चित रहे।

भगवतीप्रसाद वाजपेयी विषयवस्तु की कलात्मक प्रस्तुति हेतु सदैव स्मरण किये जायेंगे। आपकी निंदिया लागी और मिठाईवाला कहानियां गहन अंतर्द्वन्द्व और मनोविश्लेषण क्षमता के कारण पाठकों को द्रवित करने वाली हैं। गुप्तधन, दो बहिनें, चलते-चलते, पतवार आदि आपके चर्चित उपन्यास हैं।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने मध्यमवर्गीय समाज के चित्रण को विजय, विदा, विकास, बयालिस, विसर्जन जैसे उपन्यासों में चित्रित किया है। राष्ट्र की संस्कृति और प्राचीन गौरव की रक्षा भावना से ओतप्रोत कथा साहित्य आपकी विशेषता है। आशीर्वाद, दो भाई और नवयुग आपके प्रकाशित कहानी संग्रह हैं। आपके चर्चित उपन्यास 'विदा' का मलयालम में अनुवाद भी हुआ। इस युग के चर्चित कथाकारों में यादवचन्द्र जैन, केवलकुमार ठाकुर, श्रीमती ज्योतिर्मयी ठाकुर, सद्गुरुशरण अवस्थी तथा देवी प्रसाद धवन 'विकल' के नाम उल्लेखनीय हैं। शीलजी ने शोषण और अत्याचार के विरुद्ध अपनी कहानियां लिखीं, उनको सुप्रसिद्ध नाट्य कलाकार एवं चलचित्र निदेशक श्री पृथ्वीराज कपूर ने अपने नाट्य मंचों पर प्रदर्शित भी किया, जो अत्यन्त लोकप्रिय हुए।

पं. प्रतापनारायण मिश्र द्वारा बंगला उपन्यासों के अनुवाद तथा मौलिक कहानी लेखन के साथ कानपुर में कथा साहित्य सृजन की जो समृद्ध परंपरा प्रारंभ हुई थी, वह अब भी अनवरत प्रवहमान है। वर्तमान नाट्य लेखकों में डा. अज्ञात सुलतानिया, ज्ञानदेव अग्निहोत्री, सिद्धेश्वर अवस्थी तथा सुशीलकुमार सिंह उल्लेखनीय हैं।

साहित्यिक योगदान की चर्चा करने पर जहां साहित्यिक विभूतियों की स्मृति सजीव होती है, वहीं नयी पीढ़ी को उनके प्रेरणाप्रद व्यक्तित्व एवं कृतित्व से दिशा-निर्देश भी प्राप्त होता है। साहित्य की विभिन्न विधाओं में रचनाकारों को साहित्य सृजन के अलावा स्वतंत्रता आंदोलन को जन-जन तक पहुंचाने का भी श्रेय प्राप्त है।

(अपूर्व फ़ीचर्स)

व्यक्तित्व

विचित्र विनोदी आचार्य कृपलानी

□ शंकर त्रिवेदी

भारतीय राजनीति में आचार्य कृपलानी का व्यक्तित्व अपने ढंग का एक ही था। उन्हें गांधीवाद के प्रारम्भिक चितेरों में कहा जाये तो भी अतिशयोक्ति नहीं है। उन्हें लोग मुंह-फट भी कहने में नहीं चूकते थे। लेकिन ऐसा सोचना उनके साथ अन्याय करना है। अलबत्ता वे स्पष्टवादी थे। उनकी स्पष्टवादिता, विनोदप्रियता, कड़वा सच कभी-कभी मुंहफट कहने के रूप में गिनी जाने लगी। बेलाग कहने वाले ऐसे आत्मीय जन खोजने पर भी शायद ही मिल पायें।

वे भारतीय राजनीति के व्यापक फलक पर गांधीजी के साथ सन १९१७ में चम्पारण सत्याग्रह में शामिल हुए थे। जीवन भर बापू के साथ उनकी अंतरंगता बराबर बनी रहीं। लगता है प्रखर स्पष्टवादिता, विनोदप्रियता उदारता तथा प्रत्युत्पन्न मति जैसी विशेषताओं को उन्होंने गांधीजी के संसर्ग से ही ग्रहण किया था।

लीजिये उनके कुछ ऐसे ही संस्मरणों का आनन्द।

मेरे घर डाका

उनकी पत्नी श्रीमती सुचेता कृपलानी समाजवादी दल की एक वरिष्ठ सदस्या थीं। उन दिनों वे उत्तर प्रदेश विधान सभा की सदस्या भी थीं। उसी दौर में उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री पद की खींचतान चल रही थी। कई गुंट सक्रिय थे। उस जमाने के सुप्रसिद्ध कांग्रेसी नेता श्री चन्द्रभान गुप्त ने रातोंरात श्रीमती कृपलानी को अपनी ओर मिला लिया। वे कांग्रेस की सदस्या बन गयीं। उन्हें विधान मण्डल दल का नेता घोषित करवा कर मुख्यमंत्री पद की शपथ ग्रहण करवा डाली।

आचार्य कृपलानी उस समय प्रजा सोशलिस्ट पार्टी के बड़े नेता थे। पत्रकारों ने उन्हें घेरा और इस प्रसंग पर उनकी प्रतिक्रिया पूछी।

दादा कृपलानी ने अत्यन्त सहज भाव से कहा : – 'अरे कांग्रेसियों ने मेरी अनुपस्थिति में मेरे घर पर डाका डाला। उसमें वे माल तो नहीं लूट सके पर मेरी पत्नी को ही भगा ले गये। सुना है उसे चीफ मिनिस्टर बना दिया है।'

ऐसी दो टूक बात जो मन में आयी

वही उगल दी। हर किसी के बस की बात नहीं है। उनके बस की थी।

यह अन्तिम नहीं

एक साक्षात्कार के दौरान उनके तथा साक्षात्कारकर्ता दोनों के नरम स्वास्थ्य को मद्देनजर रखकर कह उठे पत्रकार महोदय – 'दादा! लगता है यह आपका साक्षात्कार अंतिम ही है।'

सुनते ही चुहुलबाजी में माहिर दादा कृपलानी बोले – 'मित्र! तुम तो भारतीय संस्कृति के पुजारी हो सो पूरे १२५ बरस जीना ही है! रही बात मेरी तो....।'

'तो क्या दादा!' वे पूछ उठे।

'अरे मेरी बीवी की विधवा होने में जरा भी रुचि नहीं है। इसलिए मैं सिर्फ साक्षात्कार को अन्तिम सिद्ध करने के लिए आत्महत्या भी नहीं कर सकता सो यह साक्षात्कार अन्तिम नहीं।' कह कर वे खूब जोरों से हंसे।

दोनों में फर्क यह है

बात उन दिनों की है, तब भारतीय राजनीति में 'आयाराम' 'गयाराम' का अस्तित्व नहीं के बराबर था। इनके लिए दलबदलू शब्द व्यवहार में आ रहा था। तभी एक दलबदलू विधायक दादा कृपलानी को अपने दल छोड़ने का कारण बतला रहे थे। एक पत्रकार भी तभी वहां आ धमके। पूछ उठे– 'दादा! आप श्रीमती सुचेता कृपलानी को महान समझते हैं या अपनी प्रेमिका को?'

'भाई फर्क तो मैं क्या जानूं! हां, सिर्फ इतना जानता हूं कि पत्नी को 'वर्तमान दल' तथा प्रेमिका को 'विचाराधीन दल' जरूर ठहराने की हिमाकत कर सकता हूं।' कहकर दादा हंसे। फिर कह उठे, 'पर यह वक्तव्य ऑफ द रिकार्ड है, वहीं रहना चाहिये वरना सी. एम. का बेलन मेरी....।' – कहकर वे ठहाके में खो गये खुद के।

कहे से कुम्हार...

घटना सन १९३० की है। महात्मा गांधी सत्याग्रह के बाद जब जेल गये तो वहां से कुछ अस्वस्थ होकर ही बाहर आ सके। उन्होंने बीमारी के बावजूद देश का दौरा शुरू कर दिया। तब कृपलानीजी ने प्रस्ताव किया कि वे बापू के साथ रहें ताकि उन्हें ज्यादा श्रम से रोक सकें। किन्तु कुछ नेताओं ने उनके प्रस्ताव को महत्व नहीं दिया। खिन्न मन दादा कृपलानी चुप्पी साध गये।

डॉक्टरों ने गांधीजी को आराम करने की राय दी। लेकिन वे मानने वाले कहां थे। नेताओं ने सारी स्थिति पर फिर से सलाह मशविरा किया। हारकर कृपलानी को बापू के साथ भेजना तय हुआ। सुनकर आप बुदबुदा उठे 'गरज पड़ने पर गधे को भी बाप कहना पड़ता है।'

किसी नेता ने सुन लिया तो पूछ उठा– 'क्या फरमा रहे हैं, दादा!'

वे हंसकर बोले – 'अरे कहना क्या

है ! वही कहावत कह रहा था कि कहने से कुम्हार गधे पर कहां बैठता है !' ...और वे बापू के साथ हो लिये।

जाओ मरो, हम क्या करें ?

गांधीजी एक बार दिल्ली से कलकत्ता जा रहे थे। इलाहाबाद स्टेशन पर हजारों लोगों ने प्लेटफार्म पर गाड़ी को घेर लिया। बापू को तेज बुखार था। रात भी काफी हो चुकी थी। दादा कृपलानी भी बापू की टोली में थे। वे कम्पार्टमेण्ट के दरवाजे पर आकर लोगों को समझाने लगे कि – 'बापूजी बीमार हैं। वे अभी आराम कर रहे हैं। इतनी देर रात में आप उनके दर्शनों की जिद नहीं करें।'

लेकिन जोशीली भीड़ पर इसका असर नहीं हुआ। वे नारे लगाते डिब्बा पीटने लगे। गांधीजी आवाज से चौंके। जग गये। बोले – 'प्रोफेसर कृपलानी ! यह बच्चों की क्लास नहीं हैं ! मुझे प्लेट फार्म पर जाना चाहिये !'

कृपलानीजी ने बहुत मना किया कि आप बाहर नहीं जायें। बापू भी तर्क देते रहे। कई बार के आग्रह के बाद भी जब बापू दरवाजे की तरफ बढ़े तो कृपलानीजी ने तमतमाकर कहा – 'तो फिर जाओ, मरो जयजयकार सुनो अपनी। हम क्या करें !' – और वे बच्चों की तरह सुबक कर रो उठे !

गाड़ी चलने पर बापू ने अब उनकी बात मानने को कहा तब वे चुप हुए फिर चुटकी ली – 'फिर मत दौड़ पड़ना' 'जय हो गांधी बाबा की' सुनकर !

मेरी जात तो है...

दादा कृपलानी तीसरी श्रेणी के एक भीड़ भरे डिब्बे में यात्रा कर रहे थे। तभी एक किशोरी प्रेमशीला गुप्ता पूछ उठी – 'आप किस जाति के हैं।'

'क्या बताऊं, बेटी ! मेरी एक जाति तो है नहीं। जाति-बदलू ही मान लो मुझको तुम।' – दादा कृपलानी बोले।

'पर कोई जाति तो होगी ही न आपकी और आपके माता-पिता की ?' वह किशोरी फिर सवाल कर उठी।

'पूछने पर ही तुल बैठी हो तो मैं हरिजन हूं, बुनकर भी हूं, ब्राह्मण भी, व्यापारी भी, वह भी सिन्धी।'

'क्या मतलब ?'

'बिटिया ! मैं शौचालय साफ करता हूं अपना तब हरिजन, सूत कातता हूं तो बुनकर, पढ़ाने जाता हूं तब ब्राह्मण और देश के लिए विचार बेचने निकलता हूं गांधी के इशारे पर तो बनिया बन जाता हूं। और भी कई जातियां जीता हूं। कौन-सी बताऊं।'

सहयात्री आनन्दित हो उठे उनकी जाति जानकर।

ऐसे थे स्पष्ट वक्ता, मुंहफट, विनोदी, प्रत्युत्पन्न मति के स्वामी आचार्य जे. बी. कृपलानी ! उनकी स्मृति को प्रणाम।

– बी. ११६, विजयपथ, तिलकनगर, जयपुर - ३०२ ००४ राज.

□

चावल के दाने पर करिश्मा

□ किरणबाला

'दाने-दाने पर लिखा है खाने वाले का नाम' कहावत तो आपने जरूर सुनी होगी, और शायद यह सोचा भी न होगा कि दाने पर नाम भी लिखा जा सकता है? लेकिन अगर हाथ में हुनर हो तो इस कहावत को चरितार्थ करते देर नहीं लगती। जी हां, दाने पर बहुत कुछ लिखा जा सकता है। यकीन न हो तो इस कला के कुछ कलाकारों से मिलिये।

कुछ दिनों पहले राष्ट्रपति वेंकटरामन जयपुर गये थे। अपनी उस यात्रा के दौरान एक महिला कलाकार नीरू छाबड़ा ने उन्हें एक अनोखी भेंट दी। एक चावल के दाने पर उसने लिखा था – 'महामहिम राष्ट्रपति का गुलाबी नगर में स्वागत है' राष्ट्रपति इस अनोखी भेंट को पाकर बहुत प्रसन्न हुए।

जैसलमेर के एक कलाकार हिराम सोनी ने सिर के बाल पर खून से 'वेंकटरामन' लिखकर इसे कांच की एक शीशी में बंद कर राष्ट्रपति को जोधपुर में भेंट किया। सिर के बाल पर अपना नाम लिखा देख राष्ट्रपति के मुंह से निकल पड़ा 'ओह, एक्सिलेंट!'

एक कलाकार हैं, हैदराबाद के पन्ना माहेश्वरी। एम.ए. के यह छात्र चावल के एक दाने पर अंग्रेजी में ८, हिंदी में ९, उर्दू में १८ व तेलुगु में ७ अक्षर चंद मिनटों में लिख देते हैं।

भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग, जयपुर के कर्मचारी सुरेन्द्र पाल अफरिया ने तीसरी बार गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकार्ड्स में अपना नाम दर्ज

कराया है। अफरिया ने एक चावल के दाने पर ६३८ अक्षर लिखकर विश्व रिकार्ड बनाया था। उनका पिछला रिकार्ड ४३७ अक्षरों का है। विश्व रिकार्डधारी अफरिया इससे पूर्व अपने ही एक बाल पर 'जवाहर लाल नेहरू शताब्दी–मेरा भारत महान १९८९-९०' भारत, बाई एस.के. अफरिया' और भारतीय ध्वज का चित्रण हिंदी तथा अंग्रेजी भाषा में करके जापान के सुतोमों इशाई द्वारा १९८३ में बनाये रिकार्ड को ध्वस्त कर चुके हैं।

अगर हाथ में हुनर हो और कुछ करने का उत्साह हो तो व्यक्ति असंभव को भी संभव कर सकता है। क्या आप इस बात पर विश्वास करेंगे कि ५ x ८ इंच के छोटे से कागज पर १,१०० चित्र अंकित हो सकते हैं? लेकिन यह मजाक नहीं सत्य है, और इस करिश्मे को करने वाले हैं नजप्पा, जो एक इंजीनियर हैं। उन्होंने अपने इंजीनियरिंग ज्ञान को इस प्रकार इस्तेमाल किया कि चावल के दानों पर विमान के चित्र और ५ x ८ इंच से भी छोटे कागज पर भगवद्गीता लिख दी। वाकई नजप्पा की कला बड़े कमाल की है।

अब आपको एक अन्य कलाकार भास्कर भौमिक से मिलवाते हैं जो कि छोटे अक्षरों की लिखावट में तेजी से आगे बढ़ रहे हैं। यह कलाकार चौबीस परगना (पश्चिम बंगाल) का है, जो ललित कला में सिद्धहस्त है। भास्कर कमर्शियल आर्ट में डिप्लोमा हैं। उनके द्वारा किये गये कुछ चमत्कार इस तरह हैं – चार इंच लंबे एक बाल पर १२५ अंग्रेजी अक्षर, पिन के अग्रभाग पर ईसा मसीह का चित्र, साबूदाने के एक दाने पर विश्व का नक्शा, अनाज के आधे टूटे हुए दाने पर दुर्गा का चित्र।

भास्कर को प्रसिद्धि तब मिली थी, जब १९८० में उन्होंने श्रीमती इंदिरा गांधी को चावल के एक दाने पर ३०० अक्षरों वाला पत्र लिखा था। वैसे जब वे स्कूल में कक्षा नवीं में पढ़ते थे, तभी से उन्हें इस तरह लिखने का शौक रहा है।

टोक्यो के सुतोमी इशाई भी छोटे अक्षरों की लिखावट में बड़े माहिर हैं। १९८३ में उन्होंने ४४ देशों के नाम के १८४ अक्षर एक चावल के दाने पर लिख कर कीर्तिमान स्थापित किया था। यही नहीं, उन्होंने जापानी भाषा में 'टोक्यों जापान' शब्द मानव केश पर लिखकर अद्भुत कौशल का परिचय दिया था।

छोटे अक्षरों की लिखावट के प्रयासों में इंग्लैंड के सी. वाट्स किसी से पीछे नहीं हैं। उन्होंने बिना किसी उपकरण की सहायता के प्रभु की प्रार्थना लिखी। माइकेल ने कार्मेल विश्वविद्यालय में नमक के एक रवे पर एक इलेक्ट्रान किरण से १६ अक्षरों का एक शब्द इस कौशल से उभारा था कि उसके स्ट्रोक्स

सिर्फ २ से ३ मिलीमीटर चौड़े थे।

चावल के दानों पर एक से ५ हजार ५१ अक्षर खोदने तथा पोस्टकार्ड साइज की हाथी दांत की प्लेट पर गीता व कुरान शरीफ अंकित करने वाले कलाकार भंवरलाल कुमावत इन दिनों वैसी ही प्लेट पर अंग्रेजी में बाइबिल उत्कीर्ण करने में जुटे है।

हाथी दांत की ऐसी प्लेटों पर ६ बार गीता व एक बार कुरान शरीफ अंकित करने वाला यह कलाकार, इन दिनों आंध्र के तूफान पीड़ितों के लिए एक करोड़ रुपये एकत्र करने का संकल्प लेकर जगह- जगह अपनी कला का प्रदर्शन कर रहा है।

४४ वर्षीय, अजमेर (राजस्थान) निवासी भंवरलाल कुमावत ने बताया कि १९७७ में तत्कालीन प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई ने भूतपूर्व अमरीकी राष्ट्रपति जिमी कार्टर को चावल का एक दाना भेंट किया था, जिस पर मेरे द्वारा बाइबिल की १० शिक्षाओं के ५ सौ अक्षर उत्कीर्ण थे। बाद में इसकी नीलामी से १७ हजार, २ सौ पौंड की राशि मिली, जो विकलांगों की सहायतार्थ भेंट कर दी थी। उन्होंने बताया कि वे अब तक नेपाल के महाराजाधिराज, अमरीका के कैनेडी, पाकिस्तान के स्व. भुट्टो व स्व. जिया उल हक, बांगलादेश के स्व. मुजीबुर्रहमान, मदर टेरेसा आदि को भी ऐसी भेंट दे चुके हैं। उनकी कुछ ऐसी ही कृतियां कतिपय संग्रहालयों में भी रखी हैं।

श्री कुमावत ने संपूर्ण गीता चावल के दानों पर उत्कीर्ण की है। सन १९८० में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी के आग्रह पर उन्होंने ३ x ४ इंच की हाथी दांत की प्लेट पर संपूर्ण गीता अंकित की, जिसमें ५४ हजार ३ सौ अक्षर थे। मगर वे यह भेंट स्व. इंदिरा गांधी को नहीं दे पाये। श्रीमती गांधी की हत्या के बाद उन्होंने यह भेंट श्री राजीव गांधी को दी।

ऐसी ही गीताएं कुमावत जोधपुर के भूतपूर्व महाराजा, जैन मुनि रामचन्द्रजी सूरी तथा राष्ट्रीय संग्रहालय को दे चुके हैं तथा दिल्ली के लक्ष्मीनारायण मंदिर (बिड़ला मंदिर) को भेंट करेंगे।

राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित कुमावत ने आत्म संतोष के लिए १९६२ के भारत-चीन युद्ध के समय एकत्र की गयी १२ हजार ८ सौ रुपये की राशि तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू को, १९६५ के भारत-पाक युद्ध के समय २१ हजार रुपये की राशि तत्कालीन प्रधानमंत्री लालबहादुर शास्त्री को, १९६९ में राजस्थान में पड़े अकाल के समय एक लाख रुपये की राशि तत्कालीन मुख्यमंत्री मोहनलाल सुखाड़िया को भेंट की तथा १९७० के बांग्ला देश युद्ध के

समय ५० हजार रुपये की राशि भी दी। यह सारा धन उन्होंने अपनी कला के प्रदर्शन से एकत्र किया था।

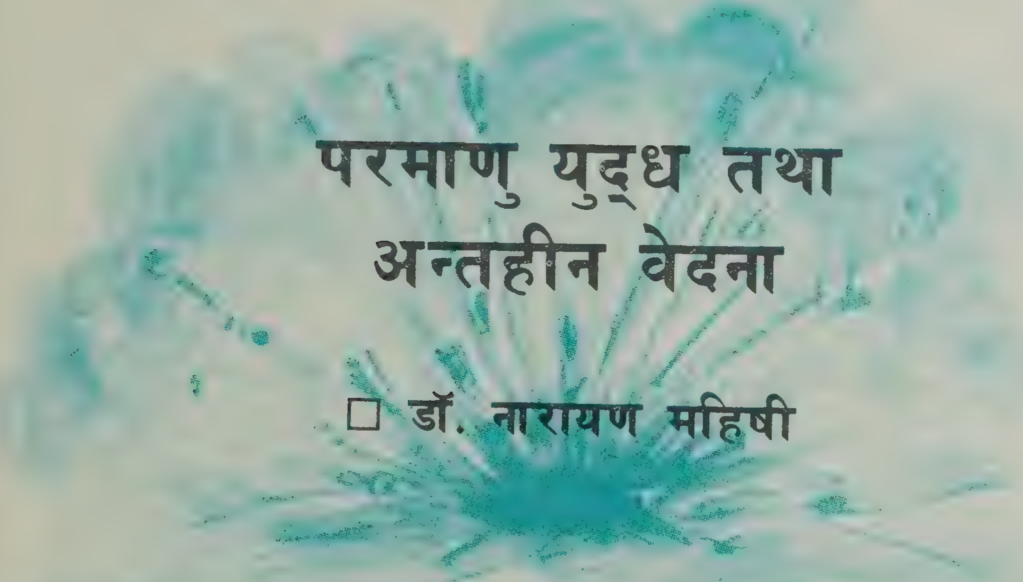
अब एक नवीनतम रिकार्ड और देखिये, जिसने अब तक के पिछले सभी रिकार्डों को ध्वस्त कर दिया है। यह महान कलाकार हैं यमुनानगर के दीपक स्याल। दीपक मात्र २० वर्ष के हैं। उन्होंने चावल के एक दाने पर ८१३ शब्द लिखकर लोगों को हैरत में डाल दिया। उन्होंने १०० बार 'आई लव यू', १०१ बार 'आई लव टु यू' तथा अंत में नाम के पहले अक्षर डी.एस. लिखे हैं। उनके इस चमत्कार पर 'गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकार्ड्स' की ओर से एक टाई व प्रशंसापत्र आया है तथा प्रमाणपत्र भी प्रदान किया है।

दीपक स्याल ने ब्रश के रूप में अपने सिर के बाल को ही अपनाया। वैसे उन्हें विश्व रिकार्ड बनाने में काफी पापड़ बेलने पड़े। वे पिछले तीन - साढ़े तीन वर्षों से इस कला का अभ्यास कर रहे थे। शुरू में उन्होंने पेन से चावल पर लिखने की कोशिश की, किंतु संतोष-जनक परिणाम नहीं निकलने पर इंसानी बालों को ब्रश के रूप में इस्तेमाल किया जो अधिक कारगर सिद्ध हुआ। उन्होंने सर्वप्रथम 'रामायण' शब्द को चावल के दाने पर लिखा, जिसे लिखने में उन्हें दो घंटे का समय लगा था। अब तो वे इस कला में इतने सिद्धहस्त हो गये हैं कि चंद मिनटों में ही ये किसी भी दाने पर अपनी कला का प्रदर्शन कर लोगों को आश्चर्य में डाल देते हैं। यही नहीं, चावल के दाने पर वे झटपट किसी का चित्र भी अंकित कर देते हैं। उपप्रधान मंत्री श्री देवीलाल का चित्र दीपक स्याल ने बनाकर उन्हें भेट किया था, जिससे प्रसन्न हो कर देवीलाल ने पुरस्कार-स्वरूप ढाई हजार रुपये व एक प्रमाण-पत्र भी उन्हें दिया था। राष्ट्रपति श्री वेंकटरामन को भी दीपक स्याल ने उनका चित्र बनाकर भेजा, जिसे राष्ट्रपति ने बड़े चाव से स्वीकारा। इसके अलावा वह महात्मा गांधी, मिखाइल गोर्बाचौव, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, जवाहरलाल नेहरू, इंदिरा गांधी, राजीव गांधी, बेनजीर भुट्टो, ओमप्रकाश चौटाला आदि के चित्र भी चावल के दाने पर बना चुके हैं। वह अपनी कला में लैंस की सहायता भी नहीं लेते। अपनी जरूरतों की रंग-बिरंगी स्याहियों का निर्माण भी वह स्वयं करते हैं।

उन्होंने माचिस की एक तीली पर राष्ट्रीय गीत और गायत्री मंत्र भी लिखकर आश्चर्यचकित कर दिया है।

दीपक स्याल के इरादे काफी बुलंद हैं। और वह इससे भी अधिक शब्दों को चावल के एक दाने पर उतारने के इच्छुक हैं।

— १६, सुदामा नगर एक्टेंशन-२,
रामटेकरी, मन्दसौर, (म.प्र.)



परमाणु युद्ध तथा अन्तहीन वेदना

□ डॉ. नारायण महिषी

युद्ध कौन चाहता है, विशेषकर परमाणु युद्ध? कोई भी नहीं। इस संबंध में बड़े देशों ने बयान जारी किये हैं। साथ-साथ परमाणु हथियारों का संचय बढ़ाने के प्रयास भी जारी हैं। यह कहा जा रहा है कि यदि बड़े राष्ट्र परमाणु हथियारों के मामले में मज़बूत हो जाते हैं तो ताकत का सन्तुलन बना रहा है। अन्यथा किसी देश को बहुत थोड़े समय में नष्ट किया जा सकता है। ऐसी हालत में लाखों विकलांग लोगों को बचाने के लिए चिकित्सा सुविधायें भी कोई काम नहीं आयेंगी।

परमाणु युद्ध के दुष्परिणामों की न तो भविष्यवाणी की जा सकती है, न उन्हें मापा जा सकता है। केवल मानवता की अन्तहीन वेदना आंकी जा सकती है। चिकित्सा की अति आधुनिक सुविधाओं से लैस कोई भी अस्पताल इस बात का दावा नहीं कर सकता कि उसने एक सौ जानें बचायी हैं। अनेक अवसरों पर यह कहा जाता है कि परमाणु आक्रमण का लक्ष्य केवल सामरिक सुविधाओं की दिशा में किया जाता है। किन्तु ये सुविधायें केवल थोड़े से स्थानों पर केन्द्रित होने की अपेक्षा दूर-दूर तक फैली हुई हैं। इस प्रकार असंख्य परमाणु हथियारों का विस्फोट किया जायेगा। इसके अतिरिक्त, प्राकृतिक हवाओं और वातावरणीय मिश्रण के कारण विकिरण का विस्तार विशाल जनसमूह को नष्ट कर देगा तथा व्यापक क्षेत्रों को दूषित कर देगा। बाद में जीवित रहनेवाले लोगों को बचाने और उनकी चिकित्सा करने के लिए किसी भी राष्ट्र के पास उपलब्ध डाक्टरी सुविधायें बिल्कुल अपर्याप्त हैं। परमाणु युद्धोपरान्त

उत्पन्न होने वाली डाक्टरी स्थिति का वस्तु परीक्षण किया जाये तो केवल एक ही निष्कर्ष निकलता है: रोकथाम ही हमारा एकमात्र सहारा है।

परमाणु विकिरण (रेडिएशन) का ख़तरा सर्वविदित है। विकिरण के अत्यधिक मात्रा में बाहर छूट जाने के कारण बेक्टीरिया तथा वाइरसों के प्रति प्रतिरक्षा की क्षमता कम हो जायेगी और परिणामस्वरूप संक्रामकता के दूर तक फैलने की आशंका है। विकिरण के ख़तरे असंख्य हैं। इससे ऐसे मस्तिष्क की क्षति तथा मानसिक रोग उत्पन्न होते हैं जो कभी ठीक नहीं किये जा सकते, और विकिरण के बाद जीवित रहनेवाले लोगों में कैंसर के अनेक प्रकारों की संख्या बढ़ती है। आनुवंशिकी क्षति का प्रभाव भावी पीढ़ियों पर पड़ेगा।

परमाणु आक्रमण के कारण बाद में जीवित रहनेवाले लोगों को ऐसी कई मुसीबतें झेलनी पड़ती हैं जिनकी व्याख्या नहीं की जा सकती। इससे संचार, खाद्य आपूर्ति तथा जल के क्षेत्रों में पूर्ण अवरोध होगा। इस आक्रमण के परिणामस्वरूप होनेवाले सामाजिक विघटन की कल्पना नहीं की जा सकेगी। मानव संकट के ये विवरण अपर्याप्त हैं। अतः, परमाणु हथियारों को सदा बढ़ाने की लालसा को अब नियंत्रित करने की सख़्त ज़रूरत है क्योंकि इस संग्रह में दस लाख से अधिक टीएनटी की क्षमता वाले हज़ारों बम हैं। इसके अतिरिक्त मिट्टी, जंगल तथा पशुधन के प्रदूषण से उत्पन्न खाद्य के संसाधनों में कमी के कारण मानव संकट बढ़ जायेगा।

परमाणु हथियारों के इस्तेमाल से उत्पन्न विध्वंश की कल्पना की जा सकती है। किन्तु कुछ वास्तविक परमाणु घटनायें, विशेषकर हिरोशिमा तथा नागासाकी से संबंधित हमें परमाणु हथियारों के विषय में कुछ भी करने नहीं देतीं। लगभग चार वर्ष पहले, एक जिम्मेदार सरकारी एजेन्सी ने मूल्यांकन किया जिसमें यह बताया गया कि बीस लाख की आबादी वाले नगरों पर परमाणु हथियारों के आक्रमणों का क्या प्रभाव पड़ा। प्रसंगवश, यह कहना होगा कि हिरोशिमा बम में लगभग १५,००० टन विस्फोटक शक्ति थी। यदि ऐसे नगरों के मध्य क्षेत्र में एक दस लाख टन क्षमता वाले परमाणु हथियार का विस्फोट किया जाये तो वास्तव में भारी संकट उत्पन्न हो जायेगा। हो सकता है कि १८० वर्ग किलोमीटर संपत्ति का सर्वनाश हो जाये, २५०,००० लोगों की जानें चली जायें और ५०,००० गंभीर रूप से घायल हों। इनमें फ्रैक्चर और सॉफ्ट टिशुज़ के गंभीर चीर-फाड़, ऊपरी छाले, रेटिनी छाले तथा श्वास-नली की क्षति, विकिरण से हुए जख़्म आदि जैसे

विस्फोट के कारण हुए घाव भी सम्मिलित होंगे।

इनका इलाज़ करने के लिए आवश्यक चिकित्सा सम्बन्धी सुविधाओं की मात्रा का अनुमान नहीं लगाया जा सकता। अध्ययन से पता चला है कि यदि इनमें से किसी एक नगर के आसपास १८,००० शैया वाला अस्पताल उपलब्ध हो तो भी ५००० ऐसे जख़्मी बाकी रह जायेंगे जिनकी चिकित्सा नहीं हो पायेगी।

चिकित्सा सम्बन्धी कार्य की अपर्याप्ता इतनी स्पष्ट है कि हम बहुत बड़ी आशायें नहीं कर सकते। एक बार एक मोटर दुर्घटना के कारण गैसोलीन की टंकी फट गयी। एक बीस वर्षीय व्यक्ति बुरी तरह से जल गया और उसे बोस्टन अस्पताल के बर्न यूनिट में ले जाया गया। अस्पताल में रहने के दौरान उसे १४० लिटर फ्रेश-फ्रोज़न प्लाज़्मा दिया गया, १४७ लिटर फ्रेश फ्रोज़न रैड ब्लड सैल, १८० एम एल प्लैटलेट्स तथा १८० एम एल ऐल्बुमिन। मरीज़ को छः शल्य प्रक्रियाओं से गुज़रना पड़ा और इस दौरान उसके शरीर के सतह के लगभग ८५% हिस्से के जख़्मों को कृत्रिम चर्म के अलावा विभिन्न प्रकार के प्रत्यारोपणों से बंद किया गया। चिकित्सा की सुविधाओं के हिसाब से अत्यधिक देखभाल के बावजूद मरीज़ अस्पताल में दाख़िले के ३३ वें दिन मर गया। यदि किसी आधुनिक अस्पताल में दाह जख़्मों के कारण हजारों मरीजों को दाखिल करना पड़े तो उपलब्ध चिकित्सा सुविधायें पर्याप्त नहीं होंगी।

परमाणु युद्ध के पश्चात् जो शेष रह जाता है, वह केवल वेदना की दर्दनाक तस्वीर है। जापानी फ़िज़िशियन प्रोफ़सर एम. इचिमारू द्वारा प्रकाशित नागासाकी बम के दुष्परिणामों का आंखों देखा हाल किसी भी उस व्यक्ति का हृदय पिघला देगा जो इस विवरण को पढ़ेगा। प्रोफ़ेसर इचिमारू ने बतलाया – 'मैंने उराकामी में अपने मेडिकल स्कूल जाने की कोशिश की जो हाइपोसेन्टर से ५०० मीटर की दूरी पर था। उराकामी से लौटते हुए मैं कई लोगों से मिला। उनके कपड़े जीर्ण-शीर्ण थे और उनके शरीर से त्वचा की धज्जियां उड़ी हुई थीं। वे नरकंकाल जैसे लग रहे थे और आंखें फाड़कर देख रहे थे। अगले दिन मैं पैदल उराकामी में घुसा और वहां मैंने देखा कि सब कुछ नष्ट हो चुका था। उराकामी में मैंने पहले जो कुछ देख रखा था, कुछ भी शेष नहीं था। इमारतों की कंकरीट तथा लोहे के ढांचे ही शेष मात्र थे। जहां देखो वहीं मृत शरीर पाये गये। हमने प्रत्येक गली के नुक्कड़ पर हवाई आक्रमण से उत्पन्न आग को बुझाने के लिए पानी के टबों का इस्तेमाल किया। इन छोटे टबों में से

एक टब में एक हताश व्यक्ति की लाश पायी गयी जिसे राहत के लिए शायद ठंडे पानी की तलाश रही हो। उसके मुंह से झाग निकल रहे थे। मैं नष्ट किये गये खेतों में से रोती बिलखती महिलाओं की आवाजें नहीं भुला सकता। जैसे-जैसे मैं स्कूल के करीब पहुंचा, मैंने देखा वहां काले, झुलसे शरीर पड़े थे जिनकी भुजाओं और पांवों की हड्डियों के सफ़ेद कोर साफ़ नज़र आ रहे थे। जब मैं वहां पहुंचा, कुछ अभी जीवित थे। वे अपना शरीर तक हिला नहीं पा रहे थे। मैंने उनसे बात की और उन्हें यह उम्मीद थी कि वे ठीक हो जायेंगे, किन्तु यह निश्चित था कि अंततः वे सब दो हफ्तों में मर जायेंगे। जिस ढंग से उनकी आंखें मुझे देख रही थीं, मैं उस दर्दनाक दृश्य को भूल नहीं सकता। उनकी आवाज़ें सदा के लिए मेरे कानों में गूंज रही हैं। यह उल्लेखनीय है कि जो बम नागासाकी पर फेंका गया उसकी शक्ति २०,००० टन टीएनटी की थी। यह बम युद्धक्षेत्र में इस्तेमाल करने के लिए बनाये गये बमों से बड़ा नहीं था।

यदि परमाणु हथियारों का मौजूदा संचय बड़ी शक्तियों द्वारा प्रयुक्त किया जाये तो शायद ही कोई ऐसी जगह बचेगी जहां वेदना और तबाही का तांडवनृत्य न हो। समस्त अस्पतालों में अधमरे मरीज़ों को चिकित्सा की सुविधाएं उपलब्ध नहीं हो पायेंगी। अतः यह अत्यन्त आवश्यक है कि हमें समझदारी से काम लेना चाहिये और परमाणु हथियारों के इस्तेमाल से निश्चय ही बचना अत्यन्त आवश्यक है। गुट निरपेक्ष राष्ट्रों को विश्व की तीसरी शक्ति के रूप में अधिक प्रयोजनीय योगदान देने में सफल होना चाहिये।

(हिंदी रूपांतर : रतन प्रकाश)

□

सामरसेट माम की पुस्तकों की रायल्टी की काफी बड़ी रकम स्पेन में जमा हो गयी थी। मगर स्पेन का कानून यह है कि रायल्टी के पैसे देश के बाहर नहीं ले जाये जा सकते। इसलिए वे स्पेन पहुंचे ताकि वहीं उस रकम का सदुपयोग कर सकें। वे वहां के सबसे खर्चीले होटल के सबसे महंगे कक्ष में ठहरे और खुले हाथों खूब खर्च किया। जब उन्हें महसूस हुआ कि अब रायल्टी का अधिक हिस्सा व्यय हो चुका है, तो स्पेन से रवाना होने की सोची और होटल के मैनेजर से बिल मांगा। उत्तर मिला— 'सर, आप जैसे विश्वविख्यात व्यक्ति आकर हमारे होटल में ठहरें, यह हमारे लिए बड़े सम्मान की बात है और इससे हमारी बड़ी पब्लिसिटी हुई है। अतः आपका बिल कुछ भी नहीं है।'

— डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'

पुस्तकों की यात्रा

□ डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'

सब से प्राचीन पुस्तकें मिस्र में तैयार हुईं। यह ५,००० से भी पहले पैपाइरस नामक एक प्रकार सरकंडे से बने कागज पर लिखी गयी थीं।

प्राचीन पुस्तकें आधुनिक पुस्तकों की भांति बंधी हुई और जिल्ददार नहीं होती थीं।

होता यह था कि पैपाइरस के टुकड़े या 'पन्ने' एक-दूसरे के साथ चिपका दिये जाते थे और इस तरह एक लम्बी पट्टी बन जाती थी। इस प्रकार की कुछ पट्टियां १४४ फुट तक लम्बी होती थीं। पट्टी का एक सिरा लकड़ी या हड्डी की किसी छड़ी पर चिपका दिया जाता था। इसके बाद दूसरा सिरा इसी प्रकार की दूसरी छड़ी पर लपेट दिया जाता था। इस तरह पुस्तकें तैयार हो जाती थीं, जिसे खोलते जाते थे और पढ़ कर लपेटते जाते थे। इस प्रकार लिपटी हुई पुस्तक को 'स्क्रोल' कहते हैं। स्क्रोल को दोनों हाथों से पकड़ना पड़ता था। पुस्तक को डोरियों या तागों से बांधा जाता था और उन्हें लम्बे गोल डिब्बों में रखकर एक जगह से दूसरी जगह ले जाया जाता था।

भारत में भोजपत्र पर पुस्तकें लिखी जाती थीं। भोजपत्र भूर्ज वृक्ष की छाल को कहते हैं। इसके आयताकार पृष्ठों को बीच में से छेद करके माला की तरह पिरोया जाता था। भोजपत्र की पोथियों को बांध कर और कपड़े के बस्तों में लपेट कर रखा जाता था।

आवरण या 'कवर' के भीतर बंधे हुए पृष्ठों वाली पहली पुस्तक पार्चमेंट या चर्म पर लिखी हुई थी। पार्चमेंट जानवरों की खाल से बनाया जाता था। वेलम नामक एक प्रकार का पार्चमेंट मेमनों या बछड़ों की खाल से बनाया जाता था। आम तौर से पार्चमेंट मामूली

कागज से ज्यादा मोटा नहीं होता था।

प्राचीन काल में सभी प्रकार की पुस्तकें, चाहे वे पैपाइरस और भोजपत्र से बनी हों, चाहे पार्चमेंट या चर्मपत्र से, लिखी हाथ से ही जाती थीं। किसी पुस्तक की दूसरी प्रति या कापी की आवश्यकता होने पर हाथ से नकल करने के अलावा और कोई चारा नहीं था। रोम में पुस्तकों की नकल तैयार कराने का काम दासों से कराया जाता था।

यूरोप में मध्य युग में पुस्तकों की नकल तैयार करने का काम ईसाई संन्यासियों द्वारा किया जाता था। किसी एक पुस्तक की नकल करने में महीनों और कभी-कभी तो वर्षों का समय लग जाता था। नकल करने वाले नकल तैयार करने के साथ ही पुस्तक के पृष्ठों को चित्रों आदि से सजाया भी करते थे। पहले अक्षरों को आम तौर से सुन्दर रंगों से रंगने का भी रिवाज था। कभी-कभी पहले अक्षरों को सोने के तबक से भी बनाया जाता था।

जब तक पुस्तकें भोजपत्र और चर्मपत्र पर हाथ से लिखी जाती थीं तब तक उनके अधिक संख्या में या सस्ते मूल्य में उपलब्ध होने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता था। तब पुस्तकें बहुत महंगी थीं और आसानी से प्राप्त नहीं होती थीं। लेकिन बाद में कागज और छपाई की कला के अविष्कार ने इस स्थिति में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया। कागज चर्मपत्र और भोजपत्र से कहीं अधिक सस्ता था, और छपाई की कला ने किसी पुस्तक की अधिक से अधिक नकलें तैयार करना संभव बना दिया।

शुरू में लोगों ने छपी हुई पुस्तकों का मजाक बनाया। लोग इस बात पर गर्व करते थे कि उनके पास काफी बड़ी संख्या में हाथ से लिखी पुस्तकें हैं। ५०० साल पहले पुस्तकों के एक प्रसिद्ध संग्रहकर्ता ने बड़े गर्व से एक बार कहा था कि मेरे पास सारी पुस्तकें 'कलम से लिखी हुई' हैं। वह अपने पुस्तकालय में छपी हुई पुस्तकें रखना लज्जा की बात मानता था। लेकिन धीरे-धीरे छपी हुई पुस्तकों की लोकप्रियता बढ़ती गयी और यूरोप के कई नगरों में छापाखाने खुल गये। आरंभ की छपी हुई छोटी और सुन्दर पुस्तकें 'क्रैडल बुक्स' कहलाती हैं। इनमें से कुछ तो इतनी सुन्दर थीं कि आज तक उनकी बराबरी नहीं हो सकी है। उस युग में छपी हुई पुस्तकों को भी कभी-कभी हाथ से चित्रित करके सजाया जाता था।

'क्रैडल बुक्स' में सबसे अधिक प्रसिद्ध हैं गूतेन बर्ग की बाइबिलें। गूतेन बर्ग को आमतौर से टाइप से होने वाली छपाई का आविष्कारक माना जाता है। बहुत लम्बे समय तक लोग यह मानते रहे कि गूतेन बर्ग की बाइबिलें स्वयं

गूतेन बर्ग द्वारा छापी गयी थीं। लेकिन अब ऐसा माना जाता है कि उन्हें छापने वाला शोफर नाम का एक मुद्रक था। अंग्रेजी भाषा में पहली पुस्तक विलियम कैक्सटन नामक एक मुद्रक ने सन १४७४ में छापी थी।

गूतेन बर्ग, शोफर और कैक्स्टन जैसे आरंभिक मुद्रक यदि किसी आधुनिक छापाखाने या प्रेस को देखें तो उनके आश्चर्य की सीमा नहीं रहेगी। आज मुद्रण - कला ने बहुत अधिक उन्नति की है। छपाई के अलावा पुस्तक को तैयार करने का सारा काम जैसे फार्मों को मोड़ना, काटना, सीना, चिपकाना और जिल्दबंदी करना आदि मशीनों की सहायता से होता है।

अब पुराने जमाने की तरह पुस्तकों का एक-एक पृष्ठ अलग से नहीं छपता। कई पृष्ठों को एक साथ एक 'फार्म' के रूप में छाप लिया जाता है। बाद में पृष्ठ-संख्या के अनुसार फार्मों को मोड़ लिया जाता है। अधिक फार्मों वाली पुस्तकें मोटी होती हैं और कम फार्मों वाली पतली होती हैं। फार्मों की सिलाई या जुजबंदी हाथ से अथवा मशीन से की जाती हैं। तार से पुस्तकें सी जाती हैं। सिलाई के बाद पुस्तकों को मशीन से एक आकार में काट लिया जाता है। फिर जिल्द चढ़ाई जाती है। जिल्दसाजी का काम करने वाले 'बुक बाइंडर' कहलाते हैं। जिल्दसाजी के बड़े-बड़े कारखानों में लगभग सारा काम मशीनों से किया जाता है।

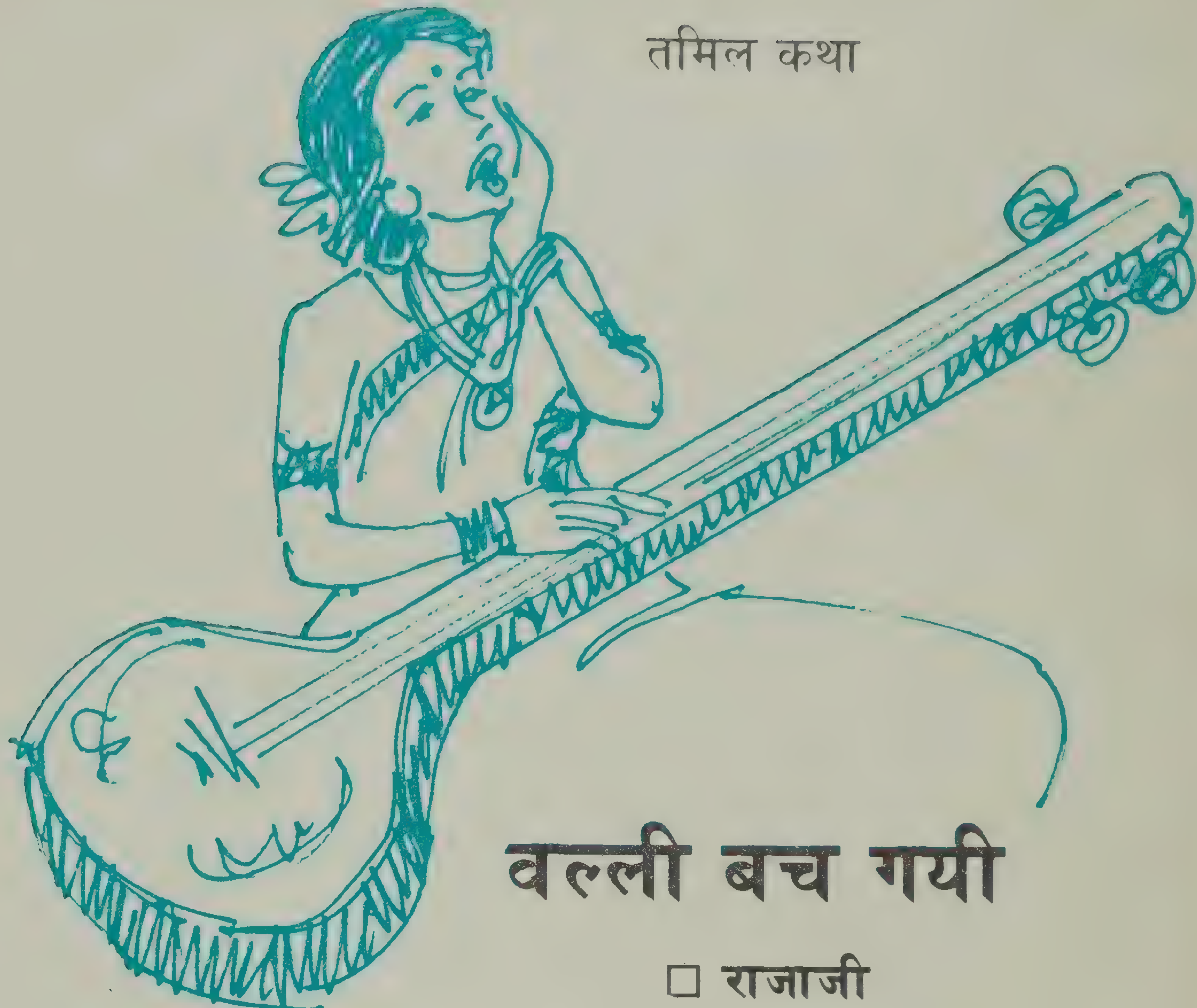
मोटी पुस्तकों पर जिल्द चढ़ाने के पहले उनकी रीढ़ या 'पोट' को पीट कर गोल कर लिया जाता है। इस काम को चूल बैठाना कहते हैं। जिल्द अलग से तैयार की जाती है। अगर पुस्तक पर कपड़े की जिल्द चढ़ानी होती है तो पहले कपड़े के पुस्तक के आकार के टुकड़े काट लिये जाते हैं। इसके बाद कपड़े को दफ्ती के टुकड़ों पर चिपकाया जाता है।

जब जिल्द तैयार हो जाती है तो उसे पुस्तक पर बैठाया जाता है। यह काम बहुत सावधानी से किया जाता है, क्योंकि पुस्तक की सुन्दरता बहुत कुछ उसकी जिल्द पर निर्भर करती है। जिल्द चढ़ाने के बाद पुस्तकों को बंडलों में बांध कर विक्रेताओं के पास भेज दिया जाता है।

—आरोग्य सदन,
गंज नं. १, पोस्ट-बेतिया,
जिला. प. चंपारन, बिहार.

☐

ऋषि भाषा के बंधन से मुक्त होते हैं। जो भी श्रेष्ठ चिंतन जहां कहीं भी किसी भी भाषा में किसी ने किया हो, वे उसे हृदयंगम करने की क्षमता रखते हैं।



वल्ली बच गयी

□ राजाजी

शांभशिवम् मुदलियार के पिता श्री शंकर मुदलियार संस्कृति और शिक्षा के बड़े प्रशंसक थे। उन्होंने बेटे को भी अपनी ही तरह पाल कर बड़ा किया। शंकर मुदलियार की जब मृत्यु हुई, तब शांभशिवम् मुदलियार का विवाह हुआ। लड़की सगे मामा की पुत्री थी, उम्र थी तेइस साल।

शांभशिवम् मुदलियार का विचार था कि जो पत्नी अच्छी तरह गा नहीं सकती, उसका होना, न होना बराबर है। अतः उन्होंने अपनी पत्नी गौरीयम्मा को संगीत सीखने के लिए कुंभकोणम् के पास स्थित एक प्रसिद्ध गायिका के पास इन हिदायतों के साथ भेजा कि 'जल्दबाजी करने की कोई जरूरत नहीं। अच्छी तरह सीख कर आना।' साथ में देखभाल के लिए एक नौकरानी भी भेजी गयी।

पत्नी ने छः साल शिक्षा प्राप्त की। ऐसा लगा जैसे सामान्य ढंग से गा

सकेगी। पर मुदलियार को विश्वास न आया, सो उन्होंने अपने सहायक को सही पता लगाने के लिए भेजा। सहायक महोदय गौरीयम्मा का गायन सुनकर आये और बोले– 'सुर तो ठीक ही है, पर ताल संतोषजनक नहीं हैं।' शांभशिवम् इस आक्षेप को अनसुना नहीं कर सके। कहला भेजा कि ऐसा है तो कहियेगा कि तिरुवारूर सुब्बैयर से शिक्षा प्राप्त करे।

गौरीयम्मा ने उनके कहे अनुसार तिरुवारूर में चार वर्ष बिताये। स्वयं सुब्बैयर ने खबर भेजी, 'गौरीयम्मा का ताल ज्ञान बढ़िया है। और दो वर्ष यहां रह जायेगी तो उसका गायन पूरी तरह दोष रहित हो जायेगा। पर क्या करूं वह जल्दबाजी करती है?'

मुदलियार ने जवाब में कहला भेजा कि 'जल्दी करने से क्या लाभ? संगीत में जल्दबाजी नहीं चलती। ठीक से दो साल तक शिक्षा प्राप्त करके ही लौटने की सोचे।'

दो वर्ष बीत गये। पुराने सहायक की मृत्यु हो गयी। नये सहायक आनंदरंगम् पिल्ले एक जाने-माने तमिल विद्वान के सुपुत्र थे। मुदलियार ने उनको कहला भेजा कि 'जाकर देख आइये, शिक्षार्जन कहां तक सफल हुआ है? निष्पक्षता से जांच कर आइये।'

वे गये और आकर बोले– 'उनके गायन में तो कोई कमी नहीं है। कोई भी विद्वान गौरीयम्मा की बराबरी नहीं कर



सकेगा, पर तमिल शब्दों के उच्चारण में गड़बड़ी है। जरा तेलुगु की बू है। गौरीयम्मा यालपाणम् भेजी गयीं। वहां दो वर्षों तक तोलकाप्पियम्, नन्नूल आदि तमिल ग्रंथों का गहन अध्ययन करके उत्तीर्ण हुई और वापिस अपने शहर लौट आयीं।

इस बीच मुदलियार के स्वास्थ्य में कुछ गिरावट की वजह से दो 'सिद्ध वैद्य' उन्हें देख गये। सिद्ध औषधि में निहित गर्मी के कारण कुछ अन्य समस्याएं पैदा हुईं। उसके चलते मुदलियार 'नेल्लै' के अस्पताल में दवा-दारू करने लगे। विदेश से लौटे डॉ. गोविंदन पिल्लै ने सारा दोष विषैली औषधियों और 'सिद्ध' चिकित्सा पद्धतिं पर मढ़ते हुए अस्वस्थता का कारण उनकी बढ़ती उम्र

को बताते हुए कहा कि अब स्वस्थ होना कठिन है ।

इधर गौरीयम्मा के लौटने की खबर पाते ही मुदलियार ने कहा कि 'अब मैं घर लौटता हूं । जैसा भगवान चाहेगा, वैसा ही होगा ।' और उन्होंने डॉक्टर से विदा ली ।

घर लौटने पर मुदलियार गौरीयम्मा को पहचान न सके । गौरीयम्मा भी पति को देखकर संशय में पड़ गयी कि क्या यही मेरे प्रियतम हैं? गाना-वाना बंद करके उन्होंने पति की सेवा प्रारंभ की । छः महीनों के अंदर मुदलियार का शरीर अपने आप बिना दवा-दारू के ठीक हो गया । दोनों बड़े प्रसन्न थे ।

सीखे हुए संगीत की बात न मुदलियार ने छेड़ी न गौरीयम्मा ने ही उठायी ।

बाद में एक बेटी का जन्म हुआ । बड़ी प्रसन्नता के साथ दोनों ने बच्ची का नाम 'वल्ली' रखा ।



वल्ली बड़ी हुई ।

मुदलियार ने कहा, 'पाठशाला जाने की जरूरत नहीं ।'

गौरीयम्माने बार-बार समझाया कि गांव के सभी बच्चे पाठशाला भेजे जाते हैं, पर कोई लाभ नहीं हुआ । मुदलियार ने साफ इन्कार कर दिया । शायद मन में सोच रहे थे कि 'मुझ पर जो गुजरी वही काफी हैं ।'

वल्ली बच गयी ।

(अनु. : राधा जनार्दन)

□

साथ तुम्हारा

अन्तस्तल तक साथ तुम्हारा,
गंगाजल तक साथ तुम्हारा ।
घनी उमस में जो घुमड़ा हो,
उस बादल तक साथ तुम्हारा ।
लावे जैसा पिघल रहा हो,
उस मरुथल तक साथ तुम्हारा ।
चाहे अनजानी हों राहें,
हर मंजिल तक साथ तुम्हारा ।
तुम जैसे मेरी परछाई,
हर महफिल तक साथ तुम्हारा ।
कितना ही गहरा हो सागर,
हर साहिल तक साथ तुम्हारा ।
दूर-दूर तक कुछ न दिखे पर,
टूटे दिल तक साथ तुम्हारा ।

— तारादत्त 'निर्विरोध'
१२८२, खेजड़े का रास्ता, जयपुर, राजस्थान

औरंगजेब के समय बना

एक विचित्र मंदिर

□ ललित शर्मा

'औरंगजेब' का नाम आते ही प्रत्येक व्यक्ति के मानस पटल पर एक क्रूर धर्मान्ध शासक की तस्वीर उभर कर आती है। यर्थाथतः निष्कर्ष यह निकलता है कि औरंगजेब की ख्याति मन्दिरों को धराशायी कराने वाले शासक के रूप में हुई।

लेकिन इसे आश्चर्य कहें या कुछ और, कि राजस्थान में दक्षिण-भारत की भांति एक ऐसा स्थान भी है, जहां औरंगजेब के शासन में एक जैन-मन्दिर का पूरा निर्माण हुआ। यह स्थान है, राजस्थान के हाड़ौती अंचल के झालावाड़ जिले की खानपुर तहसील के 'चांदखेड़ी' नामक गांव में। चांदखेड़ी का यह विचित्र जैन मन्दिर मुख्यालय झालावाड़ से २२ मील दूर सुदूर पूर्व की ओर अवस्थित है। यह विशाल क्षेत्र 'अतिशय क्षेत्र' के नाम से विख्यात खानपुर कस्बे से मात्र दो फर्लांग की दूरी पर रूपली नदी के तट पर अवस्थित है।

मन्दिर के भू-गर्भ में एक विशाल तल-प्रकोष्ठ है, जिसमें भगवान आदिनाथ स्वामी की लाल पाषाण की पद्मासन प्रतिमा प्रतिष्ठित है। श्रवण-बेलगोला की 'बाहुबली' की प्रतिमा के

उपरान्त भारत की यह द्वितीय मनोज्ञ प्रतिमा है।

विचित्र कथा : उक्त प्रतिमा इस क्षेत्र से ६ मील दूर बारह-पाटी पर्वतमाला के एक हिस्से में दबी हुई प्राप्त हुई थी। श्रीकिशनदास बघेरवाल को एक दिन स्वप्न में बारह-पाटी से प्रतिमा को यहां लाकर विराजमान कराने का संकेत मिला। तदनुरूप प्रतिमा बैल-गाड़ी में रख कर सागोंद लायी जा रही थी, कि मार्ग में रूपली नदी पर हाथ-मुंह धोने हेतु गाड़ी ठहरायी गयी।

समयोपरान्त बैल जोतकर गाड़ी चलाने का उपक्रम किया गया तो गाड़ी एक इंच भी न सरककर अविचल हो गयी। गाड़ी को गति देने के लिए बैलों की अनेक जोड़ियों का प्रयोग किया, परन्तु वह निष्फल रहा। अतः नदी के ही पश्चिमी भाग में उक्त मन्दिर का निर्माण श्रीकिशनदास बघैरवाल ने आरम्भ किया। वे उस समय कोटा राज्य (स्टेट)के दीवान थे।

मन्दिर का विचित्र निर्माण : उस समय औरंगजेब ने अपने राज्यों में मन्दिर बनवाने की मनाही कर रखी थी। जिन लोगों ने मन्दिर बनाने का प्रयास किया, उन पर अत्याचार कियें जाते थे। 'चांदखेड़ी' में भी विशाल मन्दिर बनने की बात औरंगजेब जैसे सतर्क बादशाह से कैसे छुपी रह सकती थी। लेकिन इस समय वह दक्षिण में युद्ध में व्यस्त था, और कोटा के महाराव किशोरसिंह उसकी सेवा कर रहे थे। इसलिए उसने 'चांदखेड़ी' के मन्दिर को बनते हुए नहीं तुड़वाया। लेकिन यह तो सत्य ही था कि कोटा के हाड़ा राजपूत शासकों ने अकबर, शाहजहां, जहांगीर व औरंगजेब, जैसे शासकों के लिए प्राणों को जोखिम में डालकर उनकी ओर से युद्ध किये थे। अतएव मुगल-शासक हाड़ाओं से अत्यधिक प्रभावित थे।

लेकिन अजमेर का सूबेदार बार-बार अहदियों को मन्दिर बनाना बन्द करने के लिए भेजा करता, और ताकीद किया करता कि मन्दिर तुड़वा दिया जाये। ऐसे समय में सूबेदार को सन्तुष्ट रखना असम्भव बात थी। फिर भी बघेरवाल दीवान को यह भय था कि किसी दिन मन्दिर न टूट जाये, इसलिए यह 'विचित्र' प्रकार का बनाया गया। असली मन्दिर जमीन के गर्भ-गृह में बनाया गया, जिसमें पवन तथा प्रकाश का प्रबन्ध नहीं है।

क्षेत्र-दर्शन : क्षेत्र के मुख्य द्वार से प्रवेश करने पर एक किलेनुमा अहाता है। बाहर से उसकी बनावट 'मस्जिदाकार' है, जो सम्भवतया आक्रांता से बचाव के लिए प्रतीत होती है। इसी के मध्य में 'संमोशरण' (महावीर स्वामी को कैवल्य-प्राप्ति का प्रतिरूप) का भव्य मन्दिर है, जिसे

मूर्ति-कला में भी बेजोड़ कहा जा सकता है। इसकी प्रतिष्ठा आचार्य देशभूषण महाराज के सान्निध्य में सम्पन्न हुई थी। मन्दिर के मध्य में संगमरमर का सुन्दर श्वेत स्तम्भ है। इसी की चोटी पर महावीर की शांत-चित अहिंसात्मक भावना प्रसारित करती सुन्दर प्रतिमा है।

समोशरण दर्शन के पश्चात दायीं ओर के अहाते में जाते हैं, जिसके चारों ओर यात्री-निवास के कमरे बने हुए हैं। इसी अहाते के मध्य में जिनालय बना हुआ है। मन्दिर के चारों कोनों के ऊपर छतरियां बनी हुई हैं। मन्दिर के द्वार मंडप में १० फुट ऊंचा चौखुटा कीर्ति स्तम्भ है। जिसके चारों ओर दिगम्बर जैन तीर्थंकरों की प्रतिमायें उत्कीर्ण हैं। मध्य में तीन ओर १ फुट चौड़ा, १ फुट ऊंचा शिलालेख अंकित है।

द्वार में प्रवेश करने पर मन्दिर का अन्तर्भाग आता है, जो प्रत्यक्ष में वास्तविक मन्दिर की अनुभूति कराता है। इसी के दक्षिण भाग में पंचवेदियां एवं एक गन्धकुटी बनी हुई है, इनमें २३ तीर्थकरों की तथा १ साधु की प्रतिमा हैं। गन्धकुटी में सुपार्श्वनाथ स्वामी की पद्मासन प्रतिभा विराजमान है। इस गर्भ-गृह में ३ वेदियां हैं। प्रथम वेदी में ५ पाषाण प्रतिमाएं हैं। इसी के पास ४ इंच ऊंचा एक पाषाण चैत्य है, जिसमें सर्वतो- भद्रिका प्रतिमा व ३ धातु प्रतिमा हैं।

द्वितीय मुख्य वेदी में 'बाहुबली' की ५ फुट की ५ कायोत्सर्ग मुद्रा की खड्गासन प्रतिमाएं हैं।

इस गर्भ-गृह के वाम-पक्ष में एक सोपान-मार्ग बना हुआ है, जो मुख्य-तल-प्रकोष्ठ को जाता है। इसी मार्ग के अन्दर बायीं ओर की दीवार में २ फुट ६ इंच के शिलाफलक में 'चक्रेश्वरीदेवी' की प्रतिमा है। सामने की दीवार पर २ फुट ४ इंच ऊंचे फलक में 'चतुर्भुजी-अम्बिका' बनी हुई हैं। बायीं ओर गर्भ-गृह में ३ फुट ४ इंच ऊंचे व ७ फुट ३ इंच चौड़े शिलाफलक में २ फुट ९ इंच ऊंची खड्गासन तीर्थंकर प्रतिमा है। इसके अतिरिक्त इसमें ५५ तीर्थंकर प्रतिमाएं ध्यानासनों में बनी हुई हैं। इसी के परिसर में गजमाला लिये 'चमरेन्द्र-ब्याल' तथा दोनों ओर 'यक्ष-दम्पत्ति' हैं।

मन्दिर के मुख्य गर्भ-गृह में विशाल वेदी पर मूलनायक 'भगवान आदिनाथ' की पद्मासन प्रतिमा विराजमान है। प्रतिमा के वक्ष पर "श्री वत्स" है। हाथ-पैरों में पद्म बने हुए हैं।

१८वीं शती में 'चांदखेडी' को वही स्थान प्राप्त था, जो प्राचीन काल में अयोध्या, गिरिनार तथा शत्रुंजय, आदि पवित्र स्थानों को था।

— **शर्मा सदन**, ७-मगेलपुरा स्ट्रीट
झालावाड़-३२६ ००१ (राज.)

प्राचीन स्वास्थ्य रक्षक भस्म प्रयोग

□ **उमेश पाण्डे**

प्राचीनकाल से ही अनेक साधु-महात्मा लोग अपने शरीर पर भस्म या भभूत चुपड़ते आ रहे हैं। तमाम मंदिरों में प्रसाद के साथ भभूत मिलाकर खिलाने-खाने की परंपरा आज सदियों से चली आ रही है। ये क्रियाएं ढकोसला नहीं हैं, बल्कि इनके पीछे ठोस वैज्ञानिक कारण हैं, मसलन – देह पर मली हुई भस्म जो कि मुख्यतः कण्डे की भस्म होती है, शरीर में शोषित हो जाने पर त्वचा के रोगों से शरीर की रक्षा करती है। इसी प्रकार मस्तक पर लगायी गयी भस्म शिरोरोगों से मनुष्य की रक्षा करती है। अस्तु।

आयुर्वेद में अनेकों धातुओं की भस्मों का शरीर रोगों पर होने वाले प्रभावों का विस्तृत विवेचन किया गया है। धातुओं की भस्मों में रोगों को हरने की अद्भुत क्षमता होती है, किन्तु जहां एक ओर उन भस्मों को देने की एक सीमा होती है, उन्हें रोगी को देने में रोगी का बलाबल देखना पड़ता है और वे महंगी भी होती हैं, वहीं दूसरी ओर अनेक सामान्य वनस्पतिज पदार्थों एवं प्राणी पदार्थों की भस्मों के भी अनेक प्रयोगों का वर्णन प्राचीन गंथों में मिलता है, जिनके द्वारा शरीर के तमाम रोगों का बड़ी ही सरलता से शमन किया जा सकता है। चूंकि ये भस्में सर्वथा निरापद पदार्थों से निर्मित होती हैं। अतः इनके प्रयोग से किसी प्रकार की हानि तो संभव है ही नहीं। इन भस्मों का यथाविधि प्रयोग करके कोई भी व्यक्ति इनके अनुकूल प्रभावों को देख सकता है।

बड़ के फलों को सुखाकर उन्हें जला दें। इस प्रकार प्राप्त भस्म को घावों पर लगाने से वे शीघ्र अच्छे हो जाते हैं। यही कार्य पीपल की छाल की भस्म

अथवा चने की भस्म भी करती है। इन भस्मों को सीधे ही अथवा खोपरे के तेल के साथ लगाया जा सकता है। इसी प्रकार जो घाव भरते न हों अथवा जिन घावों पर चमड़ी न आने पा रही हो ऐसे घावों पर चमड़े को जलाकर उसकी भस्म खोपरे के तेल के साथ मिलाकर लगाने से वे जल्दी-जल्दी भरने लगते हैं तथा घाव पर शीघ्र ही सामान्य चमड़ी आ जाती है।

हरिद्रा अर्थात् हल्दी की गांठों को जलाकर उनसे प्राप्त भस्म अथवा सफेद आंकड़े के फूलों को सुखाकर उनसे प्राप्त भस्म की १ या २ रत्ती मात्रा जल से लेने से श्वास तथा कफ में तुरंत आराम मिलता है। इसी प्रकार बेलपत्रों की भस्म बनाकर उसकी २ रत्ती मात्रा पानी के साथ लेने से खांसी में तुरंत आराम हो जाता है।

छोटे बच्चों को सर्दी, खांसी अथवा श्वास में परेशानी हो जाने की स्थिति में छोटी पीपल को आग में जलाकर उसकी भस्म की एक रत्ती मात्रा शहद. में मिलाकर चटाने से उन्हें तुरंत आराम मिल जाता है। उदुम्बर अर्थात् गूलर की भस्म गले एवं जिह्वा के रोगों में अत्यंत लाभदायक है। इसके लिए गूलर की थोड़ी-सी भस्म जल में मिलाकर उससे गरारा करना चाहिये। इससे टॉन्सिलस, गला बैठना, गला दुखना तथा जिह्वा-रोगों में बहुत आराम मिलता है। गरारे के साथ-साथ लगभग २ रत्ती भस्म दिन में २ बार ज़ल के साथ लेना भी चाहिये।

बरसात के दिनो में पैर की अंगुलियों के बीच की त्वचा सड़ने लगती है। इसके परिणाम स्वरूप पैर की अंगुलियां एक दूसरे से चिपकने भी लगती हैं। इन सड़ने वाली जगहों पर तेंदू के पत्तों की भस्म को बुरकाने से वे अच्छी हो जाती हैं।

मूली के पत्तों को सुखाकर एवं जलाकर बनायी गयी भस्म अथवा स्वयं मूली को पहले धूप में भलीभांति सुखाकर फिर उससे बनायी गयी भस्म की दो से चार रत्ती मात्रा सुबह शाम जल के साथ लेने पर रक्तार्श तथा सूजाक में फायदा होता है। प्रारंभिक उक्त रोग तो इस प्रयोग से एक हफ्ते में ही ठीक हो जाते हैं।

कई लोग अत्यधिक पसीने से परेशान रहते हैं। अरहर की दाल (तुवर की दाल)की भस्म की ३-३ रत्ती मात्रा कुछ दिनों तक सुबह शाम लेकर इस बीमारी से मुक्त हुआ जा सकता है।

वायुविकार से पीड़ित व्यक्तियों के लिए बेल की जड़ को सुखाकर उसकी भस्म बनाकर उस भस्म की लगभग ४-४ रत्ती मात्रा कुछ दिनों तक लेना काफी लाभदायक रहता है। इसी प्रकार जामुन की गुठली की भस्म मधुप्रमेह का हरण करती है।

दाद, खाज-फोड़ा-फुन्सी के लिए भी भस्मों का एक सरल प्रयोग है। इनके लिए लाल अथवा पीले कनेर की पत्तियों की भस्म को खोपरे के तेल में मिलाकर संबंधित स्थान पर लगाया जाता है। इस प्रयोग से बहुत ही जल्दी ये अच्छे हो जाते हैं।

मस्तिष्क में तरावट बनी रहे तथा स्मरण शक्ति भी तीव्र हो, इसके लिए एक सेव को जलाकर पीने के पानी के मटके में डाल दें तथा दिन भर इसी मटके का पांनी निथार कर पियें। इस प्रयोग में प्रतिदिन नया सेव लेना पड़ता है।

उपरोक्त वनस्पिति-भस्मों के अलावा कुछ प्राणी-भस्में भी काफी उपयोगी होती हैं।

सर्प की हड्डी की भस्म को तेल में मिलाकर मालिश करने से कंठमाला, घेंघा जैसी व्याधियों में आराम होता है।

केकड़े की भस्म योग्य अनुपात में सेवन करने से पथरी दूर होती है। बिच्छू की भस्म तेल में मिलाकर इस तेल की मालिश करने से जोड़ों की अकड़न या ऐंठन दूर हो जाती है।

शंख की भस्म को पान के साथ खाने से मृगी रोग में आराम पड़ता है।

हाथी दांत की भस्म तेल में मिलाकर लगाने से गंजपन रुक जाता है अर्थात् बालों का झड़ना रुक जाता है। यही नहीं नये-नये गंजपन में इस प्रयोग से बाल भी पुनः उग सकते हैं।

हरिण ऋंग की भस्म पान के साथ लेने पर सर्व ज्वर तथा हृदय रोग में लाभ मिलता है।

इसी प्रकार बारहसिंगा के सींग की भस्म प्याज के रस में घोटकर लेने से श्वास रोग में लाभ होता है। इन भस्मों का एक-एक रत्ती मात्रा ग्रहण करने से ही ये पर्याप्त लाभ दर्शाने लगती हैं। **— ३१९, म. गां. मार्ग, मल्हारगंज, इन्दौर, म.प्र.**

□

कभी - कभी आते हैं

आचार्य नरेन्द्र देव उन दिनों बनारस विश्वविद्यालय के उपकुलपति थे। एक बार दोपहर का भोजन करने के लिए डॉ. सम्पूर्णानंदजी उनके निवास पर आमंत्रित थे। मैं भी संयोग से उस समय वहीं था। दोनों मनीषी भोजन कर रहे थे, तभी बाहर मे एक गधे के रेकने की आवाज आयी। डॉ. सम्पूर्णानंदजी ने कहा - 'आचार्यजी, यहां गधे बहुत रहते हैं।' आचार्यजी ने तुरंत उत्तर दिया - 'नही, कभी-कभी आते हैं।' और दोनों ही महान बिचरक खिलखिला कर हंस पड़े।

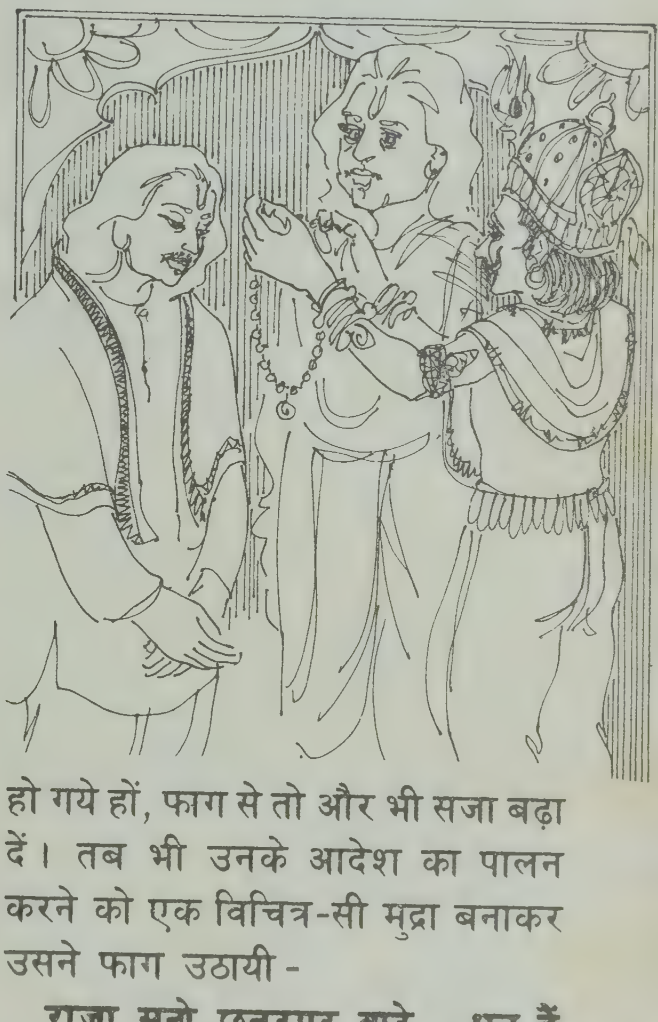
— दाऊदयाल मेहरा

अध्याय - ४३

सतत प्रयास करने पर भी जो काम नहीं होता, समय आने पर प्रायः बिना प्रयास ही हो जाता है। ईसुरी के छूटने का समय आ गया। एक दिन प्रभात में ज्योंही कैदियों की टोली राजप्रसाद के सामने लान में काम करने को पहुंची महाराजा साहब भी दैवयोग से राजप्रसाद से बाहर आ गये। कैदियों पर दृष्टि जाते ही उन्हें पंडित गंगाधर की बात याद आ गयी। एक सिपाही को बुलाते हुए बोले, 'क्यो रे! इन कैदियों में कोई ईसुरी नाम का कैदी है?' सिपाही सैल्यूट मारता हुआ बोला, 'है सरकार! क्या उसे हाजिर करूं?'

महाराजा साहब का आदेश पाते ही वह ईसुरी को उनके सामने ले आया। एक सुन्दर युवक, गौरवर्ण, लम्बा कद, इकहरा शरीर, कमर में एक लंगोटी मात्र सिर के बाल बढ़े हुए, कुछ-कुछ निकलती हुई दाढ़ी-मूंछ भी। उसे देखते ही महाराजा साहब एक विनोद भाव से बोले, 'क्यों रे! तूने कोई फाग मुझे लिखकर भेजी थी? सुना उसे, क्या थी वह!'

ईसुरी का शरीर कांप रहा था। उसे डर था कि महाराजा साहब अप्रसन्न न



हो गये हों, फाग से तो और भी सजा बढ़ा दें। तब भी उनके आदेश का पालन करने को एक विचित्र-सी मुद्रा बनाकर उसने फाग उठायी -

राजा सुनो छतरपुर वारे - धन हैं हुकुम तुम्हारे,
दिन बूड़े से बैड़ देत हैं - लगा कुची सें तारे,
सेर सेर के पड़े पैकड़ा - लै लये प्राण हमारे,
तक्कन में हो हेरे ईसुर - देत सन्तरी पारे।

फाग सुनते ही महाराजा साहब के मुख पर मुस्कान दौड़ गयी। बोले, 'और भी कुछ फागें बनायी हैं कि एक यही! और सुना कुछ।'

ईसुरी को कुछ ढाढ़स बंधा। समझ गया - महाराजा साहब प्रसन्न हैं। डरने की कोई आवश्यकता नहीं। फिर उसने अपना स्वर साधा और फाग उठायी -

ऐसी बे इन्साफी आंसी - प्यारी कह दो सांसी,
कायम करी रूप रियासत में - अदा अदालत खासी,
पठवा दये नैन के सम्मन - चतुरई के चपरासी,
मन मुद्दई खां कैद कर लओ - सुरत हथकड़ी गांसी,
ईसुर कहबे गुना लगा दई - दफा तीन सौ ब्यासी।

'वाह। वाह। बहुत सुन्दर! रूप रियासत में अदा अदालत। नयनों के सम्मन चतुराई के चपरासी। मन मुद्दई। सुरत की हथकड़ियां। क्या रूपक रहा। दफा तीन सौ ब्यासी खूब लगायी!'

इसी समय भाग्यसे पंडित गंगाधर भी आ गये। महाराजा साहब उन्हें देखते ही बोले, 'पंडितजी! यह तो कमाल की फाग लिखता है। सुना रे वही फाग फिर सुना।' ईसुरी ने फिर वही फाग सुनायी।

पंडित गंगाधर बोले, 'सरकार! इसकी फागों में आग भरी है और यह अपनी फागों का ही शिकार हुआ है। फागों की बदौलत ही जेल में आया है। इसने अपनी फागों से अपने लिए बड़ा उपद्रव खड़ा कर लिया। वैसे इसने किया कुछ नहीं है। किसी की जान नहीं ली, अपनी ही जान हाथ में लिये फिरता है। उस रजऊ की फागें सुना ईसुरी, जिसके कारण इतना बड़ा तूफान उठ खड़ा हुआ।

ईसुरी ने फिर मुंह बनाया और फाग उठायी -

जौ जी रजऊ रजऊ के लाने - का काऊ सें काने,
जौ लौ जीने जियत जिन्दगी - रजऊ के हेत कमाने,
पैलें भोजन करें रजौआ - पाछें कें मोइ खाने,
रजऊ रजऊ कौ नाम ईसुरी - लेत लेत मर जाने।

'बहुत अच्छा। बहुत अच्छा। अच्छा संकल्प है, अच्छा आत्मोत्सर्ग! अपनी प्रियतमा के प्रति ऐसी ही धारणा होनी चाहिये। और सुना -'

बिधना करी देह न मोरी - रजऊ के घर की देरी,
आउत जात चरन की धूरा - लगतजात हर बेरी
लागो अरन कान के ऐंगर - बजन लगी बजनेरी
उठन चहत अब हाट ईसुरी - बाट बहुत दिन हेरी।

'कमाल। कमाल! पंडितजी। इस लड़के में तो बड़ी प्रतिभा छिपी है। किसंने इसे कैसे जेल में डाल दिया? क्या इसने वास्तव में कोई दंडनीय काम किया था? किसी की चोरी की, किसी पर डाका डाला?'

'मैंने विनय की थी न,' पंडित गंगाधर बोले, 'इसने कुछ नहीं किया। बड़े लोगों ने अपनी इज्जत बचाने के लिए इसके सिर अपना अपराध मढ़ दिया। बड़े लोग ऐसा ही करते हैं। उनके नौकर ही उनके बजाय जेल काटते हैं। ईसुरी भी अपने मालिक के बजाय जेल काट रहा है।'

यह सुनते ही महाराजा साहब एक सिपाही को बुलाते हुए बोले, 'जा रे! अपने जेल दारोगा को बुला ला। साथ ही किसी लुहार को भी, जो बेड़ियां काट सके।'

सैल्यूट मारता हुआ सिपाही भागा। सब कैदी आश्चर्य से देख रहे थे। महाराजा साहब गंगाधर को साथ लेकर महल के अन्दर चले गये। ईसुरी कैदियों की टोली में आकर लान में काम करने लगा। सिपाही बोला - 'ईसुरी! अब बैठ मौज से। अब तो तू छूटने वाला है। अच्छा तेरा भाग्य जागा।'

परन्तु ईसुरी कुछ न बोला। काम करता रहा। इसी समय अकस्मात कहीं से एंक बड़ा काला सर्प आया और ईसुरी की पीठ पर चढ़ गया। महाराजा साहब और गंगाधर पास ही महल के एक हाते के भीतर खड़े थे। सहसा उनकी दृष्टि सर्प पर गयी। दोनों एक साथ चिल्लाये - 'बच ईसुरी! तेरे ऊपर सर्प चढ़ रहा है!'

सर्प ईसुरी की पीठ पर से सिर की ओर बढ़ा और सामने सीने से उतर कर सीधा चला गया। सब कैदी तथा सिपाही भयभीत से भौचक्के से देखते रह गये। ईसुरी ने भगवान को नतमस्तक किया और तत्काल फाग उठायी -

सिर पर करी सरप ने वामी - धन्य गरुड़ के गामी,
पीठ पछाड़े हो चढ़ आओ - उतरन उतरो सामी,
न हम करी न दई करन हूं - भगति रहो मैं कामी,
काहे सैं रीझे ईसुरी पै - करत जात हौ नामी।

यह फाग सुनते ही महाराजा साहब गद्गद हो गये। समीप आ गये और बोले - 'ईसुरी फिर इसी को सुना' ईसुरी ने फिर गायी और महाराजा साहब की आंखों में आंसू आ गये। वे बोले, 'पंडितजी! यह साधारण घटना नहीं। इतना बड़ा काला सांप पीठ पर से चढ़ा और सामने सीने पर से उतरा। ईसुरी ने चीख भी न मारी। जान पड़ता है ईसुरी कोई दैवी पुरुष है। यह आगे चल कर संसार में चमकेगा। इसे ईश्वर ने सन्मान दिया है। भगवान शंकर ने इसे अपनी माला पहनायी है। पंडितजी, जाओ रानी से इसके लिए एक अच्छा उपहार ले

आओ। एक स्वर्ण का हार। सर्प के स्थान पर उसके गले में उसे डाला जायेगा।'

ईसुरी मूर्तिवत नतमस्तक खड़ा था। उसकी आंखों से आंसू टप-टप गिर रहे थे। भगवान के प्रति कृतज्ञता के आंसू।

थोड़ी ही देर में जेल दारोगा एक लुहार को लिये हुए दौड़ा आया। उसने महाराजा को सैल्यूट किया और आदेश की प्रतीक्षा में खड़ा हो गया। महाराजा साहब उसे देखते ही बोले, 'कटवाओ इस कैदी की बेड़ियां। मैं न समझता था कि मेरे राज्य में निर्दोष व्यक्तियों को भी इतना बड़ा कड़ा दंड दे दिया जाता है। अन्धेर की कोई सीमा नहीं। इसकी फाइल मेरे पास भेजना।' लुहार ने बेड़ियां काट दीं।

इतने में गंगाधर एक थाल में रक्खे हुए एक दुशाला, एक थान कपड़ा तथा एक कीमती स्वर्णहार लेकर आ गये। साथ ही रोरी भी।

महाराजा साहब का संकेत पाकर पंडितजी ने ईसुरी को समीप बुलाया और बोले, 'महाराजा साहब तुम्हारी फागों से प्रसन्न हैं। तुम्हारी प्रतिभा का महाराजा साहब ने मूल्यांकन किया है, तुम्हारे कवि को परखा है, तुम्हारी कसमसाती कविता को भी।' ऐसा कहते हुए पंडित गंगाधर ने ईसुरी के ललाट में रोरी से तिलक लगा दिया।

महाराजा साहब ने स्वर्णहार लिया और ईसुरी के कंठ में डाल दिया। कैदियों ने, सिपाहियों ने तथा सभी उपस्थित लोगों ने हर्ष से करतल ध्वनि की और महाराजा साहब की जय-जय बोली। पंडितजी ने ईसुरी को दुशाला उढा दिया और वह थाल में रक्खा कपड़ा भी उसे दे दिया।

सिपाही कैदियों को लेकर जेल को गये। ईसुरी राजप्रासाद की सीमा से बाहर निकला। उसके साथ एक चपरासी लगा दिया गया था। बाहर दलीं उसकी प्रतीक्षा में खड़ा था। ईसुरी उसे देखते ही उसके पैरों पर गिर पड़ा। दलीं ने उसे उठाकर हृदय से लगा लिया। दोनों की आंखों से मूक भावनायें आंसू बनकर बहने लगीं। दलीं ईसुरी को लेकर पंडितजी की बगिया को गया। रोज गोपाल पंडित कैदियों के साथ काम करने को जाया करते थे। पर दुर्भाग्य से आज उनकी ड्यूटी न लगी थी। सारे नगर में ईसुरी की चर्चा चलने लगी। तरह-तरह का तर्क-वितर्क। हत्या का अपराधी पुरस्कार के साथ छोड़ दिया गया। महाराजा साहब भी विचित्र औघड़दानी हैं।

ईसुरी के चले जाने पर महाराजा साहब गंगाधरजी से बोले, 'क्यों पंडितजी, यह रजऊ कौन है, जिसको सम्बोधित कर ईसुरी ने फागें बनायी हैं। क्या कोई ईसुरी की विशेष प्रेमिका है या साधारण सम्बोधन है?'

'सरकार!' गंगाधर हाथ जोड़कर

बोले, 'साधारण सम्बोधन नहीं। ईसुरी की विशेष प्रेमिका है। यह उस कानूनगो की ही पुत्रबधू है। कानूनगो का लड़का बब्बू ही मारा गया है। रजऊ और ईसुरी बचपन के ही साथ खेलने वाले हैं। बचपन से ही प्रेम बढ़ा है। परन्तु जाति-पांति के बंधन ने उनका विवाह न होने दिया। रजऊ की शादी बब्बू के साथ हुई। ईसुरी उसके वियोग में गीत गाता ही रह गया। ईसुरी की भी शादी हुई। पर उसकी स्त्री भी आग में जल कर मर गयी। यहां रजऊ भी विधवा हो गयी। प्रकृति ने मनुष्य के विधान को चुनौती-सी दी। विधान तो प्रकृति का ही सही है। प्रेम प्रकृति की देन है। जहां प्रेम है वहां सम्बन्ध होना ही चाहिये, परन्तु, सामाजिक रूढ़ियां इस प्रेम के मार्ग का रोड़ा बनती हैं। प्रकृति भी बदला लेती है। ऐसे जोड़ों को तोड़ देती है, जिनका मेल रूढ़ियों के आधार पर होता है।'

'तो, पंडितजी!' महाराजा साहब बोले, 'अब दोनों तो खाली हो गये। करा दो न इनका गठबंधन। प्रकृति की प्रतिज्ञा रह जाय। प्रेम की विजय हो जाये। समाज के सामने एक आदर्श आ जाये। वास्तव में यह सोचने की बात है कि जिस व्यक्ति को उसकी अपनी प्रेमिका नहीं मिलती, उसके साथ कितना बड़ा अन्याय होता है। क्या यह अन्याय न्याय नहीं चाहता? इस न्याय को दिलाने के लिए कोई अदालत भी तो नहीं। जाति-पांति के बन्धन झूठे ही तो हैं। मनुष्य मात्र एक है। स्त्री-पुरुष का जोड़ा ही प्रकृति चाहती है और प्रेम के आधार पर। जन्मकुंडलियों के आधार पर नहीं। आकाश के ग्रह तारों के आधार पर नहीं। पृथ्वी के आंधी पानी के आधार पर नहीं। इस दिशा में भी न्याय जरूरी है, इसके लिए भी अदालत होनी चाहिये।'

'सरकार ही तो अदालत हैं,' पंडितजी ने हाथ जोड़कर कहा, 'जो फैसला सरकार कर देंगे उसे चुनौती देने वाला कौन है? कहावत है राजा करे सो न्याय। आपका जो आदेश होगा वह समाज के लिए एक आदर्श बनेगा। समाज की दिशा बदलेगी। रूढ़ियों में प्रगति के नये अंकुर फूटेंगे। समाज के विवेक में वृद्धि होगी। मनुष्य नये ढंग से कुछ सोचेगा। क्रान्ति की ओर कदम बढ़ायेगा। श्रीमान् का कुछ आंदेश तो हो।'

'तो, पंडितजी,' महाराजा साहब बोले, 'मैं तो समझता हूं कि ईसुरी और रजऊ का अब विवाह हो जाना चाहिये। यह न्याय होगा। जो उनके मार्ग में रोड़ा के रूप में रक्खे गये उन्हें नियति हरा ले गयी। अब भी मनुष्य की बुद्धि न जागे तो कहना होगा कि मनुष्य के बुद्धि है ही नहीं।'

'श्रीमान!' पंडितजी ने कहा, 'यह न्याय है। आपका आदेश है तो यह होगा।'

अध्याय - ४४

मेघ फटे नहीं कि निर्मल आकाश निकला। ईसुरी की ग्रह-दशा बदली। पंडित गंगाधर के सामने उसके पुनर्विवाह का प्रश्न था। महाराजा साहब का आदेश। उनके मस्तिष्क में एक नया ही चित्र उभर रहा था। उनकी अपनी बगिया से ही ईसुरी के पुनर्विवाह का आयोजन एक विशेष धूमधाम के साथ किया जावे। राज्य के सभी प्रतिष्ठित नागरिकों को आमंत्रित किया जावे। महाराजा साहब भी उसमें पधारें। नव वर-वधू को अपना शुभाशीष दें, ऐसा हो जावे तो कैसा अच्छा रहे। इस विचार की प्रेरणा से उन्होंने ईसुरी और दलीं को अपनी बगिया में ही रोक लिया और वे अपने आयोजन को सकारता देने के लिए सभी सम्भव प्रयत्न करने लगे।

एक दिन वे बगौरा गये और कानूनगो के घर पहुंचे। कानूनगो ने उन्हें बड़ी आवभगत से लिया और दोनों ही चौपाल में पड़े हुए तखत पर बैठ गये। पंडितजी उनकी ओर देखते हुए बोले, 'कानूनगो साहब! मैं एक अभिप्राय से आपके पास आया हूं, महाराजा साहब का भेजा हुआ। महाराजा साहब ईसुरी की गुण-गरिमा से बहुत ही अधिक प्रभावित हुए हैं। जो सन्मान उन्होंने ईसुरी को प्रदान किया है, उसे आप सुन ही चुके हैं। उन्होंने ही क्या, भगवान शंकर ने भी उसे प्रतिष्ठा प्रदान की है। उसके गले में भयंकर काले सर्प की माला पहनायी। इससे स्पष्ट है कि ईसुरी कोई साधारण व्यक्ति नहीं, उसका भविष्य उज्जवल है। महाराजा साहेब के सन्मान से ही वह प्रकाश में आ गया, आगे चल कर और कीर्ति कमायेगा। अपने व्यक्तित्व को अजर-अमर बना कर रहेगा।'

कानूनगो आंखों से प्रसन्नता व्यक्त करते हुए बोले, 'पंडितजी! ईसुरी के विषय में सब कुछ सुन चुका हूं। मानता हूं कि वह कोई असाधारण व्यक्ति है और उसका भाग्य उज्जवल है। महाराजा साहब स्वयं कल्पवृक्ष हैं। उनकी छाया में जो कोई भी पहुंच जायेगा कौन सा मनोवांछित पदार्थ न पा जायेगा। ईसुरी के अब दिन फिरे हैं।'

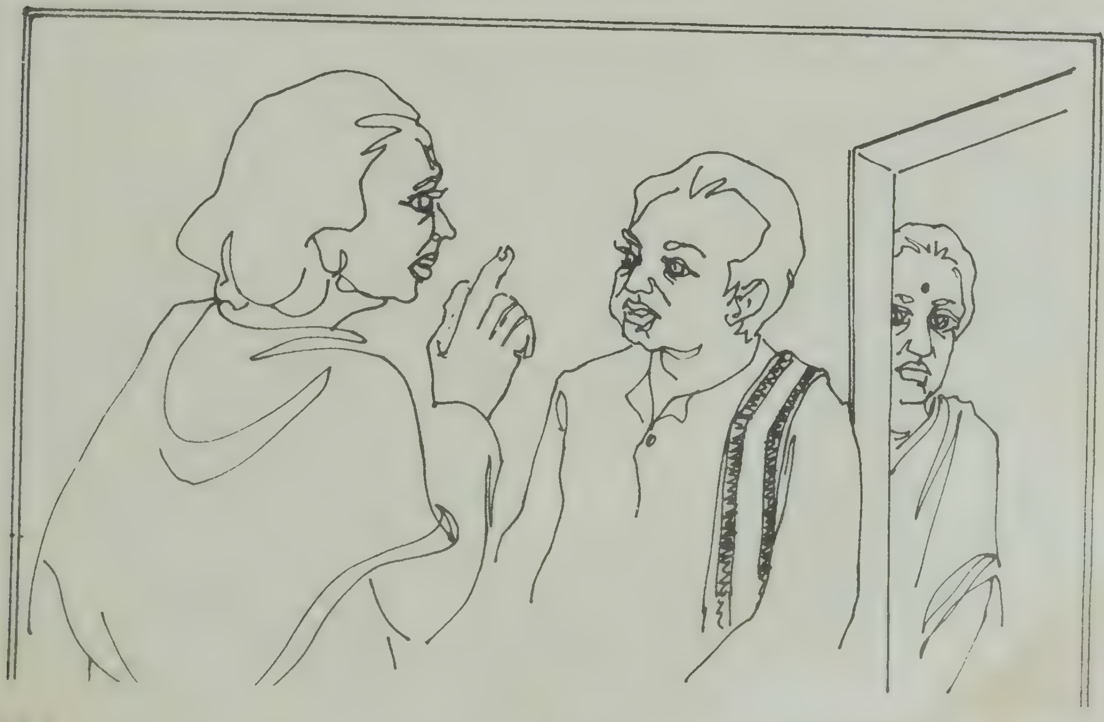
'हां तो!' पंडितजी बोले, 'महाराजा साहब का विचार है कि ईसुरी और आपकी वधू रजऊ का पुनर्विवाह सम्पन्न करा दिया जाये। प्रकृति की यही योजना रही है। पर अल्प बुद्धि मानव ने उसके मार्ग में बाधा डाली और इससे इतना बड़ा काण्ड घटित हुआ! परस्पर प्रेम ही विवाह-शादी का सच्चा आधार है। जाति-पांति पाखण्ड है। बोलिये आपके क्या विचार हैं?'

यह सुनते ही कानूनगो कुछ गम्भीर हो गये, जैसे कुछ सोचने लगे हों, फिर आंखें मिचकाते हुए बोले, 'पंडितजी! यदि महाराजा साहब की ऐसी इच्छा है तो

कौन रोक सकता है ? मुझे सहर्ष स्वीकार है । अच्छा है रजऊ जिसके लिए पैदा हुई है उसी के पास जावे । इस घर में अब उसे रखना कोई न्याय संगत नहीं जान पड़ता। यह सामाजिक अन्याय है, जिसको दूर करने के लिए कोई अदालत नहीं। महाराजा साहब ही एक मात्र अदालत हैं । अच्छा है, महाराजा साहब समाज के सामने एक क्रान्तिकारी आदर्श उपस्थित करा देवें । हां पंडितजी ! मैं तो तैयार हूं परन्तु ईसुरी के पिता को भी तो राजी करना होगा। वे ही सबसे बड़ी बाधा डालेंगे। पुराने विचारों के व्यक्ति हैं, ढकोसलेबाजी में विश्वास रखते वाले । जाति-पांति के झूठ गौरव से फूले हुए।'

'खैर !'पंडितजी बोले, 'वे भी तैयार हो जावेंगे। महाराजा साहब की इच्छा के विरुद्ध कैसे खड़े हो सकेंगे ? मेरा विचार है कि यह शुभ कार्य सदर से ही हो। ईसुरी और दलीं मेरी बगिया में टिके हुए हैं, वहीं से इस आयोजन को सम्पन्न कराऊंगा। राज्य के सभी प्रतिष्ठित नागरिक आमंत्रित किये जावेंगे - महाराजा साहब भी पधारेंगे। धूमधाम से कार्य संचालित होगा। सरकारी बैण्ड बजेगा, आतिशबाजी छूटेगी, सच्ची शादी यह होगी। कैसा अच्छा रहेगा। आपको भी गौरव मिलेगा।'

कानूनगो की धमनियों में प्रसन्नता का प्रवाह होने लगा। आंखों के सामने ऐसे अभूतपूर्व दिन की एक उज्जवल झलक दौड़ गयी। जिस कार्य में महाराजा साहब हाथ बटा रहे हैं उसकी कौन आलोचना करेगा। वे बोले, 'पंडितजी ! मैं तैयार हूं।'



'अच्छा तो,' पंडितजी बोले, 'मैं यहां से मेढकी जाऊंगा - पंडित भोलारामजी से मिलूंगा और मनसुखलाल से भी। आपकी स्वीकृति प्रमुख थी, इससे पहले आपके पास आया।' ऐसा कहते हुए पंडितजी उठे। कानूनगो ने फिर कहा, 'पंडितजी! कुछ नाश्ता-पानी तो स्वीकार कर लीजिए।'

'नहीं! करके आया हूं। हां पान ले लूंगा।' ऐसा कहते हुए पंडितजी ने पान लिया और चलते हुए।

यहां देवकी और रजऊ पंडितजी की बात को किवाड़ों के पीछे छिपी हुई सुन रही थी।

कानूनगो अन्दर आये नहीं कि देवकी मुंह बनाती हुई बोली, 'तुम्हें हो क्या गया है! फौरन ही दूसरे के प्रभाव में आ जाते हो। किसी बड़े आदमी को द्वार पर आया देखा कि उसके सामने दीन-हीन-से बन गये। एक बात भी विरोध में बोलने का साहस नहीं रह जाता। ठाकुर पहाड़सिंह आये, उन्होंने बुद्धू बना दिया, ठाकुर जंगजीत आये उन्होंने बुद्धू बना लिया। उसी बुद्धूपना से अपने लड़के को खोया, अब बहू को भी खो दो। सोने-सी बहू घर से चली जावेगी, दूसरे के घर की शोभा बनेगी। सारा दोष तुम्हारा है। न ठाकुरों के चक्कर में पड़ते न अपने लड़के को खो बैठते। तुम्हारी अक्ल पर पत्थर पड़ गये हैं!'

देवकी की खरी-खरी बात सुनकर कानूनगो के शरीर में आग-सी लग गयी। कुछ खिसयाये से बोले, 'तुम्हारी जैसी बुद्धि कहां से पाऊं? जब कोई बड़ा आदमी घर आता है तो तुम क्यों नहीं बात करने को आगे आया करतीं? मेरी अक्ल पर पत्थर नहीं पड़े, भगवान की अक्ल पर पत्थर पड़े हैं, जो गाड़े से पारा उलझाये रहता है। कठपुतलियों जैसा मनुष्य को नचाता रहता है। इतना बड़ा तूफान उठा और टांय-टांय फिस। इससे रजऊ की शादी पहले ही ईसुरी के साथ हो गयी होती तो क्या बिगड़ जाता। परन्तु नहीं, बब्बू का अन्त तो इस प्रकार होना था! तूफान उसे ले गया और शान्त हो गया। अब बताओ, जिस बात को स्वयं महाराजा साहब चाहते हैं उसे, हममें क्या दम है कि टाल दें। वे चाहते हैं कि उनके राज्य में कोई लड़की विधवा बन कर न बैठे, कोई जमीन अनजुती न पड़ी रहे, तो क्या बुरा चाहते हैं?'

रजऊ इस प्रस्ताव से प्रसन्न थी, परन्तु उसने जाहिरा ऐतराज़ प्रकट करने में अपना गौरव देखा। देवकी से धीरे से बोली, 'अंकुर को जहां चाहे वहां लगा दिया जाता है, पर जब पेड़ बडा हो आता है, तब तो वह एक जगह से दूसरी जगह लगाया नहीं लगता। लगाया भी जाता है तो मुरझा जाता है, सूख जाता है। मेरा रखना भारू हो रहा होगा!' ऐसा कहती हुई रोने लगी।

देवकी मुंह विदोरती हुई बोली, 'सुन लो बहू क्या कहती है ? क्या तुम्हें अच्छा लगेगा कि बहू तुम्हारे घर से चली जावे। जिस दिन जावेगी सारे घर में ऐसा लगेगा जैसे किसी भूत-मसान का डेरा हो। एक दुख को बड़ी मुश्किल से भुला पाये अब दूसरी समस्या सामने आ गयी। रजऊ की कैसी विचित्र तकदीर निकली। भगवान ने जैसा रूप-रंग दिया है वैसी तकदीर न दी। जो सनातन से नहीं हो आया वह उसके साथ हो। वही बेचारी क्या इस खिलवाड़ के लिए रची गयी है। संसार में और कोई महिला नहीं क्या ? महाराजा साहब बड़ा अच्छा करेंगे ! एक घर की प्रतिष्ठा में आग लगवा कर एक नये युग का निर्माण करेंगे। करोड़ों औरतें सती हो गयीं। उनकी आत्मायें क्या कहेंगी ? उनके जमाने में क्या कोई महाराजा साहब जैसा सोचने वाला नहीं था ?'

कानूनगो आंखें तरेरते हुए बोले, 'इतनी बरबादी हो चुकी। कुछ और चाहती हो क्या ? रजऊ को भी सती कराना चाहती हो क्या ? अभी तो कहती थी कि रजऊ घर से चली जावेगी तब कैसा लगेगा। अपना स्वार्थ न देखो। घर की प्रतिष्ठा का प्रश्न न उठाओ। प्रश्न है रजऊ के जीवन का। कैसे इतनी बड़ी जिन्दगी मन को मसोस कर बितावेगी। सारे सामाजिक नियम मनुष्य के बनाये हैं और वे सब काल के लिए खरे नहीं उतरते। मनुष्य की आंखों पर कितने ही लाल, पीले, हरे चश्मे चढ़े हैं। जो चश्मा सामने आता है, उसी रंग का संसार दिखने लगता है और उसी चश्मे को मनुष्य सही समझ बैठता है। कभी सतीत्व का चश्मा आंखों पर चढ़ा था, उस समय सतीत्व ही सब से अच्छा दिखता था। पर आज वह चश्मा आंखों से उतर गया है। आज समाज विधवा विवाह को न्याय संगत समझता है। मन को ही तो मोड़ना है। प्रचार से ही वह अपनी दिशा बदलता है। महाराजा साहब आगे हुए हैं। यदि मैं कोई व्यवधान उपस्थित करता हूं तो सोचो मेरा क्या होगा ?'

रजऊ फिर धीरे से मर्यादा को रखती हुई देवकी से बोली, 'अम्मा ! देखो तो सही मेरा क्या-क्या होता है। जो हो चुका उससे बुरा तो अब कुछ होगा नहीं ! इसलिए मुझे अपने भाग्य पर छोड़ दो। आंधी में उड़ूंगी, पानी में बहूंगी, आग में जलूंगी, इससे अधिक और क्या होगा। मैं तो अपने को समर्पित-सा कर चुकी हूं, विधि के विधान को। अपने हाथ-पैर नहीं चलाना, अपना मन नहीं बहकाना। मेरा भाग्य ही मुझे जैसा चाहेगा चला देगा।'

कानूनगो चुपचाप बहू की बातें सुन रहे थे। तत्काल बोले, 'देवकी ! तुमसे अधिक समझदार तो तुम्हारी बहू है। वह अक्षरों में मात्रा लगाना जानती है।

तुम कोरे अक्षर ही लिखना जानती हो। तमाशा देखो। जो कुछ हो होने दो।'

'मैं कैसे रोक लूंगी,' देवकी बोली, 'जो कुछ होता है, हो रहा है।'

'तुमने सुना नहीं,' कानूनगो फिर बोले, 'ईसुरी को कितनी बड़ी प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है। वह महाराजा साहब के महल में जब काम कर रहा था, एक बड़ा काला सर्प उसकी पीठ पर से चढ़ा और उसके सीने से उतर कर चला गया। ईसुरी वहीं जड़वत बैठा रहा। यह महाराजा साहब ने भी घटना देखी। वे बोले, 'यह तो कोई दैवी पुरुष है। इसका भविष्य उज्जवल है। भगवान शंकर ने इसे अपना हार पहनाया है। इसी के समर्थन में महाराजा साहब ने भी उसे सोने का हार पहनाया - बेशकीमती। उसे दुशाला उढ़ाया और कपड़े भी प्रदान किये।'

'तब तो ईसुरी,' देवकी बोली, 'अवश्य कोई निराला व्यक्ति है। खैर यदि यह सम्बन्ध हो गया तो मैं उसे अपना बब्बू ही समझ कर घर में रक्खूंगी। वह भी रहेगा और बहू भी रहेगी। अपने घर आते-जाते ही बने रहेंगे। उनका घर यही होगा। मैं उसे अपना बब्बू ही कहूंगी,' ऐसा कहते हुए देवकी की आंखों में प्रेमाश्रु झलक आये।

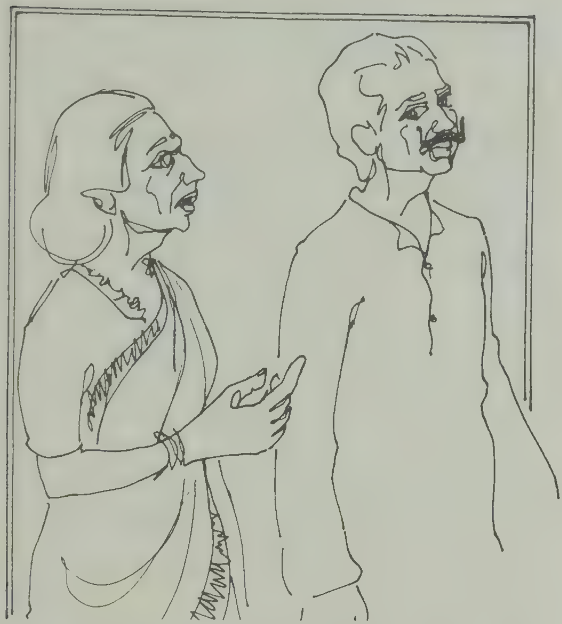
'हां अम्मा,' रजऊ बोली, 'मैं तुम्हारा घर न छोड़ूंगी। न तुम छुड़ाना। मैं तुम्हारी ही बहू रहूंगी। तुमने मुझे प्रेम दिया है। तुम्हारे लड़के की ही कमी दूसरे ढंग से पूरी हो जावेगी। जिसे मान लिया वही लड़का है, जिसे ब्याह लिया वही बहू है। कुछ पूर्व जन्म का संस्कार है जिसे हम इस जन्म में तोड़ नहीं सके। मुझे प्रसन्नता है कि तुम्हारा लड़का फिर तुम्हें मिल रहा है। पहले लड़के के कारण बहू मिली थी, अब बहू के कारण लड़का। अम्मा! मुझे यह घर न छुड़ाना।' ऐसा कहती हुई रजऊ रोने लगी।

'न रो, रजऊ,' कानूनगो डबडबायी आंखों से बोले, 'तुझे हम जीते जी इस घर से पृथक न करेंगे। ईसुरी शंकर का रूप है, तू पार्वती का। दोनों इस घर में, इस घर के मालिक बन कर रहेंगे।'

* * *

अध्याय - ४५

सब का समय बदलता है। भोलाराम का भी समय बदला। एक दिन वे जब अपनी चौंपाल में बैठे अपना पंचांग देख रहे थे और अपनी ग्रह दशा का ही कुछ लेखा-जोखा कर रहे थे, पं. गंगाधर उनके घर पहुंचे। पं. गंगाधर को आया देख कर वे बड़े आश्चर्य में पड़े। सहसा उठ खड़े हुए और उनका स्वागत करते हुए बोले, 'पंडितजी! आज कैसे कृपा की? कैसे इस उपेक्षित तिरस्कृत व्यक्ति की याद आयी? कैसे यह गौरव प्रदान करने की बात सूझी? आइये, बिराजिये।'



चौपाल में एक चारपाई पड़ी थी। पं. गंगाधर चारपाई पर जाकर बैठ गये और बोले, 'भोलारामजी! बैठिये फिर बात करूंगा।'

भोलाराम उनके सामने ही दीवाल से टिककर जमीन पर बैठ गये। अपनी थैलिया खोली और पान लगाने को बिछाते हुए बोले, 'हां पंडितजी, अब कहिये।'

पं. गंगाधर उनकी ओर जिज्ञासा भरी आंखों से देखते हुए बोले, 'ईसुरी के विषय में कुछ सुना? उसने कितनी बड़ी प्रतिष्ठा प्राप्त की है। आपको उस पर गर्व होना चाहिये।'

'पंडितजी!' भोलाराम चापलूसी करते हुए बोले, 'सब आपकी कृपा है। उस नालायक को कौन पूछता? यहां-वहां फागें गाता फिरता था। उसे दलियां ने सिखाकर ही बिगाड़ा था। मैंने सब सुन लिया है। आपने ही उसे जमीन से उठाकर पहाड़ पर चढ़ा दिया। क्या अपने बलबूते पर महाराजा साहब के पास तक पहुंच सकता था! यह आप ही हैं जो फागों के नाते उसे इतना ऊंचा खींच ले गये। हत्या के अभियोग से छुड़वा दिया। उसके गले में सोने का हार पहिनवा दिया। उसे एक दैवी पुरुष बनवा दिया। मैं तो उसे पहले जैसा ही बरबाद समझता हूं।'

पंडित गंगाधर मुस्कराते हुए बोले, 'ठीक है, भोलारामजी! अब वह मेरा हो गया। मैं उसे एक मंजिल और चढ़ाना चाहता हूं। आप कोई आपत्ति तो न करेंगे?'

'किसी ने मेरी विपत्ति को नहीं सुना - आपत्ति को कौन सुनेगा? आप उसे एक मंजिल नहीं, सात मंजिल तक ऊपर खींच ले जाइये। मुझे क्या पड़ी है जो आपत्ति करूंगा। जब आपने उसे अपना लिया है, जो चाहे सो कीजिये मैं तो यही गौरव समझता हूं कि उसे आपने अपना लिया। मेरे तो वह बस का नहीं था। मुझे तो चिढ़ाया करता था। भालूराम कहा करता था। पता नहीं आपने उसमें कौन गुण देखा!'

'तो भोलारामजी! आप जानते हैं कि कानूनगो की बहू रजऊ को वह चाहता रहा है। आपने उसकी शादी रजऊ के साथ न की। उसका ही यह सारा भयंकर परिणाम निकला। उसे तो आपने कुचल

दिया, पर उसके अन्दर जो प्रेम अंकुरा रहा था उसे आप न कुचल सके। जाति-पांति के जीर्ण-शीर्ण धागों से बांधकर प्रेम के मतवाले हाथी को न रख सके। वह एक लम्बा रास्ता पार करके अपनी मंजिल को पहुंच गया।'

भोलाराम दांत पीसते हुए बोले, 'पंडितजी! हम भी तो सामाजिक बंधनों से बंधे हैं। जो बंधन हमें बांधे हैं वे जीर्ण-शीर्ण नहीं, उन्होंने हमें ही जीर्ण-शीर्ण बना दिया है। अच्छा है आप हमारे बंधनों को खोल दीजिये। हम आपके पीछे चलेंगे। अन्धों को अंखियारों के पीछे चलना ही पड़ता है। महाराजा साहब समर्थ हैं। वे चाहें तो आदमी की शादी बंदरिया से भी करा सकते हैं। उनकी ओर कोई उंगलियां न उठावेगा। यदि हम ऐसे किसी कार्य को आगे होते तो समाज हमारे लत्ते उड़ा देता।'

'खैर ठीक है।' गंगाधर फिर आगे बोले, 'रजऊ और ईसुरी अपने वास्तविक परिणय सूत्र में अब बंधेंगे, बड़ी धूमधाम के साथ। सदर में ही मेरी बगिया में आयोजन है। राज्य के सभी प्रतिष्ठित व्यक्ति आमंत्रित होंगे, महाराजा साहब भी पधारेंगे। आप भी आमंत्रित हैं। आपको लिखित निमंत्रण-पत्र शीघ्र ही पहुंचेगा। सपत्नीक पधारें। इस नव वर-वधू को आशीर्वाद दें। यश और गौरव के भागी बनें।'

'ठीक है पंडितजी,' भोलेराम कुछ भूले-भटके से बोले, 'आपका निमंत्रण स्वीकार है। मुझमें तो ऐसी हैसियत नहीं कि आपको निमंत्रण दे सकता पर एक ही बात है आपकी ओर से निमंत्रण मिलने में गौरव का ही अनुभव हो रहा है। मेरा काम आप कर रहे हैं। मेरे सिर का भार आप अपने सिर पर ले रहे हैं। यह परोपकार नहीं समाज का सुधार है। इसमें सुन्दरता है, मार्गदर्शन है आपका आभार ही मानूंगा।'

'हां, मनसुखलाल कहां मिलेंगे?' पंडित गंगाधर ने पूछा।

'घर पर ही होंगे।' भोलेराम ने कहा।

'क्या उन्हें यहां बुलवाऊं?'

'नहीं! मैं ही उनके घर जाऊंगा।' पंडित गंगाधर ने कहा।

'बुलवा न दूं मैं यहां,' भोलाराम ने कहा, 'क्या कोई ऐसी बात करनी है जो मेरे सामने न की जा सके?'

'बुलवा दीजिये।' पंडित गंगाधर ने कहा, 'अच्छा है आपके सामने ही बात हो जावेगी।'

भोलाराम ने शीघ्र ही अपने एक पड़ोसी को दौड़ाया। मनसुखलाल घर पर ही थे। वे शीघ्र ही आ गये। उन्हें देखते ही पं. गंगाधरजी बोले, 'आइये, पटवारी साहब, अब आपका पद मैं छीनने वाला हूं।'

मनसुखलाल पं. गंगाधरजी के चरण स्पर्श करते हुए एक ओर जमीन पर ही

बैठ गये और बोले, 'पंडितजी, क्या आदेश है?'

पं. गंगाधर मुस्कराते हुए बोले, 'आदेश नहीं, निमंत्रण देने आया हूं। शादी का निमंत्रण। एक आदर्श शादी का निमंत्रण।'

'तो पंडितजी, आप स्वयं ही पधारे -' मनसुखलाल जिज्ञासा से उनकी ओर देखते हुए बोले, 'निमंत्रण किसी दूसरे के द्वारा न भेजा जा सकता था क्या? आपने स्वयं कष्ट किया।'

'भाई, आप लोग बड़े आदमी हैं,' गंगाधर ने व्यंग्यपूर्वक कहा, 'बड़े लोगों के घर स्वयं ही निमंत्रण देने को आना पड़ता है।'

'पंडितजी!' मनसुखलाल बोले, 'किसकी शादी कर रहे हैं? कब की शादी है। बारात आयेगी या जावेगी?'

'रजऊ और ईसुरी की,' पंडितजी ने कहा।

'सो कैसे, पंडितजी?' मनसुखलाल आश्चर्य से उनकी ओर देखते हुए बोले। 'यदि शादी होना होती तो इतना बड़ा काण्ड ही तैयार क्यों होता। और अब तो और भी बड़ा रोड़ा सामने – रजऊ विधवा! क्या विधवा विवाह भी संभव है? क्या लड़का-लड़की दोनों इसके लिए राजी हैं?'

'आप अन्य किसी से मत पूछिये,' पंडितजी बोले, 'आप सहमत हैं या नहीं? यदि यह शादी हो तो आपको कोई आपत्ति तो नहीं?'

'पंडितजी!' मनसुखलाल फिर उलझे हुए से बोले, 'लड़की में अब मेरा हक ही क्या है? लड़की तो कानूनगो की बहू है न। उन्हीं की सहमति सब कुछ है। दूसरी सहमति है इन पंडित भोलारामजी की। मैं तो आप लोगों के पीछे चलने वाला हूं। एक पटवारी की हस्ती ही क्या होती है जो बड़े लोगों के बीच में दखल दे। दाखिली-खारिजी का तो कोई केस नहीं।'

पं. गंगाधर मुस्कराये और बोले, 'ईसुरी के विषय में कुछ सुना है?'

'इतना ही सुना है, पंडितजी! कि ईसुरी की फागें महाराजा साहब को बहुत पसन्द आयीं। उन्होंने उसे जेल से छोड़ दिया और एक बड़ा उपहार उसे दिया।'

'यह नहीं सुना कि स्वयं शंकरजी ने उसे प्रतिष्ठा प्रदान की। उसके गले में एक काले सर्प का हार पहनाया। सर्प के स्थान पर ही महाराजा साहब ने स्वर्ण का हार उसे पहना दिया।'

'होगा, पंडितजी!' मनसुखलाल उदासी से बोले, 'मेरी लड़की के सिर का सिंदूर तो उसने हर लिया। अब उसकी प्रशंसा से मैं क्या खुश होऊं?'

'उसने नहीं हरा।' पंडितजी गम्भीर होकर बोले, 'ठाकुर जंगजीत की गलती से उसके प्राण गये। फिर उन्होंने अपने बचाव के लिए जाल रचा। ठाकुर पहाड़सिंह ने उसे गिरफ्तार करा दिया।

बे-सिर-पैर का केस बना। दो निरपराध व्यक्तियों ने सजा भोगी। ईसुरी तो अपनी गुणगरिमा के कारण छूट गया पर एक गोपाल पंडित अभी जेल में पड़े हैं, वे मौके पर आये ही नहीं।'

'पंडितजी!' मनसुखलाल बोले, 'यह ईसुरी की गुणगरिमा नहीं, आपकी गुणगरिमा है। आपको उसकी फागें पसन्द थीं।'

'और वह भी मुझे पसन्द है।' गंगाधर ने कहा, 'मैंने उसे अपना लिया है। वह क्या है, उसे समझा है।अब उसका रजऊ के साथ विधवा विवाह करा रहा हूं। सदर में मेरी बगिया में ही आयोजन है! लिखित निमंत्रण भेजूंगा। कहिये आप निमंत्रण में आयेंगे या नहीं? राज्य के सभी प्रतिष्ठित व्यक्ति आ रहे हैं। महाराजा साहब भी पधारेंगे, नव वर-वधू को अपनी शुभकामनाओं से विभूषित करेंगे। बहुत बड़ा आयोजन है। काफी धूमधाम होगी।'

'पंडितजी! आपके निमंत्रण पर न आऊं, ऐसा कैसे हो सकता है? यह तो मेरे लिए एक गौरव की बात है।'

'बाल-बच्चों सहित आइये। एक-दो दिन पहले से आइये। आकर कुछ काम कीजिये।' ऐसा कहते हुए पंडित गंगाधर उठ खड़े हुए।

पंडित भोलाराम हाथ जोड़कर बोले, 'पंडितजी! भोजन तो किये जाइये। भोजन तैयार है।'

'नहीं, भोलारामजी! अभी भोजन का समय नहीं हुआ। हां, एक लोटा पानी मंगाइये।'

भोलाराम भीतर गये। एक तश्तरी में कुछ मीठा ले आये और गिलास में पानी। पंडित गंगाधर ने मीठा खाया, पानी पिया और वहां से चलते हुए। मनसुखलाल भी उन्हें भेजने को तथा और कुछ बातें करने को उनके पीछे लगे। उनके जाते ही बड़ी बहू बाहर निकल आयी। एक तरफ जमीन पर बैठती हुई बोली, 'यह क्या अंधेर है! विधवा का विवाह होगा, मेरे लड़के के साथ! फिर दूसरी जाति की लड़की। तुमने विरोध क्यों न किया? दूसरों के सामने बिल्कुल भेड़-बकरी बन जाते हो। जैसे उसके गुलाम हो। क्या ईश्वर ने तुम्हें नहीं बनाया, दूसरों के सामने क्यों इतने निहूं पड़ते हो। कह देते मैं अपने लड़के की शादी विधवा से न करने दूंगा। कैसी हंसी होगी। कान न दिये जावेंगे। कहां तो अन्य जाति का छुआ नहीं खाते, कहां अन्य जाति की बहू घर मे बैठाल लोगे। कहां रहेगी यह नाक? सारी पंडिताई मिट्टी में मिल जायेगी!'

'अरी बड़ी बहू, कुछ इन्सानियत सीख, सभ्यता से बोलना सीख। तेरे मारे ही सारी बरबादी सामने आयी। छुआछूत तुझे ऐसे पकड़े है, जैसे कोई भूत-प्रेत पकड़े हो।'

'ये गंगाधर! मैं जानती हूं जनम के कुजात हैं, सो सबको अपने जैसा कर देना चाहते हैं। यहां की वहां भिड़ाते रहते हैं। इसी में भले बने हैं, अपनी शान जमाये हैं। वैसे पूछो तो फगुवारे हैं। फगुवारों की कोई कदर होती है! द्वार-द्वार पर गाते फिरते हैं वह भी कोई अच्छे गीत नहीं, गंदी फागें। फागें गा-गाकर मन का मैल निकालते हैं। महाराजा साहब को भी रंग दिया है अपनी फागों में। जवानी में यह भी ईसुरी जैसे ही रहे हैं। फरचट्ट और तिकड़मबाज। अब उतरती उमर में हैं, ज्वर उतर गया और परोपकार का जामा पहिन लिया। इन्हीं से ईसुरी को फागों की लहर लगी थी।' बड़ी बहू ने कहा।

'अरी भली आदमिन!' भोलाराम खिसयाये-से बोले, 'अब तो चुप हो जा। होने दे जो कुछ होता है। अपने को कौन यहां देखने को रहना है। दुनिया का यह नाटक है। ईसुरी को इसी तरह प्रतिष्ठा मिल जाये तो क्या बुरा है। उसकी प्रतिष्ठा से हमारी भी प्रतिष्ठा बढ़ेगी। हम जितने नीचे गिरे हैं, बदनाम हुए हैं, उतने ही फिर ऊंचे उठ जावेंगे। रजऊ बचपन में इसी घर में खेलती-कूदती रही, अब भी खेलेगी। यह विधि का विधान है, इसे कोई नहीं बदल सकता। मनुष्य का इस पर कोई वश नहीं चलता। और रजऊ से तेरी न पटे तो उसे अलग कर देंगे। एक तो वह स्वयं यहां न रहेगी। ईसुरी को महाराजा साहब अपने पास रख लेवेंगे। वह ईसुरी के साथ ही रहेगी।' ऐसा कहते हुए भोलाराम चैन की कुछ सांस लेते हुए भीतर चले गये। बड़ी बहू भी पीछे-पीछे चली गयी।

* * *

अध्याय - ४६

बड़प्पन बड़े आदमियों के देने से ही मिलता है। महाराजा साहब से आदर पाते ही ईसुरी एक चर्चा का विषय बन गया। छोटे-बड़े सभी लोगों में उसकी चर्चा चलने लगी। कहां जेल में पड़ा सजा काट रहा था, कहां उसके विवाह की तैयारियां इतनी धूमधाम से होने लगीं। सारा सरकारी प्रबन्ध। कैसा भाग्य ने पलटा खाया! एक नगण्य-सा आदमी इतना गण्यमान्य बन गया। यही दैवी चमत्कार है, किसी ने नहीं देखा कि किसके भाग्य में क्या लिखा है! आखिर प्रत्येक आदमी बनाया हुआ तो भगवान का ही है। जिसे चाहे वह जो गौरव प्रदान कर दे। रंगमंच पर जो भी पात्र बना कर भेज दे। यह सब पंडित गंगाधरजी की कृपा है। उन्हीं की यह सारी योजना है। विधवा विवाह का समाज में सूत्रपात कराना चाहते हैं। अच्छा तो है। बुरा क्या? बेचारी विधवायें क्यों जीवन के सुख से वंचित रक्खी जायें। छोटा-सा जीवन उसे भी सुख से न भोगा जाये? झूठे आदर्शों पर उसे क्यों बलिदान कर दिया जावे? यह समाज का अन्याय है कि

विधवाओं को तपस्विनी बनाकर रक्खा जाता है। उन्हें कैसे अपनी लालसाओं को कुचलने के लिए वाध्य किया जाता है। वे अच्छे वस्त्राभूषण न पहनें, अच्छा भोजन न करें, बालों में कंघी न करें। शरीर में तेल फुलेल न लगावें। यह भी कोई न्याय है ? प्रकृति ने तो किसी को विधवा नहीं बनाया। शादी-विवाह भी प्रकृति की योजना नहीं। उसे तो एक मात्र स्त्री-पुरुष का सहवास ही वांछ्य है। महाराजा साहब बहुत अच्छा कर रहे हैं। समाज के सामने एक ऐसा आदर्श आ रहा है, जो सभी के लिए प्रेरक बनेगा। जीर्णशीर्ण रूढ़ियों के बन्धन तोड़ेगा।

ऐसे कितने ही तक-वितर्क हवा में सर्वत्र तैरते से फिर रहे थे। यहां पंडित गंगाधर की बगिया में एक नयी बहार आ रही थी, जैसी पहले कभी नहीं आयी थी। बगिया के सामने काफी बड़ा मैदान था। उसमें एक बड़ा शामियाना लगा दिया गया। शामियाने के चारों ओर रंग-बिरंगी झंडियां बांधी गयीं। शामियाने के आगे एक बड़ा तोरण बनवाया गया। हरी-हरी आम की पत्तियों से सुसज्जित, जिसमें 'स्वागतम्' का पट भी बांधा गया। आम के पत्तों से बने हुए बन्दनवारों की भी कई कतारें बांधी गयीं। शामियाने के नीचे बड़ा फर्श बिछाया गया। फर्श पर सफेद चादर बिछायी गयी। सब तैयारी लकझक!

संध्या हुई। थोड़ी रात गहरायी। रोशनी जगमगा उठी। आगन्तुकों का आना आरम्भ हुआ। सैकड़ों की संख्या में। सरकारी कर्मचारी, प्रतिष्ठित नागरिक, जागीरदार, जमींदार, सेठ साहूकार सभी। सबके लिए स्थान पूर्व नियत। सब यथा स्थान बैठे।

कानूनगो, भोलाराम तथा मनसुख-लाल प्रबन्ध में रहे। सबका स्वागत करते। सबका इत्र-पान। ठाकुर जंग-जीत भी आये और ठाकुर पहाड़सिह भी। संयोग से दोनों को एक ही जगह बैठने को स्थान मिला। दोनों में झगड़ा भीतरी था। ऊपरी नहीं। दोनों में परस्पर राम-रहीम हुई और दोनों मन में कितने ही विचार लिए हुए बैठ गये। रजऊ पूर्ण दुलहिन-सी सजी एक पृथक स्थान में थी, कितनी नारियों से घिरी हुई। ईसुरी भी एक पृथक स्थान में था पूर्ण दूल्हा-सा सजा हुआ।

महाराजा साहब के आने पर ही कार्यक्रम प्रारम्भ होना था। परन्तु अभी महाराजा साहब के आने में कुछ देर थी। लोगों में तरह-तरह की बातें चल रही थीं। कुछ खुसखुसाहट के रूप में, कुछ उजागर। जहां से मनसुखलाल निकलते लोग कहते, रज्ऊ इनकी ही लड़की है। मनसुखलाल मन ही मन फूले न समाते। जहां से कानूनगो निकलते लोग कहते, रजऊ इनकी बहू है, बेचारी विधवा हो गयी और इसी से यह सारा आयोजन किया गया। जहां से पं. भोलाराम



निकलते लोग कहते, यार पंडित भाग्यवान है जिसने ऐसे प्रतिभाशाली लड़के को जन्म दिया, उसे तो शंकर भगवान ने भी प्रतिष्ठा प्रदान की। अपने गले का सर्प उसके गले में डाल दिया। यह एक बहुत बड़ा शुभ लक्षण है। आगे भाग्य चमकेगा। यह सुनते ही भोलाराम की प्रसन्नता मन में न समाती। अपने भाग्य पर गर्व करते, पहले अपने दुर्व्यवहार पर पश्चाताप।

यहां ठाकुर जंगजीत ने और ठाकुर पहाड़सिंह में भी बात चल पड़ी। ठाकुर जंगजीत बोले, 'कक्का जू, भाग्य कैसी टेढ़ी-मेढ़ी पगडंडियों से चलता है। यह ईसुरी मेरे यहां नौकर था। मैं न समझता था कि इसका भाग्य इतना प्रवल है। इसको एक दिन ऐसी दुर्लभ प्रतिष्ठा मिलेगी। महाराजा साहब के द्वारा यह सम्मानित होगा। परन्तु इसकी फागों का तो मैं लोहा मान गया था। उसमें प्रतिभा है। मर्म पर चोट मारता है।'

'मेरे यहां भी तो नौकर रहा।' ठाकुर पहाड़सिंह बोले, 'पर न जाने बेचारा कैसे बब्बू के मारने के केस में फंस गया! पुलिस ने ही उसे फंसाया। पुलिस को जब कोई असली मुलजिम नहीं मिलता तो वह किसी निरपराध को ही फंसा देती है। उसे सजा देती है ताकि उसकी कार्यगुजारी जीती जागती बनी रहे। बब्बू के मारने वाले का पता अब भी नहीं। पर होगा हममें तुममें से ही कोई।'

ठाकुर जंगजीत को ठाकुर पहाड़सिंह का यह आक्षेप अच्छा न लगा। पर यह विरोध करने का समय नहीं था। दबी आवाज से बोले, 'होगा कोई, छोड़िये उसकी चर्चा। जो चीज सामने है उसे देखिये।'

'सामने तो,' ठाकुर पहाड़सिंह बोले, 'हमारा सरहद्दी झगड़ा है। उस पर भी ईसुरी की एक बड़ी अच्छी फाग है। आपने सुनी ही होगी। कुछ ऐसी है - तन तन दोऊ जने गम खायें - करो फैसला चायें।'

'हां-हां! मैंने भी सुनी है,' ठाकुर जंगजीत बोले, 'बड़ी मजेदार फाग है। उस कानूनगो ने ही हम लोगों को

लड़ाया। अपना उल्लू सीधा करने के लिए। पर अपनी करनी का फल भी उसे उचित मिला। देखो न उसी की बहू का अब विधवा विवाह हो रहा है। भले ही वह महाराजा की ओर से आयोजित हो, है तो एक दुर्भाग्य की ही बात। न उसकी बहू विधवा होती और न यह विचित्र आयोजन होता। ऊपर धूमधाम, भीतर हरे राम, हरे राम।'

'ठीक कहते हो भाई, जंगजीत।' ठाकुर पहाड़सिंह पिघलते हुए-से बोले, 'मैंने कानूनगो को बहुत रुपया खिलाया।'

'और क्या मैंने कम खिलाया है,' ठाकुर जंगजीत ने कहा, 'आपसे ज्यादा ही खिलाया होगा।'

'मुझसे ज्यादा आप क्या खिलायेंगे,' ठाकुर पहाड़सिंह तुनक कर बोले, 'यह तो आपकी झूठी हुज्जत है। इसी तरह आपने मेरी जमीन दबा ली और अपनी कहने लगे। मैं तो बहुत तलाश में रहा कि आप किसी दिन जंगल में मिल जावें तो लोहे की लोहे से टक्कर हो जावे। यहीं क्या बिगड़ा है, निकल चलो न सभा से बाहर। देख लूं तुम्हारी रजपूती।'

इसी समय कानूनगो वहां से निकल पड़े। उन्हें देखते ही पहाड़सिंह ताव से बोले, 'बता कानूनगो, मैंने तुझे ज्यादा रुपया खिलाया है या इस ठाकुर ने?'

कानूनगो बहुत डरे। सोचने लगे - बस निकलीं दोनों की तलवारें और हुआ भजन में भंग। हाथ जोड़कर बोले - 'महाराज! पिछली बात भूल जाइये। हाथ कंगन को आरसी क्या? आज जो कोई जितना देगा उसे गिन कर बता दूंगा। पता पड़ जायेगा कौन कितना दे सकता है? आप व्यवहार कुछ देंगे ही?'

'बस जितना यह ठक्कर देगा, उससे दुगुना मैं दूंगा।' ठाकुर पहाड़सिंह ने कहा।

'मैं तो कुछ न दूंगा। दो 'कुछ नहीं' का दूना। तब मानूं।' ठाकुर जंगजीत ने कहा। 'कुछ नहीं का दूना दे दो ठाकुर साहब तो मैं हार मान लूंगा। अपना सरहद्दी झगड़ा उठा लूंगा।'

'सरकार,' कानूनगो बोले, 'मैं किसी से कुछ लूंगा भी नहीं। आप लोगों का झगड़ा यों ही सुलझवा दूंगा। लेने-देने का परिणाम मैं देख चुका हूं। आप लोगों को थोड़ी-थोड़ी गम भी खाना पड़ेगा।

'चलो अच्छा है,' ठाकुर पहाड़सिंह बोले, 'मैं गम खाने को तैयार हूं।'

'मैं भी गम खाने को तैयार हूं।' ठाकुर जंगजीत ने कहा।

इतने में बैण्ड बजना शुरू हुआ। महाराजा साहब की सवारी आयी। सारा जनसमूह उनके दर्शनों को उठ खड़ा हुआ।

पंडित गंगाधर दौड़े। महाराजा साहब को सम्मानपूर्वक ले आये। महाराजा साहब सुसज्जित शाही आसन पर बैठ गये। कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। बैण्ड

बजने लगा। आतिशबाजी छूटने लगी। फुलवारी लुटायी जाने लगी। एक ओर से कुछ सुसज्जित नारियां रजऊ को लेकर महाराजा साहब के सम्मुख ले आयीं। एक ओर ईसुरी भी दूल्हा बना अपनी पार्टी के साथ आया। दूल्हा-दुल्हिन आमने-सामने हुए। सौन्दर्य और उल्लास छलक-छलक कर बिखर चला। बाजों ने विशेष ध्वनि बनायी, आनन्द उल्लास की। आतिशबाज़ी के विशेष खिलौने छूटे, जिनका प्रकाश सबको प्रकाशित कर चला। रजऊ को नारियों ने संकेत दिया, उसने कांपते हुए हाथों से ईसुरी के कंठ में जयमाल डाल दी। ईसुरी ने भी रजऊ के कंठ में जयमाल डाल दी। प्रकृति की योजना सफलीभूत हुई। सारा जन समुदाय फिर यथास्थान बैठ गया। दूल्हा-दूल्हिन को पंडित गंगाधर महाराजा साहब के सामने लाये। महाराजा साहब ने उन दोनों के सिर पर हाथ रखकर उन्हें आशीर्वाद दिया और एक थाल में सजी हुई भेंट भी दी। करतल ध्वनि से आकाश गूंज उठा। महाराजा साहब ने फिर जन समूह को सम्बोधित करते हुए कहा : 'मैंने कोई असामाजिक कार्य का सूत्रपात नहीं किया। प्रकृति की योजना को ही कार्यान्वित किया है। प्रकृति स्त्री-पुरुष का ही सहवास चाहती है। उसने किसी को विधवा नहीं बनाया। एक पुरुष मरा तो दूसरा तैयार। प्रकृति का कभी दिवाला नहीं निकलता। प्रकृति की ओर से इतना उदार प्रबन्ध होने पर भी मनुष्य ने अपने को अपनी मूर्खता से दीन-हीन बना लिया है। यह भी विचित्र योजना है। स्त्री विधवा बन कर रहे। भरे समुद्र में घोंघा प्यासा। विधवाओं के लिए यहां कोई अदालत नहीं। पुरुष ने उन्हें जिन्दा जलाया। उनकी अपील किसी ने न सुनी। धार्मिक रंग चढ़ा कर उनको बलि के लिए तैयार कराया। यह अन्याय मुझसे नहीं देखा जाता। मैंने यह शादी कराकर एक नये युग का ही सूत्रपात किया है। मेरी हार्दिक कामना है कि यह प्राकृतिक युग्म फूले-फले।'

लोगों ने अपना उल्लास प्रकट करते हुए करतल ध्वनि की। पंडित गंगाधर फिर पं. भोलाराम को आगे लाये। उन्हें महाराजा साहब के सन्मुख उपस्थित करते हुए बोले, 'श्रीमान्! ईसुरी आपका पुत्र है। आपने इस साहसिक कार्य में योग देकर प्रशंसा का कार्य किया है। ये बधायी के पात्र हैं।'

'अन्नदाता!' भोलाराम आनन्द से पिघलते हुए से बोले— 'ईसुरी मेरा कोई नहीं। मैं उसे पं. गंगाधरजी को ही सौंप चुका हूं।'

फिर पं. गंगाधर कानूनगो और मनसुखलाल को भी सामने लाये, और उनका भी महाराजा साहब को परिचय दिया। वे आनन्दविभोर हो गये। अपना धन्य भाग्य समझने लगे वे दोनों। उनके

समान सारे जन-समुदाय में और कौन था? मनसुखलाल प्रसन्न थे कि रजऊ जैसी लड़की उनके घर पैदा हुई। उसके कारण ही वे प्रतिष्ठा के पात्र बने। समाज में आगे आये। भोलाराम भी प्रसन्न थे कि ईसुरी ने पहले जो प्रतिष्ठा गिरवायी थी, उसे ब्याज सहित लौटा दिया। उससे और भी आगे आशा थी। कानूनगो भी प्रसन्न थे। इस महोत्सव के वे ही तो प्रमुख कर्णधार थे। यदि वे अपनी बहू को स्वीकृति प्रदान न करते तो कैसे यह सारा रंगारंग कार्यक्रम सामने आता? कैसे समाज में एक नयी चेतना जागती, कैसे एक नया विचार कार्यान्वित होता?

यथा समय रजऊ और ईसुरी को मंडप तले ले जाया गया। वहां मंत्रोच्चार के साथ उन्हें वेदी की प्ररिक्रमा करायी गयी। सामयिक गीतों से सारा वातावरण तुमुल हो रहा था। आनन्द का एक ज्वार-सा उठ रहा था। अन्त में आमंत्रित व्यक्तियों के प्रीतिभोज दिया गया। लोगों ने यथाशक्ति वर-वधू को उपहार भेंट किये। इस तरह ईसुरी और रजऊ का परिणय संस्कार, जो प्रकृति को स्वीकार था, समापन को प्राप्त हुआ।

पं. गंगाधर एक समाज सुधारक नेता के रूप में उभर कर सामने आये।

ईसुरी के सामने अब भी प्रश्न था, मां का वह हार लौटाने का। परन्तु अब तो उसके गले में महाराजा साहब का पहनाया हुआ हार पड़ा था।

अध्याय - ४७

मार्ग में जो सुख है मंजिल में कहां। ईसुरी और रजऊ एक दूसरे को प्राप्त कर ऐसा ही अनुभव कर चले थे जैसे वे मंजिल पर पहुंच गये हों और आगे उनका कोई जीवन न हो। थके मुसाफिर से क्लान्त और श्रान्त। पर तब भी उनके सामने कुछ प्रश्न थे, कुछ समस्यायें जो उनके ध्यान के आकर्षित कर रही थीं। भोलाराम उन्हें कैसे लेंगे? घर में आने देंगे या नहीं। बड़ी बहू के क्या विचार होंगे, उनके प्रति? गांववाले उन्हें किस दृष्टि से देखेंगे। वे क्या जातिच्युत न समझे जायेंगे? घृणा से न देखे जायेंगे? वे समाज के विद्रोही हैं! उनकी प्रतिष्ठा से कितने ही लोग जल गये होंगे। अच्छा तो शायद ही किसी को लगा हो। मनुष्य का स्वभाव ही ईर्षालु होता है, श्रद्धालु नहीं।

ऐसे कितने ही प्रश्न उनके मन में उठ रहे थे। आखिर वह दिन भी आ ही गया, जब उन्हें अपने घर जाकर इन प्रश्नों से भी सुलझना था। मेढ़की में उनके स्वागतार्थ काफी तैयारी की गयी थी। सारे गांव में प्रमुख-प्रमुख स्थानों पर तोरण बनाये गये थे। झंडियों और बन्दरवार भी कई-कई कतारों में बांधे गये थे। भोलारामजी भी प्रसन्न थे। लोगों ने उनके घर को तो ऐसा सजा रक्खा था जैसा पहले कभी नहीं सजाया गया था। सारे गांव के लोग उनके घर पर

आकर एकत्रित हो गये थे। रंग-बिरंगी वेशभूषा में नारियां यहां-वहां खड़ी दिख रही थीं। उत्सुक लड़के-लड़कियां इधर-उधर दौड़ रहे थे।

नियत समय पर एक बैलगाड़ी पर बैठे हुए ईसुरी, रजऊ तथा उनके साथ दलीं और पंडित गंगाधरजी आये। प्रमुख तोरण पर गांव के लोगों ने उनका स्वागत किया। सिर पर मंगल घट रक्खे हुए नारियों ने मंगल गीत गाये। सारा आकाश मधुर-मधुर ध्वनियों से गूंज उठा। एक अपूर्व छटा का उद्घाटन हुआ।

द्वार पर पहुंचते ही नारियों का समूह आगे बढ़ा। तरह-तरह के उपहार देते हुए नारियों ने नव वर-वधू का सम्मान किया। दोनों ने घर के भीतर प्रवेश किया, एक विजय के साथ, आनन्द और उत्साह के साथ!

यहां बाहर चौपाल में भोलाराम ने पं. गंगाधर और दलीं का बड़े सन्मान से स्वागत किया। उन्हें विशेष सुसज्जित आसनों पर बैठाया।

भोलाराम अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हुए बोले, 'पंडितजी! यह सब करिश्मा आप ही का है। आपने ईसुरी को क्या से क्या बना दिया!'

'यह मेरा नहीं,' गंगाधरजी बोले, 'यह करिश्मा इन दलीं महाराज का है। इन्हें क्यों आप भूल रहे हैं?'

भोलाराम हंसते हुए बोले, 'क्यों न भूलूं। यह मुझे भालूराम कहा करता था। मैं इसे मारने को दौड़ता था। इसने मुझे बहुत परेशान किया। यहां तक मेरा रहना ही हराम कर दिया था। ईसुरी इसी के वशीभूत था। मेरी कुछ न सुनता था। जितना यह पानी पिला दे उतना ही पीता था, पंडितजी। कह नहीं सकता, कितना वातावरण बिगड़ गया था। मुझे घर से बाहर निकलना कठिन था। चौपाल में बैठना भी मुश्किल था। लड़के टोलियां बनाये यहां से निकलते, कहते जाते—भालूराम, भालूराम। उन्हीं टोलियों के साथ ईसुरी रहता। उसकी अकल पर ऐसे पत्थर पड़े थे! मुझे चिढ़ाता था।'

दलीं मुस्कराता हुआ बोला, 'पंडितजी! तब आप चिढ़ाने योग्य बन रहे थे। आपने मुझे हार की चोरी लगवायी, भैंस की चोरी लगवायी। पूछिये आप जाकर? हार आपकी बहू के पास? भैंस कलुआ की कलुआ के पास—किसी कानीहौद में बन्द थी। नीलाम भी हो गयी थी, तब उसका पता पड़ा। पंडितजी मैंने तो ईसुरी में एक प्रतिभा के दर्शन किये थे। उसके भीतर कोई कवि बैठा उसक-पुसक रहा था, कोई कविता आहें भर रही थी। मैं यही चाहता था कि उसका कवि न मर जावे, कविता न मुरझा जावे। मेरा और कोई स्वार्थ नहीं था। फागें ईसुरी बनाता था। पैदायशी गुण लेकर जन्मा था। परन्तु लोग मेरे ऊपर शक करते थे। इस शक को

मिटवाने के लिए ही मैंने जेल भोगी। लोगों से माफी मांगकर ही मैं जेल से बच सकता था। ईसुरी को अवसर मिला, वह अपनी प्रतिभा को स्थापित कर सका।'

'वाह, दलीं।' पंडित गंगाधर बोले, 'वास्तव में तुम साधु पुरुष हो। तुमने जो रूप अपनाया है, उसके तुम पात्र हो।'

भोलाराम कुछ लज्जित से होकर बोले, 'दलीं महाराज! मैं तुम्हें पहले नहीं समझ सका। पहले तुम्हें एक गुंड़ा ही समझता रहा। मैं बहुत लज्जित हूं। मनुष्य की बुद्धि कितनी अपूर्ण होती है। वह एक दृष्टि में सम्पूर्णता से न कुछ देख सकता है, न कुछ समझ सकता है। देखो न बेचारे ईसुरी पर हत्या का दोष मढ़ा गया। आधी सजा भी भोग चुका। यह न्यायाधीशों की दृष्टि और समझ का नमूना है। वह तो पंडितजी आगे आ गये और एक बड़े अन्याय का भंडाफोड़ हो गया।'

'सब दलीं की बदौलत,' गंगाधर फिर तकिया से टिक कर बैठते हुए आराम से बोले, 'दलीं ने ही सारा किस्सा मुझे बतलाया, उसी के आधार पर मैंने महाराजा साहब से विनय की। ईसुरी की फागों ने महाराज साहब को आकर्षित किया, परन्तु सबसे बड़े आश्चर्य और आकर्षण की चीज सर्प की घटना हुई। महाराजा साहब उस घटना को देख कर द्रवीभूत हो गये। समझ गये ईसुरी कोई असाधारण आदमी है। महाराजा साहब अब ईसुरी को अपना राजकवि बना लेंगे।'

'पर दलीं को क्या पुरस्कार मिला?' भोलाराम ने पूछा।

'मुझे यही पुरस्कार है,' दली बोला, 'मुझे यह रूप मिला। इस रूप के बाद और क्या चाहिये। अब मैं किसी तीर्थस्थान में बैठकर राम भजन करूंगा। मुझे मानव का दिया पुरस्कार नहीं चाहिये।' ऐसा कहते हुए दलीं की आंखों में आंसू आ गये।

'साधु! साधु!' पं. गंगाधर ने कहा, और अपनी भी आंखें पोंछ लीं। भोलाराम भी भावोद्रेक से अपनी आंखें पोंछते हुए बोले, 'पंडितजी, आप दोनों विभूतियां भोजन कर लें। समय हो गया है।'

दोनों ने स्वीकृति दी। पं. भोलाराम ने उन्हें बड़ी आवभगत के साथ भोजन कराया। पान-तमाखू प्रस्तुत किया।

इसके उपरान्त थोड़ी देर विश्राम करके, पंडित गंगाधर उठे और बोले, 'भोलारामजी, अब आप मुझे आज्ञा दीजिये, मैं चलूं।' ऐसा कहते हुए उन्होंने अपनी गाड़ी जुतवायी। भोलाराम के हृदय से लगे और उनसे विदा ली।

दलीं भी बोला, 'पंडितजी। अब मेरा काम भी समाप्त हो चुका है। अब मुझे भी विदा दीजिये। अब जाकर कहीं तपस्या करूंगा। हो सकता है। यह मेरा और आपका अन्तिम मिलन हो।'



भावोद्रेक से भोलाराम रो पड़े। रोते हुए बोले, 'दलीं महाराज! ऐसा न करना। हम लोगों को दर्शन देते रहना। हम आपको कभी नहीं भूल सकते। आप हमारे लिए ईसुरी से भी अधिक हैं।' ऐसा कहते हुए भोलाराम ने दलीं को हृदय से लगा दिया। दलीं ने उनके चरण स्पर्श किये और विदा ली।

यहां ईसुरी और रजऊ घर के भीतर आये नहीं कि पुरानी स्मृतियां उनके मस्तिष्क में दौड़ीं। यहीं दोनों बचपन में एक साथ खेला करते थे। रजऊ नंगी-उघारी घर से आ जाया करती थी। उसकी मां कपड़े लिए उसके पीछे-पीछे दौड़ा करती थी। एक दूसरे के दावं चुकाने पर दोनों में झगड़ा हो जाया करता था। कभी ईसुरी घोड़ा बना करता था, कभी रजऊ। कितने आनन्द का जीवन था। न किसी की लाज न शर्म। मस्तमौला खेलते थे दिन-दिन भर।

रजऊ के मस्तिष्क में भी वही स्मृतियां दौड़ीं। बड़ी बहू कैसा उसे हाथ पकड़कर बाहर निकाल दिया करती थी। उन दोनों का खेलना देख न सकती। वह फिर उसी घर में आ गयी। बहू बनकर, इतनी धूमधाम के साथ, इतनी लम्बी-टेढ़ी-तिरछी पगडंडियां लांघ कर...

मां को देखते ही ईसुरी को अपनी बात याद आयी। 'अम्मा! तुम्हारा हार ले आया।' ऐसा कहते हुए उसने अपने गले

से वह बहुमूल्य सोने का हार उतारा जो महाराजा साहब ने उसे पहनाया था।

मां ने हार हाथ में लिया। उसे देखते ही भौंचक-सी रह गयी। आनन्दविभोर होकर बोली, 'बेटा, यह हार मेरा नहीं है। यह तेरा है, पुरस्कार का। रख इसे अपने पास। ला इसे मैं तुझे पहना दूं। यह हार मेरे हार से कई गुना अधिक कीमती है। यह तेरी विजय का उपहार है।' ऐसा कहते हुए बड़ी बहू ने वह ईसुरी के ही कंठ में डाल दिया।

रजऊ ईसुरी के बगल में ही बहू बनी बैठी थी। उसे उस हार की याद आयी जिसे उसने दलीं से ले लिया था। पेटी में से उसे निकालती हुई बोली— 'तुम्हारा हार यह है, अम्मा! यह मेरे पास आ गया था। तुम्हारी धरोहर के रूप में।'

बड़ी बहू ने हार हाथ में लिया और प्रसन्नता बिखेरती हुई बोली— 'बहू। मैंने यह तेरे लिए ही बनवाया था। यह तेरे लिए है, तेरा है। ला मैं तुझे इसे पहना दूं।' ऐसा कहते हुए बड़ी बहू ने उसके गले में हार डाल दिया। रजऊ ने उनके चरण स्पर्श किये। बड़ी बहू उसके सिर पर हाथ रखती हुई बोली— 'बेटा अखंड सौभाग्यवती हो! तू मेरे घर की लक्ष्मी है। कीर्ति भी। बड़ी तपस्या के बाद तू प्राप्त हुई। मेरे लड़के ने तेरे लिए रात-रात भर अलख जगाया। आंधी-पानी की बौछारें झेलीं। पंचाग्नि तपी। गालियां सहीं। मार खायी। आवारा बना घूमता रहा। निराश्रित, निष्कासित। बाप ने घर से निकाला। नौकरी की। मालिकों ने जेल भिजवाया। वह दलीं बन गया देवता उसके लिए। जिसे हमने गुंडा समझा, देवदूत निकला। वह भी बेचारा साधु बनकर चला गया तपस्या करने।'

इस तरह कितनी-कितनी बातचीत और व्यस्त नेग-दस्तूरों के साथ दिवस बीता। संध्या समय आमंत्रित महिलाओं के साथ बड़ी बहू रजऊ और ईसुरी को लेकर देवी के मन्दिर को गयी। गाते-बजाते देवी की पूजा की और थोड़ी रात गहराते ही घर आयी। आमंत्रित महिलायें अपने-अपने घर गयीं। कार्यक्रम समाप्त हुआ। बड़ी बहू भोलाराम के कमरे में गयी।

यहां ईसुरी और रजऊ अपने शयन कक्ष में आये। दोनों सामने पड़े सुसज्जित पलंग पर ऐसे बैठ गये जैसे बड़ी लम्बी यात्रा करके आये हों। ईसुरी अपनी सतृष्ण दृष्टि से रजऊ की ओर देखता हुआ बोला, 'रजऊ! देख। इसे कहते हैं विधि विधान! तू तो मुझे भूल ही गयी थी। अपने को खो बैठी थी। पर मैं तेरे लिए अलख जगाता फिरा। तेरे गीत गाता फिरा। उस बब्बू ने तो मेरे प्राण ही ले लिये थे। परन्तु यह प्रेम की शक्ति थी जिसने प्राणों को जाने से बचाया। कैसी शक्ति है प्रेम में। कितने भटकाव के बाद, कितने अलगाव के बाद हम फिर एक हो सके। खेलने के लिए फिर वही

अपने बचपन के खेल। रजऊ! बचपन से ही तेरी आंखें मेरी आंखों में अपना घर बनाती रहीं, तेरी भाव-भंगिमायें मेरे अंग-अंग में अपना भवन बनाती रहीं, तेरी रूप माधुरी मेरे मानस में अपने को घोल-घोलकर ज्वार उठाती रही। मैं और तू बुनियाद से ही एक रूप बनते रहे, फिर किस समाज में दम था कि मुझे और तुझे एक दूसरे से पृथक कर दे। मैंने फागें गायीं, आग उछाली। जल गयी होलिका उसकी जो बीच में घास-फूस बनकर आया। हमारे मार्ग का व्यवधान बना।'

रजऊ लज्जा से नतमस्तक किये, मुस्कराती हुई बोली, 'मुझे ये बीती बातें कुछ नहीं सुनना। बीती बातें बीत गयीं। उन्हें जहां जाना था चली गयीं। अब अपनी कोई ऐसी फाग सुनाओ, जिससे कुछ अनुराग बरसे। आपकी पहली फागों से झुलसा हुआ शरीर फिर से हरा-भरा हो जाये।'

ईसुरी ने फिर वही अपनी समाधि मुद्रा बनायी और फाग उठायी—

नैंया रजऊ काउ के घर में —
विरथा कोऊ भरमें,
सब में हैं और सब से न्यारी —
सब ठौरन में मरमें,
को कहं अलख-खलक की बातें —
लखो न जाय नजर में,
ईसुर गिरधर रयें राधा में —
राधा रयें गिरधर में।

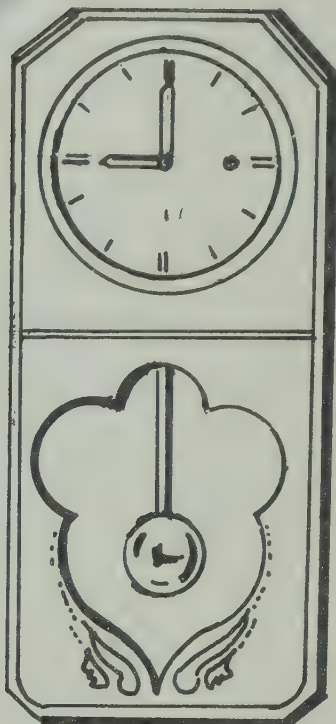
ऐसा कहते हुए ईसुरी ने रजऊ को अपने आलिंगन में समेट लिया। यामिनी ने आकर यवनिका गिरा दी।

(समाप्त)

रायगढ़ के स्वर्गीय राजा चक्रधरसिंहजी के मन में एक बार यह उमंग आयी कि हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ आलोचक, सर्वश्रेष्ठ कवि और सर्वश्रेष्ठ कहानीकार की वे नियमित रूप से आर्थिक सेवायें कर सकें तो उनका अहोभाग्य। यह लगभग ५४-५५ वर्ष पूर्व की बात है। आलोचकों में आचार्यप्रवर महावीर प्रसादजी द्विवेदी चुने गये, कहानीकारों में प्रेमचन्दजी और कवियों में निरालाजी। प्रेमचन्दजी ने तो शिष्टतापूर्ण उत्तर लिख भेजा कि उन्हें इस प्रकार बन्धन से अब मुक्त ही रखा जाय, परन्तु निरालाजी के पास उनके एक सुहृद जब वह पत्र लेकर गये तब वे पत्र हाथ में लेकर मित्र से इधर-उधर की चर्चा करते रहे और उनका हाथ आप ही आप उस पत्र को मोड़माड़ कर टुकड़े-टुकड़े करता रहा। मित्र महोदय विदा होने के समय जब पत्र का उत्तर मांगने लगे तब जैसे सोते से जागकर निरालाजी ने कहा— 'अरे, उस पत्र, उसका उत्तर? ओह, वह पत्र तो अब टुकड़े-टुकड़े हो गया। बस, यही उत्तर आप मेरी ओर से पहुंचा दीजियेगा।'

— डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'

समय को कितना पहचानते हैं आप ?



□ दुर्गाशंकर त्रिवेदी

स्व. काका कालेलकर जैसे सफल जीवनशास्त्री को गये अभी कुछ अधिक समय नहीं हुआ। वैसे मेरी उनसे कोई विशेष जान-पहचान या घनिष्ठता नहीं थी। फिर भी मेरी उनसे एक बार जो संक्षिप्त बातचीत हुई थी वह कभी नहीं भुला पाने वाली बात हो गयी। बात यह थी कि मुझे एक विशिष्ट पत्रिका ने उनके पास साक्षात्कार के लिए भेजा था। इसलिए चरण-स्पर्श कर परिचय देकर आशीर्वाद के वचन सुन उस श्वेत दाढ़ीवाले संन्यासी से मैंने पहला प्रश्न किया, वह यह था-'काकाजी, आपने जीवन के कई पहलू देखे हैं। जीवन में ऊंचा उठने के लिए किसी को भी क्या-क्या चाहिये-शिक्षा, मस्तिष्क धन या शक्ति ?'

हल्की-सी मुस्कान बिखेर कर दाढ़ी हिलाते हुए उन्होंने कहा –'भाई ! ये सभी चीजें तो ऊंचा उठाने में सहायक जरूर हो सकती हैं, पर ये अनिवार्य तत्व नहीं हैं। मेरे अपने विचार से एक चीज का महत्व जीवन में सबसे अधिक है और वह है उचित समय की सही माने में परख।' मैने पेंसिल डायरी पर टिकाकर उनकी तरफ जिज्ञासापूर्वक कहा – 'क्या कहा, काकाजी ? सही समय की सही माने में परख।'

'हाँ हर चीज का एक समय होता है-कोई काम करने का या नहीं करने का। इसी तरह से कोई बात कहने की या चुप रहने की। कोई काम हाथ में लेने का या नहीं लेने का। अधिकांश लोग समय

को नहीं परख पाने से ही दुखी बने रहते हैं, असफल रहते हैं। मैं जीवन में समय को ही सबसे अधिक महत्वपूर्ण मानता हूं।'

घड़ी की कुछ तो सुनें

सफलता की चोटी पर अल्प समय में ही चढ़ जाने में समर्थ अभिनेता चार्ल्स कोवर्न ने एक ही प्यारी बात कही थी — 'प्रायः हम खूब अच्छी तरह समझते हैं और मेरा विश्वास है जीवन की कुंजी भी वह है। अगर आपने विवाह, आजीविका और अपने व्यवहार आदि में समय को परखने की कला सीख ली है तो आपको किसी भी खुशी या सफलता की खोज में मारे-मारे फिरने की कोई जरूरत नहीं है, वह खुद आकर आपका द्वार खटखटाया करेगी।'

बात यह है कि, समय को देखने-समझने और व्यावहारिकता में कबूलने में बड़ा ही मीठा फल प्राप्त हो सकता है। यदि आप सही-सही वक्त आने पर उसे परखना और बीत जाने के पहले उससे लाभ उठाना सीख लेते हैं,तो जीवन की करीब-करीब सभी समस्याओं का व्यापक हल ढूंढ़ निकालते हैं। हमारे घर से लगी घड़ी, हाथ में बंधी घड़ी, टिक-टिक के साथ ही साथ हमें कुछ न कुछ कहती ही है-हम उसे सुनें या न सुनें। व्यावहारिक रूप से कुछ उपलब्ध करने के लिए जरूरी है कि हम समय को पकड़ने-परखने की कला सीखें।

जीवन की रेल-पेल में जो लोग लगातार असफल होते रहते हैं, वे अक्सर प्रतिकूल परिस्थितियों को भला-बुरा कहने लगते हैं। वे यह कभी नहीं सोच पाते की यह समय कैसा था ? बस वे तो बारम्बार अपनी उसी धुन में बेवक्त हाथ-पैर पीटा करते हैं। दरअसल उनके साम्हने असली समस्या दुर्भाग्य की नहीं, बल्कि समय को गलत समझने की होती है। घड़ी हमें वक्त को समझने, उसे मुट्ठी में कैद करने को कहती रहती है। जरूरी है कि हम वक्त की गरिमा को समझें।समय हाथ से फिसल कर गया है, फिर पकड़ में कहां आ पाता है ? समय को तो नदी की धार समझिये। उस पर बांध बना कर उसे रोक लिया तो ऊर्जा का एक सहज स्रोत आपके पास सुरक्षित हो ही गया समझो।

यदि वो समय को परख लें

बातों ही बातों में एक दिन काव्य प्रतिभा के धनी विद्वान न्यायाधीश श्री सोहनराज कोठारी से टूटते,बिखरते, दाम्पत्य परिवेश पर चर्चा चल उठी। वे बड़े ही गंभीर होकर बोले थे -'मुझको इन झगडा़लू दम्पतियों पर सचमुच ही तरस आने लगा है। कितना अच्छा होता यदि वे समझ पाते कि हर व्यक्ति के क्षोभ, उत्तेजना आदि की एक विशेष सीमा होती है। कोई भी अपनी आलोचना या टीका-टिप्पणी पसन्द नहीं

करता है। होता तो यहां तक भी है कि कभी-कभी तो कोई सही राय तक भी नहीं सुनना पसन्द करता। यदि वे समय को परख लें तो बात बड़ी सहजता से बन सकती है। यदि नवविवाहित स्त्री-पुरुष एक दूसरे की मनः स्थितियों को समझने, भावात्मक पक्ष को पहचानने और उचित अवसर देखकर अपनी परेशानियां बताने या प्रेम प्रकट करने की ही तकलीफ गवारा कर सकें तो तेजी से आ रही सलाकों की बाढ़, जो भयंकर बाढ़ है, सहज ही नष्ट हो सकती है। परिस्थितियों और समय में सामंजस्य बिठाने पर सारी बात नया परिवेश ले उठती है।'

इस तरह से जीवन की कला के चिंतन ने जो बात कही थी, उसको न्याय की तुला के पारखी ने भी सही निरूपित किया था। अधिकांश दम्पतियों में अनावश्यक तनावों की जो मनःस्थिति बनती है, वह सिर्फ इसलिए बनती है कि वह स्त्री उस वक्त अपनी परेशानियों की रामायण खोल उठती है, जबकि पति थका, भूखा, प्यासा लौटता है। उन्हें ज़रा-सा भी सब्र नहीं होता है कि अपनी भड़ास निकालने के बारे में वे धैर्य तो रक्खें। वे उसे ठीक तरह से भोजन तक भी नहीं करने देती हैं, बात-बेबात शिकायत पुराण की परम्परा शुरू हो उठती है।

लगभग यही बात बाल-बच्चों के लालन-पालन के संबंध में लागू होती है। उनको डांटना-डपटना है – आप सिर्फ इतना ही जान लें तो समझ लीजिये कि जिन्दगी मात्र से जीने की आधी समस्या तो आपने हल कर ली। बच्चों से जरूरत से ज्यादा अपेक्षाएं रखने और उन्हें एक डण्डे से हांकने की कोशिशों में सन्तानों की कटुता उत्पन्न होनी शुरू होती है। बच्चों की टीम कोई मशीनों का समूह तो होती नहीं। वह कभी थका, कभी चंचल और कभी परेशान रहता है। साथ ही सभी में एक जैसी कुशाग्रता, एक जैसा गुण भी होता नहीं। अतः उनकी भावनाओं और समय को परख कर ही उनके प्रति कुछ व्यवस्थित नीति अपनानी चाहिये।

मनोवैज्ञानिक साहित्य के विश्व प्रसिद्ध लेखक आर्थर गार्डन ने प्रेम के लिए भी इसी भूल को महत्व दिया हैं। वे लिखते है –'प्रेम की सफलता या असफलता में भी समय की परख का बहुत बड़ा हाथ रहता है। हमें एक नौजवान हेडमास्टर पादरी पढ़ाया करते थे। उन्होंने बोस्टन की एक बड़ी सुन्दर और नयी अभिनेत्री से विवाह किया। सब लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ, भला इस दीन-हीन गरीब के साथ वह कैसे विवाह के लिए तैयार हो गयी। अंत में जब एक व्यक्ति से नहीं रहा गया तो उसने पूछ ही लिया कि क्या रहस्य था, उस अभिनेत्री की रजामन्दी के पीछे।

पादरी ने धीरे से कहा – मित्र, मैं पहले से ही जानता था कि इस मामले में मेरे कई प्रतिद्वंद्वी हैं। लेकिन मुझे यह भी पता था कि मैं जिस लड़की से प्यार कर रहा हूं वह बड़ी ही रहमदिल और कृपालु है। एक दिन बर्फीली रात में जब मैं उसके साथ बाहर जा रहा था, अचानक सीढ़ियों में फिसल कर गिरने की घटना हुई। वैसे मेरे कोई ज्यादा चोट नहीं लगी थी। लेकिन मैं तब तक उसी हालत में पड़ा रहा, जब तक उसने लिपट कर मुझे नहीं संभाला। तब मैंने धीरे-धीरे कराहना बन्द किया और उनके सामने विवाह का प्रस्ताव रखा।

यह तो मैं पहले ही भांप गया था कि वह मेरे इस प्रस्ताव को ठुकरा कर मुझको उस हालत में और ज्यादा निराश या दुखी नहीं करेगी। हुआ भी यही वह सहर्ष तैयार हो गयी।'

यह प्रसंग भी वही तो कह रहा है कि समय को कितना पहचानते हैं आप? वास्तव में समय को सही रूप में परखने की कला भी एक कौशल है। वैसे यह ईश्वर प्रदत्त जन्मजात गुण ही होता है। परन्तु जीवन को अन्य कलाओं की भांति इसे भी विकसित किया ही जा सकता है। यह कोई कठिन काम नहीं है। जरूरी यह है कि हम स्थिति का पूरा-पूरा जायजा लें और अपनी क्षमताओं के अनुरूप समय को फलीभूत करें। अपनी पत्रकारिता के आधार यायावर जीवन में मैं कई ऐसे लोगों के सम्पर्क में आया हूं, जो इस जीवन में बहुत कम सुविधाएं,साधन पाकर भी महत्वपूर्ण उपलब्धियां हासिल कर सके। उनके सत्संग और जीवन प्रणाली को देख-परख कर जो तथ्य हाथ लगे वे इस प्रकार हैः ये संकेत या ऐसी ही मनोभूमि निर्मित करके जीवन को व्यावहारिक रूप में सफल जीवन बना सकते हैं।

निर्णायक क्षण को पकड़ें

सफलता आपकी चेरी होकर रहेगी। हमेशा हमें यह ध्यान रखना ही होगा कि लोगों के जीवन में कई बार ऐसे क्षण आते हैं, जो निर्णायक क्षण होते हैं। हमें उन क्षणों को लाने की स्थिति बनाना, उन्हें परखना और पकड़ना आना चाहिये। महाकवि शेक्सपीयर ने कहा है – 'प्रत्येक व्यक्ति के जीवन व्यवहार में ऐसा क्षण (ज्वार-भाटा) भी आता है, जबकि यदि वह उस आवेग को या प्रवाह को रोक ले तो अपनी तस्वीर बदल सकता है।'

हममें से अधिकतर लोग ऐसे क्षणों को या तो पहचान नहीं पाते हैं या फिर पकड़ नहीं पाते हैं। इसलिए यदि एक बार आपने इन क्षणों का पूरा-पूरा महत्व आंक लिया तो समझ लीजिये कि आपने एक काल तो निश्चित रूप से कर ही डाला। इसे सजग दृष्टि से करने-कराने पर निगाहें केन्द्रीभूत जरूर

करते चलिये।

मनोवेग पर काबू कीजिये

जीवन में सफलीभूत होने का दूसरा महत्वपूर्ण सूत्र है-आप अपने मन में इस बात का पूरा-पूरा निश्चय कर लीजिये कि आप क्रोधित होंगे तब भय, द्वेष, ईर्ष्या आदि आवेगों के चक्कर में फंसे होंगे, तब कोई भी काम नहीं करेंगे। उत्तेजक क्षणों में बोलेंगे या फैसला तक भी नहीं करेंगे। ऐसे निश्चय करना और उस पर अमल करते रहना दोनों ही बड़े कठिन हैं। पर मनोवेगों पर काबू कर लिया गया तो वक्त आपके लिए स्वर्णिम भविष्य को लेकर उपस्थित रहेगा। सदैव ध्यान रखिये कि आवेगों के ये जालिम मरोड़ समय परखने वाली एक विकसित मशीन को नष्ट-भ्रष्ट कर डालते हैं। अच्छे से अच्छे समझदार संयत और मनस्वी को भी उन्मत्त कर देते हैं। इसलिए काबू कीजिए इनकी उद्दाम मनोवेगीय मनः स्थितियों पर।

आशावादी बनिये

किसी भी व्यवसाय में हों आप। आपका भविष्य अंधकारमय या निराशा भरा नहीं है। भावी संभावनाओं का सही-सही अनुमान लगाइये और आशावादी बनकर कुछ कीजिये। कल अधिक अच्छा संदेश लेकर आ रहा है। यह आस्था पालकर आप स्वयं को ओर भी महत्वपूर्ण बना ही सकते हैं। रोजमर्रा की समस्याओं को परेशानियों को कम किया जा सकता है। आशावादी बनिये और एक सार्थक दृष्टिकोण अपनाइए उसके बारे में।

धैर्य भी जरूरी है

जीवन में हम सफल लोगों की तरफ देखें तो पायेंगे कि वे सदैव धैर्य को महत्व देते रहे हैं। होता यह है कि जब लोग अपने सामने कोई उपयुक्त अवसर नहीं देखते हैं तो फौरन मन में धार लेते हैं कि सब कुछ हाथ से चला गया। अब कभी भी अच्छा अवसर शायद आने का नहीं। फिर वे जल्दबाजी में नासमझी में अपना सब कुछ चौपट कर बैठते हैं। डिजरायली ने कहा है – कोई भी व्यक्ति अगर कुछ देर प्रतीक्षा कर सके तो उसे सब कुछ प्राप्त हो सकता है।

हर व्यक्ति के लिए परिस्थिति या आवश्यकतानुसार इस 'धैर्य' या 'प्रतीक्षा' की अवधि अलग-अलग हो सकती है। कभी-कभी वर्षों भी, कभी-कभी महीनों भी। कभी चन्द मिनटों, सेकेंडों में बन सकती है। यह आप पर निर्भर करता है कि प्राप्य को प्राप्त करने के लिए आप धैर्य कितना रख पाते हैं।

अंतर्मुखी मत बने रहिये

अंतर्मुखी बनकर मनुष्य अपनी कमजोरियों को देखे परखे और सुधारे तो ठीक है। पर अंतर्मुखी ही बने रहना भी गलत है। आप अपने आप में से बाहर निकलना सीखें। एक-एक क्षण

महत्वपूर्ण होता है। हर प्राणी उसे अपने-अपने हिसाब से वसूलना चाहता है। अतः दूसरे उसे कैसे सदुपयोग में लायेंगे, यह इस तथ्य पर निर्भर करता है कि वह दूसरों को कैसा लगता है। इसलिए हम अपने कमरे से जरा बाहर निकलकर परिवेश के अनुरूप अपने आपको ढालने की कोशिश करें तो स्थिति में क्रांतिकारी परिवर्तन आ सकता है।

पूरी शक्ति से लगें

समय को परखना और उसे पकड़ना ही जरूरी नहीं है। पूरी शक्ति से उसे वसूलने के लिए प्रयत्न करना भी उतना ही जरूरी है। महात्मा गांधी की यह राय इस संदर्भ में वरेण्य है कि अच्छे गवैये स्वर को नीचा या ऊंचा वहीं पकड़ते हैं, जिसे वे अच्छी तरह निभा सकें। फिर उस पर अपना सारा जोर लगा देते हैं। तभी उनके गाने में पूरी मिठास और लोच आती है। यही हाल कर्म-कला का है। काम छोटा किया जाय या बड़ा, वह तो अपनी-अपनी शक्ति पर निर्भर है। परंतु जिस कार्य को अंगीकार किया जाये उस पर अपने मन, बुद्धि और शरीर को पूरी ताकत से लगा देने से ही वह अच्छी तरह पूरा हो पाता है।

इसलिए जिस किसी भी काम में आप लगें, पूरी ताकत से लगें। पूरी शक्ति से लगेंगे तभी समय पकड़ने-परखने का कुछ लाभ मिल पायेगा।

निर्णय शक्ति बढ़ाइये

कई लोग निर्णय अनिर्णय के झूले में झूलते रहने वाली मनःस्थिति में जीते हैं।

वे वक्त को गालियां देते रहेंगे। पर जो सही-सही निर्णय सही वक्त पर ले लेते हैं, उन्हें किसी भी तरह का व्यवधान नहीं उठाना पड़ता है। आप अपनी निर्णय शक्ति को पूरी तरह विकसित कर लीजिये। आप पायेंगे कि सफलता आपके नजदीक खुद ही चली आ रही है।

वस्तुतः समय की परख का कोई एक खास फारमूला तो है नहीं। वह सजगता, आत्मसंयम, आशा धैर्य, कल्पना आदि कई गुणों का मिक्चर होता है। जो समय को परखने में सक्षम होगा, वह जीवन जीने की कला का पारंगत पारखी होगा। इसलिए समय को पहचानने की कोशिश जारी रखिए। **– बी. ११६ विजयपथ, तिलकनगर, जयपुर-३०२ ००४**

नारी! तुम केवल श्रद्धा हो, विश्वास रजत-नग पग तल में,
पीयूष स्रोत-सी बहा करो, जीवन के सुन्दर समतल में।
जयशंकर प्रसाद

नवगीत

जोड़-तोड़ की क्रिया में
तूने क्या किया
किनसे हिसाब लिया
किनको दिया ।

समझौतों की दुकान
खुल गयी
अपराधियों की कमीज
धुल गयी

*

लेन-देन की दिशा में
तूने क्या किया
किनसे उधार लिया
किनको दिया ।

*

बैसाखियां हाथ-पांव
बन गयीं
झरबेरियां घनी छांव
बन गयीं

ताल-मेल की दशा में
तूने क्या किया
किनको निकाल दिया
किनको लिया ।

*

दूध में नहा के सब सपूत
आ गये
साजिशों के सारे सबूत
खा गये

*

काट-छांट की कला में
तूने क्या किया
किनको उभार दिया
किनको सिया ।

— सच्चिदानन्द सिंह समीर
समीर कुटीर, मेंडोजा इस्टेट, रिजरवायर रोड, भाण्डुप
मुंबई - ४०० ०७८

अरब व फारस से
भारत तक

गज़ल की यात्रा



□ महेन्द्र सिंह लालस

ग़ज़ल शब्द का अर्थ है – प्रेमिका से बातें करना, प्रेमिका के बारे में यह भी कह सकते हैं कि प्रेम की अभिव्यक्ति ही ग़ज़ल है!

मूल फ़ारसी में ग़ज़ल की परिभाषा बतायी गयी है– 'सुख़न बन जना' जिसका अर्थ है औरतों के बारे में बातचीत करना या आशिक और माशूक का वार्तालाप जिसका आधार इश्कहकीकी और इश्कमज़ाज़ी दोनों होते हैं।

अरबी भाषा में ग़ज़ल का अर्थ है– कातना-बुनना। वैसे ग़ज़ल शब्द ग़ज़ाल से बना है जिसे हिरण के लिए इस्तेमाल किया जाता है। हिरण की इसी जाति को अरबी में गे़ज़ेल कहते हैं।

सच कहा जाये तो ग़ज़ल पर मूल अरबी-फ़ारसी विश्लेषण पूरी तरह लागू नहीं होते, क्योंकि ग़ज़ल ने अपनी विकास यात्रा के कई सोपान पूरे कर डाले हैं। चूंकि औरतों की बातचीत एक विषय पर आधारित नहीं होती और वे कई विषयों पर टुकड़ों में बातचीत करती हैं इसलिये ग़ज़ल में निरन्तरता के नहीं होने की बात कही जाती है। मगर आज की ग़ज़ल इस प्रतिबद्धता को भी छोड़ती नज़र आती है।

ग़ज़ल की उत्पत्ति अरबी काव्य कसीदा से जुड़ी हुई है। कसीदा अर्थात् किसी की शान या बड़ाई में कुछ कहना। जिस तरह आज कुछ ग़ज़ल-गायक या कव्वाल ग़ज़ल पढ़ने से पहले शेर पढ़ते हैं उसी तरह अरब में कसीदे से पहले ग़ज़ल कही जाती थी। कसीदा शब्द से ही हिन्दी में तारीफ़ में कसीदा काढ़ना मुहावरा निकला है। अरब में जन्म लेने के बाद ग़ज़ल धीरे-धीरे हमारे उपमहाद्वीप की तरफ़ बढ़ने लगी। भारत ने ही ग़ज़लरूपी पौधे को सींचा और उसे एक कद्दावर शजर में

बदल दिया।

हमारे यहां ग़ज़ल ने मुस्लिम सूफ़ी संतों के खानकाहों और आश्रमों में जगह पायी। सूफ़ी संत उस परवरदिगार (ईश्वर) की प्रशंसा में कव्वाली की शक्ल में ग़ज़ल को गाते थे। खानकाहों और मस्जिदों से उठकर ग़ज़ल राज-दरबारों में आयी और स्वाभाविक रूप से इसके मिजाज़ में अन्तर आया।

सूफ़ी अपने को आशिक़ कहते हैं जिसका माशूक़ है परवरदिगार। जिसने संसार को रचा है। यह भावना बिल्कुल इश्क़हक़ीक़ी (ईश्वर भक्ति) थी। मगर माहौल के मुताबिक़ इश्क़मज़ाज़ी यानी सांसारिक बन गयी। ग़ज़ल में वियोग का दर्द और संयोग की मर्यादा झलकने लगी।

ग़ज़ल दरबारों की शान तो बन गयी लेकिन आम लोगों के बीच उठने-बैठने को छटपटाने लगी। मीर और ग़ालिब जैसे प्रतिभाशाली रचनाकारों ने ग़ज़ल को पुरानी बोधगम्यता से दूर हटाकर सामान्यजन से जोड़ दिया, लेकिन ग़ज़ल का मोह तब तक दरबारों और महफ़िलों से छूटा नहीं। उस समय की ग़ज़ल संगमरमरी बदन, शमा-परवाना, जामोमीना और शबाबो शराब के शब्दजालों के बीच झूलती रही।

ग़ज़ल का सौभाग्य था कि कई अनूठे रचनाकारों ने कलमबाज़ी के लिए इसी विधा को चुना। जौक़, फ़िराक़, मोमिन, दाग़ और आतिश जैसे शायरों ने बड़ी सुंदरता से ग़ज़ल को एक नयी ज़मीन पर उतार डाला। कथन और शिल्प की दृष्टि से उर्दू ग़ज़ल ने फ़ारसी शैली को बनाये रखा मगर ग़ज़ल और शब्द-शिल्प ज्यादा सरल, भावपूर्ण और सुंदर हो गये। उर्दू ग़ज़ल का एक चेहरा गढ़ा जा चुका था।

ग़ज़ल के साथ सबसे निराली बात ये रही कि अपनी विकास यात्रा के दौरान ये किसी भी बंधे बंधाये नियम से जुड़ी नहीं रही। यहां तक कि उर्दू से जुड़ी रहने के बाद ग़ज़लें बीसवीं शताब्दी तक हिन्दी और दूसरी क्षेत्रीय भाषाओं में भी कही जाने लगीं।

ग़ज़ल का शेर दो पंक्तियों में कहा जाता है। ग़ज़ल की दो प्रारंभिक पंक्तियों को 'मतला' कहते हैं और आख़िरी दो पंक्तियां जिसमें शायर अपना तख़ल्लुस इस्तेमाल करता है 'मक्ता' कहलाती हैं। ग़ज़ल को रदीफ़ काफ़िया से गूंथा जाता है। रदीफ़ वह शब्द होता है जो पूरी ग़ज़ल में बरक़रार रहता है और काफ़िया माने छंदमेल।

ग़ज़ल ने कला के किसी भी क्षेत्र को अछूता नहीं रखा। और इस काव्य की लोकप्रियता दिनोंदिन बढ़ती ही रही है। कोठों से उठाकर बरकत अली, कुन्दनलाल सहगल और बेग़म अख़्तर अपने सधे हुए सुरों में पिरोकर ग़ज़ल को ड्रॉईंगरूम तक ले आये। उधर शकील,

साहिर और सुदर्शन फ़ाकि़र जैसे शायरों ने फ़िल्मी संगीत के माध्यम से ग़ज़लों को जन-जन तक पहुंचा दिया। ग़ज़ल मंच-गायकी की एक लोकप्रिय विधा बन गयी। मेहदी हसन, गुलाम अली, जगजीत-चित्रा, राजकुमार रिज़वी जैसे मंजे हुए फ़नकारों की श्रृंखला में तलत, अज़ीज़, अहमद-मोहम्मद हुसैन, चंदन दास, पंकज उधास और ए. हरिहरन जैसे प्रतिभाशाली ग़ज़लगायक जुड़ते गये और ग़ज़ल कोनों कूचों में गूंजने लगी।

उर्दू ग़ज़लकारों के साथ-साथ हिन्दी ग़ज़लों में भी कलम चलती रही। भारतेन्दु, निराला, प्रसाद और हरिऔध जैसे रचनाकारों ने भी ग़ज़लें कहीं, लेकिन ग़ज़लों का हिन्दी स्वर बुलन्द करने वाला सबसे पहला शख़्स था· दुष्यन्त कुमार। दुष्यन्त ने कम उमर में कम रचनाओं से ही ग़ज़ल को एक नयी डगर के मुंह पर ला खड़ा किया।

आज सड़कों पे चले आओ तो दिल बहलेगा
चन्द ग़ज़लों से तन्हायी नहीं जाने वाली ।

अपनी एक प्रतिनिधि ग़ज़ल में दुष्यन्त कहते हैं :

मैं जिसे ओढ़ता-बिछाता हूं
वो ग़ज़ल आपको सुनाता हूं ।

दुष्यन्त की परम्परा को सूर्यभानु गुप्त, बालस्वरूप राही, कुमार शिव, कुंअर बेचैन, नईम, जावेद अख़्तर, मनोहर प्रभाकर जैसे रचनाकारों ने बनाये रखा। आम आदमी का दर्द ग़ज़लों में मुखर हो उठा।

बी-१२ आकाशवाणी कॉलोनी,
हिरण नगरी सेक्टर V,
उदयपुर - ३१३ ००१, राजस्थान



विचारणीय प्रश्न

क्या हम परिस्थिति के हाथ की कठपुतली हैं ?



□ युवाचार्य महाप्रज्ञ

मानसिक चिकित्सा की एक सौ पचास पद्धतियां हैं। उनमें एक है व्यवहारवादी पद्धति। इस पद्धति के अनुसार कोई भी व्यक्ति अच्छा नहीं होता, बुरा नहीं होता। बच्चा जन्म से न अच्छा होता है, न बुरा होता है। उसे जैसा वातावरण मिलता है, जैसी परिस्थिति मिलती है, वह उसके अनुरूप अच्छा या बुरा बन जाता है।

वाटसन ने कहा – 'यदि मुझे वातावरण पर पूरा अधिकार मिल जाये तो मैं चाहे जैसे व्यक्तित्व का निर्माण कर सकता हूं।' यह व्यवहारवादी पद्धति का अभिमत है। यदि हम आत्म-विज्ञान की दृष्टि से विचार करें तो कुछ नयी बातें सामने आयेंगी। यदि आदमी जन्म से अच्छा या बुरा नहीं होता है तो अतीत के बोझ एवं संग्रह की सारी चर्चा व्यर्थ हो जायेगी, अतीत के साथ हमारा कोई संबंध नहीं रह जायेगा। जैसा वर्तमान का वातावरण, जैसी वर्तमान की परिस्थिति, वैसी हमारी निर्मिति। यदि ऐसा व्यक्तित्व अस्तित्व में आ जाये जो अच्छा या बुरा कुछ भी नहीं हो, तो दुनिया का एक बड़ा आश्चर्य हो जाये, किन्तु ऐसा होता नहीं है।परिस्थितियां उद्दीपन कर सकती हैं, वातावरण निमित्त बन सकता है, किन्तु मूल कारण के अभाव में उनका प्रभाव नहीं होता।

उद्दीपन और निमित्त का होना एक बात है और मूल कारण का होना बिल्कुल दूसरी बात है। यदि मूल कारण ही नहीं है तो किसका उद्दीपन होगा?

किसका वातावरण होगा ? इस स्थिति में आत्मा के अस्तित्व का प्रश्न भी पैदा हो जायेगा। आत्मा का अपना कर्तृत्व भी कुछ नहीं रह पायेगा। व्यक्ति के हाथ में कुछ भी नहीं है, न आत्मा, न आत्मा का कर्तृत्व, सब कुछ परिस्थिति के हाथ में है।

सांख्य दर्शन में आत्मा को मानते हुए भी यह माना गया – सारा बंध और मोक्ष प्रकृति में होता है। आत्मा बिल्कुल शुद्ध, बुद्ध और मुक्त रहता है। यदि सांख्य-दर्शन की इस बात को स्वीकार करें तो वाटसन की बात केवल भौतिक जगत पर लागू होगी, आत्मा पर लागू नहीं होगी। यदि हम आत्मा को परिणामी मानें तो वाटसन की बात समझ में नहीं आती। यदि हमारा कुछ भी नहीं है तो हम परिस्थिति के हाथ की कठपुतली मात्र हैं। जैसी परिस्थितियां मिलीं, हम वैसे ही बन गये, इसीलिए हमारा अपना कोई अस्तित्व नहीं है। यह बात समझ से परे है।

बिना वृत्ति का कोई आदमी नहीं होता। प्रत्येक व्यक्ति में अच्छी या बुरी कोई न कोई वृत्ति जन्मना अवश्य मिलेगी। प्रत्येक आदमी अपनी वृत्तियों के साथ जन्म लेता है। आज के आनुवंशिकी विज्ञान (जेनेटिक साइंस) में यही बात कही जाती है– प्रत्येक व्यक्ति अपने पैतृक संस्कारों के साथ जन्म लेता है, गुणसूत्र और जीन के साथ जन्म लेता है, पैतृक गुणों की स्वीकृति वर्तमान विज्ञान दे रहा है। यदि हम कर्म-सिद्धान्त के आधार पर चलें तो इससे आगे की बात स्वीकृत हो जायेगी, अतीत की स्वीकृति हो जायेगी।

यह बात प्रामाणिक लगती है कि जो व्यक्ति जन्म लेता है, वह अच्छाई या बुराई के बीजों के साथ जन्म लेता है। अपनी थाती, अपनी धरोहर, अपनी विरासत, अपनी पैतृक संपत्ति को साथ लेकर आता है और उसके साथ अपने जीवन का प्रारंभ करता है।

यह सचाई है – अच्छाई और बुराई – दोनों की वृत्तियां प्रत्येक व्यक्ति के साथ रहती हैं। वृत्तियां दो ही हैं – एक अच्छाई की और एक बुराई की। इसे इस भाषा में भी कहा जा सकता है : एक है राग की वृत्ति और एक है द्वेष की वृत्ति। मनोविज्ञान में वृत्तियों का जो विस्तार किया गया है, वह सापेक्ष बात है। अपेक्षा के साथ वृत्तियों के चाहे जितने प्रकार किये जा सकते हैं। फ्रायड ने बहुत विश्लेषण के बाद अपनी विश्लेषणवादी पद्धति में बतलाया – वास्तव में दो ही वृत्तियां हैं, जीवनमूलक प्रवृत्ति और मृत्युमूलक प्रवृत्ति। शेष सब इन दोनों के विस्तार हैं। भूख, सेक्स, प्यास आदि-आदि जीवन-मूलक प्रवृत्तियां हैं। संघर्ष, झगड़ा, कलह आदि मृत्यु-मूलक प्रवृत्तियों में समाविष्ट हो जाते हैं।

मौलिक प्रवृत्तियां दो हैं – जीविताशंसा और मरणाशंसा। हम कर्मशास्त्र की दृष्टि से विचार करें तो वृत्तियां दो ही हैं – राग की वृत्ति और द्वेष की वृत्ति। इनका चाहे जितना विस्तार किया जा सकता है। वृत्ति के अठारह भेद की किये जा सकते हैं, इससे अधिक भेद भी हो सकते हैं, यह सारा वर्गीकरण अपेक्षा के आधार पर होता है। दूसरी भाषा में कहें तो मूल मनोवृत्तियां दो हैं – प्रियता और अप्रियता की मनोवृत्ति। समयसार में कहा गया, राग से कृत जो भाव है, उसके द्वारा जीव बंध करता है। जो भाव राग आदि से विमुक्त है, वह बंधकारक नहीं है।

भावों रागादि जुदो,
जीवेण कदो दु बंधगो भणिदो ।
रागादि विप्पमुक्को,
अबंधगो जाणयो बरी ।।

प्रश्न है – वृत्तियां कैसे बनती हैं? एक है आश्रव और एक है बंध। राग और द्वेष की वृत्तियां निर्मित हैं। मोहनीय कर्म उनके साथ में जुड़ा हुआ है। आश्रव से उसे पोषण मिलता रहता है और व्यक्ति बंधता चला जाता है। वास्तव में वृत्ति है बंध और वह है रागात्मक परिणति, द्वेषात्मक परिणति। बंध दो प्रकार का होता है – राग से हुआ बंध और द्वेष से हुआ बंध। आश्रव के कारण इनको निरंतर पोषण मिलता रहता है। संचय होता रहता है, वृत्तियां निर्मित होती रहती हैं। हमारे जितने प्रभावित व्यवहार हैं, वे सारे इन वृत्तियों के कारण होते हैं।

रागम्हि दोसम्हि य कसायकम्मेसु
चेव जे भावा ।
तेहिं दु परिणमंतो रागादी
बंधदे चेदा ।।

वृत्ति से होती है प्रवृत्ति। यदि राग और द्वेष न हो तो हमारी प्रवृत्तियां कितनी सीमित हो जायें! एक आदमी बहुत प्रवृत्ति करता है। प्रश्न होता है – उसकी प्रेरणा कहां से आती है? वृत्तियां प्रेरणायें हैं। उनके आधार पर होती हैं रागात्मक और द्वेषात्मक प्रवृत्तियां। जब-जब राग और द्वेष तीव्र बनता है, आदमी की बुद्धि बदल जाती है, दिमाग खराब हो जाता है। जब भाव राग, द्वेष और मोह के संपर्क से अज्ञानमय बनता है, तब आदमी मिथ्या आचरण कहता है। जब उसका भाव राग, द्वेष और मोह से विलग होता है तब आचरण सम्यग् होता है।

सम्यग् चरित्र और मिथ्या चरित्र – इन दोनों के पीछे मूल कारण है ज्ञान और अज्ञान। वह अज्ञान जो राग, द्वेष और मोह से जुड़ा होता है, हमारा मिथ्या आचरण बनता है। वह ज्ञान जो राग, द्वेष और मोह से पृथक् होता है, हमारा सम्यग् आचरण बनता है। सम्यग् आचरण के लिए ज्ञान और दृष्टिकोण का सम्यग् होना अत्यंत अनिवार्य है।

उनका सम्यग् होना निर्भर है राग, द्वेष और मोह की कमी पर।

प्रत्येक व्यक्ति चाहता है कि वह कोई बुरा आचरण न करे, पर उससे बुरा आचरण हो जाता है। प्रश्न है — ऐसा क्यों होता है? हम इस बात को जानते हैं — 'सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्ष-मार्गः'। यह जानते हुए भी आचरण गलत क्यों होता है? यह एक बड़ा प्रश्न है। आचार्य कुन्द-कुन्द ने इसका अच्छा समाधान दिया है। उन्होंने कहा — जघन्य ज्ञान की स्थिति में ज्ञान भी बंधकारक बन जाता है। प्रश्न हो सकता है — अज्ञान बंध का हेतु बन सकता है, पर ज्ञान बंध का हेतु कैसे बन सकता है? यदि हम गहरायी में जायें तो यह बात सम्यग् प्रतीत होती है। जघन्य ज्ञान और जघन्य चारित्र का मतलब है क्षायोपशमिक ज्ञान और क्षायोपशमिक चरित्र। जब तक क्षायिक ज्ञान और क्षायिक चरित्र नहीं है, वीतराग का चारित्र नहीं है, तब तक क्षायोपशमिक ज्ञान और चरित्र की स्थिति बनी रहती है। इस स्थिति में व्यक्ति की भावधारा एक जैसी नहीं रहती। उसका विप-रिणमन हो जाता है। जब क्षायिक भाव आता है, क्षायिक ज्ञान और क्षायिक चरित्र आता है, तब एक जैसी परिणाम-धारा प्रवाहित होती है।

हमारी चैतसिक परिणति के तीन रूप बनते हैं — वर्धमान, हीयमान और अवस्थित। जब तक ज्ञान जघन्य है, चरित्र जघन्य है तब तक हीयमान और वर्धमान की स्थिति निरन्तर बनी रहती है। हम इसे टाल नहीं सकते। इस स्थिति में अड़तालीस मिनट तक ही एक जैसी परिणाम-धारा में रहा जा सकता है। उसके बाद स्थिति बदलने लग जाती हैं। शायद इसीलिए सामायिक का काल भी अड़तालीस मिनट का रखा गया है। वास्तव में ध्यान और सामायिक — दो नहीं हैं। सामायिक को क्रियाकाण्ड का रूप दे दिया गया इसलिए ध्यान की बात को अलग से सोचना पड़ता है।

ध्यान में भी अड़तालीस मिनट बाद परिणाम धारा बदल जाती है। जब-जब राग की परिणाम धारा आती है, जघन्य ज्ञान होने के कारण बंध होने लग जाता है। यही कारण है कि आरंभिक स्थिति में बार-बार राग-द्वेष के विकल्प आते रहते है, बंध होता रहता है। इस अपेक्षा से जघन्य ज्ञान और जघन्य चरित्र को बंध का हेतु माना गया है। जब-जब बंध होता है, हमारी वृत्तियों को पोषण मिलता है।

हम कर्म सिद्धान्त की दृष्टि से विचार करें। कर्म के जितने बंध, कर्म का जितना अस्तित्व हमारे भीतर है, उतनी ही वृत्तियां और संस्कारों के केन्द्र हमारे मस्तिष्क में हैं। कर्म का जो स्पंदन आता है, वह मस्तिष्क को प्रभावित कर देता है, वृत्तियों का निर्माण होता रहता है।

उन वृत्तियों को दो मूल वृत्तियों में भी समेटा जा सकता है और अपेक्षा के साथ विस्तार भी किया जा सकता है।

हम राग-द्वेष के परिष्कार के लिए ध्यान करते हैं, पर एक साथ इनका परिष्कार करना बड़ा कठिन है। निरन्तर परिष्कार की प्रक्रिया चलती रहे, यह आवश्यक है। हम इस बात को जानते हैं – वृत्तियां हैं, आश्रव हैं, उन्हें पोषण मिल रहा है। उसे कम कैसे करें, बंद कैसे करें? इसका मार्ग है संवर। पोषण मिलने के माध्यम हैं, शरीर वाणी और मन। हम इन तीनों को बंद करें। हम कायोत्सर्ग करते हैं, इससे शरीर की स्थिरता बढ़ेगी, बंध कम होने लगेगा, वृत्तियां को पोषण मिलना बंद हो जायेगा। हम मौन का अभ्यास करें। वाणी का संयम होगा, वृत्तियों को पोषण देने वाला दूसरा मार्ग बंद हो जायेगा। हम मनोगुप्ति करें, ज्योति केन्द्र पर ध्यान करें। इससे मन एकाग्र होगा, मन का संवरण हो जायेगा। वृत्ति को पोषण देने वाला तीसरा मार्ग भी बंद हो जायेगा। शरीर, वाणी और मन इन तीनों रास्तों के बंद होने से वृत्तियों को पोषण मिलना बंद हो जाता है, वृत्तियों के स्रोत सूखने लग जाते हैं और उनका परिष्कार घटित हो जाता है।

– अ. भा. अणुव्रत समिति
२१०, दीनदयाल उपाध्याय मार्ग,
नई दिल्ली - २

□

ग़ज़ल

न कली के लिए न सुमन के लिए,
ज़िन्दगी भर जिये हम चमन के लिए।

कोई भटके अंधेरों में न हम-वतन,
दीप बनकर जले हम वतन के लिए।

राम का घर हो या हो खुदा का मकां,
सिर झुकाते रहे हम नमन के लिए।

आदमी-आदमी में न दूरी रहे,
स्वप्न ऐसे संजोये मिलन के लिए।

टूट जाये न रिश्ता धरा से कहीं,
प्यार के गीत गाये गगन के लिए।

स्नेह की आम भाषा ही सीखी सदा,
छटपटाये नहीं व्याकरण के लिए।

सो न जाये व्यवस्था कहीं देश की,
छंद जो भी रचे जागरण के लिए।

कम न हो आदमीयत की कीमत कभी,
इस तरह हम जिये आचरण के लिए।

– उमाशंकर शुक्ल 'उमेश'
विवेक नगर (हमीरपुर), उ.प्र.

हिंदी कहानी

अंत भला सो सब भला

□ प्रो. चन्द्रशेखर पाण्डेय

'ट्रिन्-ट्रिन्, ट्रिन्-ट्रिन्'

'हैलो,' शालिनी ने फ़ोन उठाकर कहा।

'साहब घर में हैं?' उधर से प्रश्न हुआ।

'नहीं। आप कौन हैं? क्या काम है?'

'मैं उनकी टाइपिस्ट मिसेज़ मर्चेंट बोल रही हूं। यहां से तो घर जाने की बात कह कर गये थे। एक शब्द समझ में नहीं आ रहा है। मैंने सोचा फ़ोन करके पूछ लूं।'

शालिनी गंभीर स्वभाव की सुसंस्कृत युवती थी। फिर भी नारी-सुलभ शंका का भान सहसा मन में उदय हुआ और उसके मुंह से निकल पड़ा, 'शब्द ही पूछना था या और कोई काम था? सच-सच कहिये। मैंने टाइपिस्ट लड़कियों से संबंधित कई कहानियां पढ़ रखी हैं।

मिसेज़ मर्चेंट पहले तो हंसीं, फिर शांत भाव से बोलीं, 'मिसेज़ रस्तोगी! कहानियां, बस कहानियां होती हैं। उनमें सच्चाई कितनी है, कौन जानता है? फिर भी आप का शक गैरमुनासिब नहीं है। लेकिन आपको यह जानकर शायद राहत मिलेगी कि मैं जवान लड़की नहीं हूं। मेरी उमर इतनी हो चुकी है कि अगले साल मैं रिटायर हो जाऊंगी। आपको बेटी कहने का हक मैं रखती हूं। आपकी शादी पिछले साल हुई थी। रिसेप्शन में मैं आयी थी, बातें भी खूब की थीं। तभी फ़ोन पर मैंने आप को पहचान लिया।'

शालिनी पर जैसे घड़ों पानी पड़ गया। वह इतनी लज्जित हो गयी कि कुछ देर तक बोल भी नहीं सकी। फिर उसने कहां, 'मिसेज़ मर्चेंट! माफ़ कीजिये, मैं बहुत शर्मिन्दा हूं। मुझसे बहुत बड़ी भूल हो गयी। माफ़ कर दीजिये, प्लीज़।'

'माफ़ तो मैंने आपको बिना माफ़ी मांगे कर लिया, मगर....'

'मुझे आप-आप करके मत बोलिये, बेटी कहिये। आपकी बड़ी मेहरबानी होगी।'

'अच्छी बात है, बेटी! जैसे तुम्हारा शक मुझ पर हुआ, वैसे ही मेरा शक किसी दूसरे पर हो रहा है।'

'मैं समझ नहीं सकी।'

'बात यह है कि जब से मिस्टर रस्तोगी हेडक्लर्क से उठाकर असिस्टेंट मैनेजर बना दिये गये हैं, तब से ये बड़े रोब में रहने लगे हैं। रोमांटिक भी कुछ ज़्यादा हो चले हैं। इनके अंडर में काम करनेवाली एक मिस तारा है। पहले भी उससे खूब घुल-मिल कर बातें करते थे। फिर अब क्या पूछना! अब तो अक्सर उसे अपने कैबिन में भी बुला लेते हैं। वह भी खूब शान में रहती है। सुना है, साहब ने उसे टाइपिंग सीखने के लिए मजबूर किया है। मतलब साफ है। मेरे रिटायर हो जाने के बाद उसी को अपनी टाइपिस्ट बनायेंगे। मैंने मार्क किया है कि आज मिस तारा किसी बहाने छुट्टी लेकर ऑफ़िस से चली गयी। बाद में साहब ने मुझे टाइपिंग का काम देकर कहा - मेरी तबियत ठीक नहीं है, मैं घर जा रहा हूं। और आप.... नहीं-नहीं, तुम कह रही हो कि वे घर में नहीं हैं। मैं समझती हूं, दोनों कहीं बैठे गप-शप करते होंगे।'

'ओह, यह तो 'बहुत बुरी ख़बर है मेरे लिए', घबराते हुए शालिनी ने कहा। 'मुझे क्या करना चाहिये, मां?'

'अभी तो तुम्हें यही करना चाहिये, बेटी कि अपने बर्ताव, बनाव-सिंगार और सेवा से साहब को ज़्यादा-से ज़्यादा अपनी ओर खींचो। मेरी कही बातों पर ज़्यादा ध्यान मत दो। हो सकता है, मिस तारा की ओर झुकाव के पीछे साहब की भलमनसाहत और दरियादिली ही हो। मैं लंच के टाइम पर कल किसी दूसरी जगह से फ़ोन करूंगी। तब तक मैं कुछ पता चलाने की कोशिश करूंगी। तुमने मुझे मां कहा है। मैं तुम्हारा घर उजड़ने नहीं दूंगी। साहब घर आवें, तो इस तरह की कोई बात उनसे न करना।'

'नहीं करूंगी,' बुझे-बुझे स्वर में शालिनी बोली।

शालिनी वैसे तो प्रतिदिन संध्या के समय पति के आने की प्रतीक्षा बड़ी उत्कंठा से करती थी, किन्तु आज उसे पल-पल भारी लग रहा था। रह-रह कर उसकी दृष्टि के सामने एक काल्पनिक दृश्य कौंध जाता था कि उसके पति तारा के साथ किसी एकान्त स्थान पर बैठे प्रेमालाप कर रहे हैं। मन में ऐसा विचार भी आता कि पता नहीं और क्या-क्या करते होंगे। इस विचार के साथ ही मन में क्रोध भी उमड़ आता। वह सोचती कि यदि उसे पता चल जाय कि दोनों कहां हैं, तो हंटर लेकर वह जायेगी और मार-मार कर तारा की चमड़ी उधेड़ देगी। किन्तु उसे



बताये कौन कि वे दोनों कहां हैं? बस तभी, उसका क्रोध इस तरह शांत हो जाता, जैसे गैस के चूल्हे पर चढ़े हुए दूध का उफान देख कर गैस बंद कर दी जाय और दूसरे ही क्षण उफान शांत होकर नीचे चला जाये।

प्रतीक्षा करते-करते अंततः वह घड़ी भी आयी, जब एक टैक्सी आकर द्वार पर रुकी। शालिनी ने खिड़की की जाली से देखा कि मिस्टर दिनेश रस्तोगी टैक्सी से उतर रहे हैं। वह द्वार खोलने के लिए लपकी। पति को देखते ही मन का सारा बवंडर पता नहीं किधर उड़ गया। उसे मिसेज़ मर्चेंट की सीख याद आ गयी। आगे बढ़कर उसने पति के हाथ से बैग ले लिया और ड्राइंगरूम में पहुंचकर बड़े प्रेम से पूछा, 'अब कैसी तबियत है?' ऐसा पूछते समय वह दिनेश के वक्षस्थल से लगभग सट-सी गयी थी। इस प्रश्न का अनुमान उन्हें नहीं था। इसलिए कुछ अकचका गये। फिर वे बोले, 'ठीक हूं। मेरी तबियत खराब कब थी?'

'आपकी टाइपिस्ट का फ़ोन आया था। कोई शब्द उन्हें पूछना था। उन्होंने ही बताया कि तबियत ठीक नहीं है, कहकर साहब जल्दी घर चले गये।'

तबियत का हाल पूछना आत्मीयता और प्रेम का सूचक है। यही समझकर शालिनी ने झट से ऐसा प्रश्न कर दिया था। वह यह भूल ही गयी कि उसे मिसेज़ मर्चेंट ने मना किया था। गनीमत यही हुई कि उसने मिस तारा की कोई बात नहीं पूछी।

रस्तोगीजी कुछ आश्वस्त हुए और हलके-फुलके अंदाज़ में बोले, 'अरे हां, मैं ऑफ़िस से तो घर के लिए ही चला था, लेकिन रायल होटल के पास से निकला तो याद आयी कि हमारी कंपनी के सबसे बड़े ग्राहक चावलाजी यहीं ठहरे हैं। उनसे कुछ ज़रूरी बात करनी थी, तो उनके पास चला गया। बातचीत कुछ लंबी हो गयी। उन्होंने मुझे एक गोली खिलायी, तो तबियत भी चंगी हो गयी।'

'आप कुर्सी पर बैठिये। मैं आपके जूते खोल दूं।'

'अरे नहीं-नहीं, मैं बिल्कुल ठीक हूं। तुम बैठ जाओ।'

'अच्छा, आप कपड़े बदलिये। मैं चाय बना कर लाती हूं।'

'नौकर कहां है? उसे चाय बनाने को कह दो।'

'वह दूसरा काम कर रहा है। मैंने तै किया है कि मैं ही चाय बनाकर आपको पिलाया करूंगी। नौकर चाय बनाता है अपनी ड्यूटी समझकर। वह सिर्फ चाय लाता है। मैं बनाकर लाऊंगी, तो उसमें दूध-शक्कर के अलावा प्यार भी छलकता रहेगा।'

'अरे वाह, तुम तो कविता करने लगीं। ऐसी चाय का तो मैं बहुत शौकीन हूं, जिसमें प्यार छलकता हो। जल्दी बनाकर लाओ। मैं इंतज़ार करूंगा।'

शालिनी प्रसन्नमना होकर चाय बनाने चली गयी।

'अगले दिन श्रीमती मर्चेंट ने लंच टाइम पर एक सार्वजनिक टेलीफोन से शालिनी को फोन करके पूछा, 'कैसी हो, बेटी?'

'बहुत खुश हूं, मां।'

'बड़ी अच्छी बात है। लेकिन मैं पता नहीं चला सकी बेटी कि साहब कल तारा के साथ थे या नहीं, और अगर थे तो कहां थे।'

'ऐसी कोई बात नहीं है, मां। इन्होंने मुझसे बताया कि कल वे घर ही आ रहे थे, मगर बीच में रायल होटल चले गये। वहां कोई चावलाजी ठहरे हैं। उनसे बिज़नेस की कुछ जरूरी बात करनी थी।'

'तब तो साहब तारा के ही साथ थे।

'क्या चावलाजी वाली बात झूठी है?'

'हंड्रेड ऐंड वन परसेंट झूठी।'

'आपको पता है?'

'अरे बेटी, चावलाजी तो अभी आये ही नहीं। वे अगले हफ़्ते आनेवाले हैं। कल ही साहब ने उनके लेटर का जवाब मुझसे टाइप कराया है। उनके दिमाग में चावलाजी का नाम ताजा था, सो उन्हीं का बहाना बना दिया। इस तरह के झूठ बड़ी आसानी के साथ वे तुमसे बोल सकते हैं। वे जानते हैं कि ऑफ़िस की बातों का तुम्हें क्या पता चलेगा।'

'ओह, इतना बड़ा झूठ!'

'बेटी, सच्चाई छिपाने के लिए बड़े-बड़े झूठ बोलने पड़ते हैं।'

'आज ये कह गये हैं कि शाम को कुछ देर से और खाना खाकर आयेंगे। कंपनी की बिज़नेस-पार्टी है।'

'यह दूसरा बड़ा झूठ है। कंपनी की कोई पार्टी-वार्टी नहीं है। मेरा अंदाज है कि साहब आज तारा के घर खायेंगे। लंच के थोड़ी देर पहले मैं फ़ाइल लेकर उसके पास से निकल रही थी, तब तारा एक चपरासी को पैसे देकर अच्छी-अच्छी मिठाइयां बाजार से लेकर घर पहुंचाने का हुक्म दे रही थी। मेरे कान में भनक पड़ गयी।'

'यह सब मैं कैसे और कब तक सहन करूंगी, मां! आज मैं उनसे साफ कह दूंगी कि अगर आप तारा के साथ ही खुश हैं, तो उसी को लेकर रहिये, मैं अपने घर चली जाऊंगी।'

'ना-ना बेटी, ऐसी बात भूलकर भी न कहना, न करना। यह तो अपने हाथों अपने पैर पर कुल्हाड़ी मारना होगा। समस्या का सामना करना चाहिये। भागने से काम नहीं बनेगा। तुम तो आज के ज़माने की पढ़ी-लिखी बी.ए. पास लड़की हो, फिर ऐसा क्यों सोचती हो?'

'क्या करूं, किसी को जबरन तो अपना नहीं बनाया जा सकता।'

'कुछ जोर-जबर्दस्ती भी करनी पड़े, तो करो। तुम्हारी शादी हुई है उनके साथ। अपने हक के लिए तुम्हें लड़ना चाहिये।'

'इस पचड़े में मैं अपने माता-पिता को परेशान नहीं करना चाहती। और यहां अपना कोई दिखायी नहीं देता, किसके बल पर लड़ूं?'

'इस तरह मन छोटा न करो, बेटी। मैं पूरी तरह तुम्हारे साथ हूं।'

'आपसे तो फ़ोन पर ही बात हो सकती है।'

'नहीं-नहीं, मैं तुम्हारे पास आऊंगी। बस, आज भर की मोहलत मुझे दो। मैं यह जानता चाहती हूं कि आज शाम को साहब तारा के घर खाना खाने जाते हैं या नहीं।'

'आप कैसे जान पायेंगी?'

'तारा के घर के पास मेरी एक सहेली रहती है। मैं शाम को ऑफ़िस से सीधे उसी के घर जाकर घंटे-दो घंटे बैठूंगी और बाहर नज़र रखूंगी।'

'अगर ये गये तो?'

'तो मैं कल लंच टाइम में टैक्सी करके सीधे तुम्हारे पास आ जाऊंगी और दोनों मिलकर आगे की स्कीम तय करेंगे। अब मैं ऑफ़िस जाती हूं। आज साहब से तुम कुछ न कहना।'

हुआ वही, जो श्रीमती मर्चेंट ने सोचा था। वे शाम को ऑफ़िस से सीधे अपनी सहेली के घर गयीं और ऐसी जगह बैठीं कि द्वार का बाहरी भाग दृष्टि-पथ पर

रहे। थोड़ी देर में रस्तोगीजी आये और मस्ती में झूमते हुए तारा के घर में प्रवेश कर गये। आधा घंटा और सहेली के पास श्रीमती मर्चेंट बैठकर अपने घर चली गयीं।

दूसरे दिन लंच टाइम शुरू होते ही श्रीमती मर्चेंट टैक्सी पकड़ कर रस्तोगीजी के घर भागीं। घंटी बजाने पर शालिनी ने द्वार खोला। 'मैं मिसेज़ मर्चेंट हूं', सुनते ही बड़े आदर के साथ शालिनी उन्हें भीतर ले गयीं।

'साहब कल रात कितने बजे आये?' श्रीमती मर्चेंट ने पूछा।

'करीब दस बजे।'

'मैंने भी यही अंदाज़ लगाया था। आधा घंटे तक जब साहब बाहर नहीं निकले, तब मैं समझ गयी कि खा-पीकर आराम के साथ घर जायेंगे। फिर मैं घर चली गयी। बड़े अफ़सोस की बात है बेटी, कि साहब कल तारा के ही घर गये थे।'

'उसके घर में और कोई नहीं है क्या?' शालिनी रोने-रोने-सी हो आयी।

'सिर्फ़ उसकी मां है।'

'उन्होंने कोई एतराज़ नहीं किया होगा?'

'वह बेचारी क्या एतराज़ करेगी। वह तो खुश हुई होगी कि हमारे घर असिस्टेंट मैनेजर आया, बेटी की तरक्की होगी।'

'फिर?' निराशा के स्वर में शालिनी बोली।

'फिर कुछ करना पड़ेगा। मामला सीरियस है। अच्छा, तुम्हारी जान-पहचान का यहां ऐसा कोई आदमी है, जो जवान हो, खूबसूरत हो और शादीशुदा हो?'

'ऐसा आदमी किसलिए?' भोलेपन से शालिनी ने पूछा।

'चिंता मत करो, बेटी, मुझ पर विश्वास रखो। जैसा मर्ज़ हो, वैसा ही इलाज होना चाहिये। सोचकर बताओ। है कोई?'

'मेरे कॉलेज के सहपाठी एक पंकज गर्ग हैं। उन्होंने यहां आकर गहनों की दूकान खोली है। एक दिन अचानक भेंट हो गयी थी।

'तुम्हारे बुलाने पर वे बीवी के साथ कल ठीक १२ बजे यहां आ जायेंगे क्या?'

'मैं समझती हूं, जरूर आ जायेंगे। मगर क्यों, मां?'

'यह सब मैं कल ही बताऊंगी। अभी मुझे ऑफ़िस पहुंचना है। कल मैं दिन भर की छुट्टी ले लूंगी और १२ के पहले यहां आ जाऊंगी। मिस्टर गर्ग को बुला के रखना। अच्छा, चलती हूं।' वे उठकर खड़ी हो गयीं।

'मां! आप पहली बार आयी हैं। कुछ खाकर जाइये।' शालिनी ने आग्रहपूर्वक कहा।

'आज नहीं, कल,' कहती हुई श्रीमती मर्चेंट द्वार की ओर बढ़ीं।

* * *

अगले दिन श्रीमती मर्चेंट जब आयीं, तब गर्गजी अपनी पत्नी हर्षा के साथ पहले से ही बैठे थे। शालिनी ने उनका परस्पर परिचय कराया। संकेत पाकर नौकर सबके लिए मिठाई-नमकीन की प्लेटें ले आया। श्रीमती मर्चेंट ने एक प्लेट हाथ में ली और खाती हुई घूम-घूम कर घर देखने लगीं। एक कमरे के द्वार पर खड़ी होकर स्वयं से ही कहा, 'हां, यह ठीक रहेगा।' फिर शालिनी से बोलीं,

'दस का नोट नौकर को देकर कहो कि जाओ, कोई फ़िल्म देखो, शाम तक आ जाना।'

'क्यों?' आश्चर्य की मुद्रा बनाते हुए शालिनी ने पूछा।

'अब तुम हर बात में क्यों-क्यों करोगी, तो कैसे चलेगा? आज जैसा मैं कहती जाऊं, वैसा ही करती जाओ।'

'जी, बहुत अच्छा,' कहकर शालिनी चली गयी और नौकर को बाहर भेज कर फिर इनके पास आ गयी।

श्रीमती मर्चेंट आकर सोफे पर बैठ गयीं। पर्स से दो छोटे-छोटे कागज़ के टुकड़े निकाले और गर्ग तथा शालिनी को एक-एक देकर बोलीं, 'इस कमरे के भीतर बैठकर ये डायलॉग बारी-बारी से तुम्हें बोलने होंगे। ठीक से पढ़ लो।'

दोनों ने एक-एक संवाद ही पढ़ा और भौंचक्के-से हो गये। गर्ग ने कहा, 'मैं इनसे ऐसा कैसे कह सकता हूं?'

शालिनी ने कहा, 'मुझसे भी ऐसा नहीं बोला जायेगा।'

श्रीमती मर्चेंट बोलीं, 'लगता है, तुम लोगों ने स्कूल-कॉलेज के नाटक में कभी भाग नहीं लिया।'

'भाग तो लिया है, मगर वह तो नाटक था,' गर्ग ने कहा।

'तो यह कौन सच्चा रोमांस है? यह भी नाटक ही है।' श्रीमती मर्चेंट ने उत्तर दिया।

'मगर क्या यह जरूरी है?' शालिनी ने कुछ बेचैनी से पूछा।

'हां बेटी, यह बहुत जरूरी है। मैं चाहती हूं कि साहब और तारा को लेकर जो दर्द तुम्हारे दिल में है, वैसा ही दर्द मिस्टर गर्ग और तुम्हारे संबंध को जानकर साहब के दिल में हो। तभी उन्हें अकल आयेगी।' फिर उन्होंने गर्ग की ओर देख कर कहा, 'मिस्टर गर्ग! मुझे उम्मीद है, आपने सब कुछ समझ लिया होगा।'

'बहुत अच्छी तरह,' गर्ग बोले, 'आपने बड़ा अनोखा उपचार किया।'

'अजी, मैंने कोई उपचार नहीं किया। मैं तो अपना फर्ज़ निभा रही हूं। बेटी शालिनी का दुःख मैं कब तक सहन करूंगी?'

कुछ मुसकाते हुए हर्षा बोली,

'मांजी ! ये उपकार की बात नहीं कर रहे हैं, बल्कि उपचार, यानी दवा-इलाज की बात कहते हैं।'

'ओह, उपचार ? यानी इलाज ? हां बेटा, मर्ज़ हो तो इलाज करना ही पड़ता है। फिर, जैसा मर्ज़ वैसा इलाज।'

हर्षा की बात ने वातावरण को थोड़ा हलका बना दिया। किन्तु शालिनी के प्रश्न से वह फिर गंभीर हो गया। उसने पूछा,

'कहीं उन्होंने इसे सच मान लिया तो ?'

झट उत्तर मिला, 'मैं यही चाहती हूं कि थोड़ी देर के लिए वे इसे सच मानें। तभी तो दिल में जलन होगी। बाद में तो उन्हें नाटक मानना ही पड़ेगा, क्योंकि मैं भी तो कमरे में रहूंगी। बेटी हर्षा भी वहीं रहेगी।'

'हमारे संवाद वे सुनेंगे कैसे ?'

'चिंता मत करो, पूरी स्कीम तैयार है। चलो, तुम साहब को फोन लगाओ। कहो, मैं महिला-मंडल की सभा में जा रही हूं। आपके आने से पहले आ जाऊंगी। अगर न आ सकी, तो फ़्लैट की चाभी तो आपके पास है ही। नौकर को शाम तक की छुट्टी दे दी है। मैं समझती हूं, चाभी उनके पास ज़रूर होगी।'

'हां, चाभी तो है उनके पास। मगर इससे क्या होगा ?'

'मैं जानती हूं क्या होगा ! मेरी उमर पचास से ऊपर है। मैंने दुनिया देखी है। इस सूनेपन का फायदा साहब ज़रूर उठायेंगे। वे पूरा लंच टाइम तारा के साथ यहीं बिताना चाहेंगे। उनके आने की आहट पाते ही हम सब उस कमरे में चले जायेंगे। मैं स्टूल पर खड़ी होकर वेंटिलेशन से उन पर नज़र रखूंगी। मेरा इशारा पाते ही तुम दोनों डायलॉग शुरू कर देना।'

शालिनी ने अपने पति को फोन मिलाया और वही सब कह दिया, जो श्रीमती मर्चेंट ने बताया था। फिर सब बैठकर बातें करने लगे। पन्द्रह मिनट भी नहीं बीते होंगे कि द्वार पर टैक्सी आकर रुकने की आवाज़ आयी। श्रीमती मर्चेंट हड़बड़ा कर उठती हुई बोलीं -

'बापरे, शायद साहब लंच के पहले ही वहां से चल पड़े। जल्दी कमरे में चलो। अपनी-अपनी प्लेटें भी उठा लो।'

पलक झपकते सब कमरे में चले गये और भीतर से बंद कर लिया। दो मिनट बाद रस्तोगीजी तारा की कमर में हाथ डाले हुए घर में प्रविष्ट हुए। मुस्कराते हुए उन्होंने तारा से कहा -

'तारा रानी ! थोड़ी देर के लिए समझ लो कि यह घर तुम्हारा है।'

'हमेशा के लिए इस घर को मेरा क्यों नहीं बनाया ?' कुछ तिनकते हुए तारा बोली।

'क्या बताऊं,' रस्तोगीजी ने कहा, 'शादी तो मैं तुम्हीं से करना चाहता था, लेकिन पिताजी बोले – मैं शालिनी के बाप को वचन दे चुका हूं, अगर तुमने इनकार किया, तो मैं आत्महत्या कर लूंगा। फिर मैं क्या करता। खैर, छोड़ो इस बेमौके की चर्चा को। चलो, हमारे बेडरूम की सजावट देखो।'

दोनों शयनकक्ष में चले गये। वेंटिलेशन की खिड़की से दो तेज़ आंखें सब कुछ देख-सुन रही थीं। कुछ देर तक उधर से हंसने-बोलने की आवाजें आती रहीं। फिर रस्तोगीजी निकल कर सोफे पर आराम से बैठ गये। कंघी निकालकर वे बाल संवारने लगे।

हाथ का इशारा पाकर कमरे के भीतर गर्गजी बोलने लगे, 'डार्लिंग! जिस दिन तुम्हारी शादी थी, उस दिन मैंने दुनिया छोड़ने का पक्का इरादा कर लिया था। बाज़ार से ज़हर भी ले आया था। लेकिन पीते समय न जाने कैसे हाथ कांप गया और शीशी ज़मीन पर गिरकर फूट गयी।'

सूने घर में यह आवाज़ सुनकर रस्तोगीजी चौंक पड़े और उस कमरे की ओर बढ़े, जिसमें से आवाज़ आयी थी। द्वार को हाथ लगाया तो भीतर से बंद पाया। वहीं खड़े हो गये। फिर शालिनी की आवाज़ कानों में पड़ी।

'प्राणप्यारे! अगर तुमने ज़हर पी लिया होता, तो मैं भी जान दे देती। शादी हो गयी तो क्या हुआ? मैं अभी भी तुम्हारी हूं।'

इससे ज़्यादा सुनने की शक्ति रस्तोगीजी में नहीं थी। वे क्रोध से कांपने लगे। दरवाज़े को पीटते हुए उन्होंने कहा –

'कौन है भीतर? शालिनी! दरवाज़ा खोलो।'

शालिनी द्वार खोलकर बहार निकली और बोली, 'अरे, आप आ गये क्या? आज दोपहर में कैसे?'

'हां, आज दोपहर में ही आ गया। तुम्हारे पाप-कर्म को देखने के लिए।' रस्तोगीजी गरजते हुए बोले। क्रोधावेश में वे यह भूल ही गये कि वे स्वयं उसी पाप-कर्म में लिप्त हैं।

'पाप-कर्म कैसा?' शालिनी ने कुछ बनावटी आश्चर्य से पूछा।

'मैं सब सुन चुका हूं। भीतर तुम्हारा प्राणप्यारा कौन है उससे कहो, बाहर निकले।'

श्रीमती मर्चेंट के संकेत से बाहर निकलते हुए गर्ग बोले, 'जी, मैं आ गया। कहिये।'

शालिनी ने परिचय दिया, 'ये मेरे सहपाठी श्री पंकज गर्ग हैं। मैं महिला-मंडल जा रही थी कि ये आ गये। फिर मैं नहीं जा सकी।'

'कैसे जातीं।' रस्तोगी ने व्यंग्यात्मक ढंग से कहा, 'तुम चली जातीं, तो इस लफंगे को वचन कौन देता कि मैं अभी

भी तुम्हारी हूं।'

'आपको शायद कुछ भ्रम हो गया है।' शालिनी बोली, 'ये कॉलेज में अक्सर नाटक प्रस्तुत करते थे। यहां आये, तो यहां भी एक नाटक का कार्यक्रम बना दिया। मेरा भी एक रोल उसमें है। हम दोनों उसी नाटक की रिहर्सल कर रहे थे।'

'चुप रहो।' डांटकर रस्तोगीजी बोले, 'मुझे बेवकूफ समझती हो। रिहर्सल करने के लिए भीतर से कमरा बंद करना ज़रूरी था क्या? क्या सबूत है तुम्हारे पास कि जो मैंने सुनीं, से सब नाटक की बातें थीं?'

'सबूत मैं देती हूं,' कहती हुई श्रीमती मर्चेंट बाहर निकलीं। 'मैं इस नाटक की डायरेक्टर हूं। मेरे बताये हुए डायलॉग ये दोनों बोल रहे थे।'

'अच्छा जी!' कुछ विस्मित-से होते हुए रस्तोगी बोले, 'आप भी यहां मौजूद हैं। कोई अनहोनी बात नहीं है। कामकाज वाली औरतें जब बूढ़ी हो जाती हैं, तब उनमें से कुछ दो प्रेमियों को मिलाने का धंधा शुरू कर देती हैं।'

'मगर मैं उनमें से नहीं हूं, रस्तोगीजी।'

'सबूत?'

'है, इसका भी सबूत है। बेटी हर्षा! बाहर आओ।'

हर्षा बाहर आ गयी। श्रीमती मर्चेंट ने कहा, 'ये मिसेज़ गर्ग हर्षा हैं। एक मिनट के लिए आपकी बात मान ली जाय कि मैंने दो प्रेमियों को मिलाया, तो क्या कोई औरत अपने पति को उसकी प्रेमिका से मिलायेगी? क्या मिस्टर गर्ग हर्षा के सामने सचमुच का ऐसा डायलॉग बोल सकते थे, जो आपने सुना? क्या शालिनी बेटी हम दोनों के रहते हुए ऐसा डायलॉग गर्गजी से बोल सकती थी, जो आपने सुना? यह नाटक इसीलिए करना पड़ा मिस्टर रस्तोगी, जिससे आप उस दर्द को महसूस कर सकें, जो दर्द शालिनी तीन दिन से सहन कर रही है। इसका पाप-कर्म नाटक था, झूठ था। लेकिन आपका पाप-कर्म तो बिल्कुल सच है, दिन के उजाले की तरह। आप सबूत पूछिये। चुप क्यों हैं? मैं जानती हूं, आप नहीं पूछेंगे। मगर मैं सबूत देकर रहूंगी।' इतना कहकर वे शयनकक्ष की ओर झपटीं।

इतने लोगों की बातचीत सुनकर तारा ने बीच में ही चुपचाप झांक कर सब को देख लिया था और डर के मारे वहीं दुबक गयी थी। किंतु श्रीमती मर्चेंट की तेज़ निगाहों से कैसे बच सकती थी! उन्होंने तारा का हाथ कसकर पकड़ा और खींचती हुई सबके सामने ला खड़ा किया।

रस्तोगीजी की गर्दन झुकी, तो झुकी ही रह गयी। श्रीमती मर्चेंट ने तारा से पूछा, 'बोल, बेडरूम में क्या कर रही थी और वहां कब से है?'

'शालिनी बोली, 'माजी! यह सब पूछने से क्या फ़ायदा!' फिर तारा से कहा, 'तारा बहन! मैं हाथ जोड़कर तुमसे कहती हूं कि जो हुआ, सो हुआ। अब मेरे पति का संग छोड़ दो, तो बड़ी मेहरबानी होगी।'

'तारा रोने लगी। फिर बोली, 'मैं वादा करती हूं, बहन कि मैं सिर्फ़ इनका संग ही नहीं, इस कंपनी की नौकरी छोड़ दूंगी। मैं माफ़ी चाहती हूं। इजाज़त हो तो जाऊं।'

'जा, मुंह काला कर,' मिसेज़ मर्चेंट ने कहा। फिर उन्होंने रस्तोगी से पूछा, 'अब आपका क्या विचार है? कोई सफ़ाई देना चाहेंगे?'

'जो मामला इतना साफ़ है, उसकी क्या सफ़ाई दी जा सकती है।' धीरे से गर्दन झुकाये हुए ही रस्तोगीजी बोले, 'मैं शर्मिन्दा हूं। माफ़ी चाहता हूं। अब ऐसा नहीं होगा।'

'चलिये, आप सुधर गये, अच्छा हुआ। अंत भला, तो सब भला। अब इतना बड़ा हंगामा मचाने के लिए मैं सच्चे दिल से माफ़ी मांगती हूं। आप मेरे साहब हैं, मैं आपकी मातहत हूं।'

'नहीं-नहीं, आप मेरी मातहत नहीं, मेरी मां हैं, मिसेज़ मर्चेंट।' और रस्तोगीजी उनके सामने झुक गये।

गर्गजी बोले, 'नाटक समाप्त हो गया। अब हम लोगों को आज्ञा दीजिये।'

रस्तोंगीजी ने उनका हाथ पकड़कर कहा, 'नहीं-नहीं, अभी आप लोग नहीं जा सकते। आप हमारे मेहमान हैं। अब मैं ऑफिस नहीं जाऊंगा। हम सब लोग मिलकर अच्छा-अच्छा खाना बनायेंगे और खायेंगे।'

फिर वही हुआ, जो रस्तोगीजी ने कहा। – **ए वन अपार्टमेंट, ४ माला, वालकेश्वर रोड, बम्बई - ४०० ००६**

□





बापू कुटी का प्रवेश द्वार

बापू के सपनों का साक्षी-सेवाग्राम

□ डॉ. समर बहादुर सिंह

करीब साठ साल पहले की बात है। नमक-सत्याग्रह के लिए जब महात्मा गांधी डांडी जाने के लिए साबरमती आश्रम से निकले तो उन्होंने प्रण किया 'स्वराज्य मिलने के पहले मैं इस आश्रम में नहीं लौटूंगा।' और वह स्वराज्य जब तत्काल न मिल पाया, तो प्रश्न उभरा कि गांधीजी अब कहां रहें? सेठ जमनालाल बजाज बापू के परम भक्त थे। उन्होंने आग्रह किया कि वह अब उनके गृह-नगर वर्धा में बसें। भारत के बीचोंबीच बसा वह लघु नगर नागपुर के निकट तो था ही, यातायात की दृष्टि से भी बड़ा सुविधाजनक था। उत्तर-दक्षिण, पूर्व-पश्चिम सभी दिशाओं से आने-जाने वाली गाड़ियां यहीं से गुज़रती थीं। आबहवा भी बड़ी अनुकूल थी। प्रकृति के लाड़ले इस नगर में वे सभी बातें थीं, जो गांधीजी की अपेक्षाओं से मेल खाती थीं। अतः बापू

ने बजाज का आग्रह स्वीकार कर लिया और वह अब वर्धा के मगनबाड़ी मुहल्ले में रहने लगे।

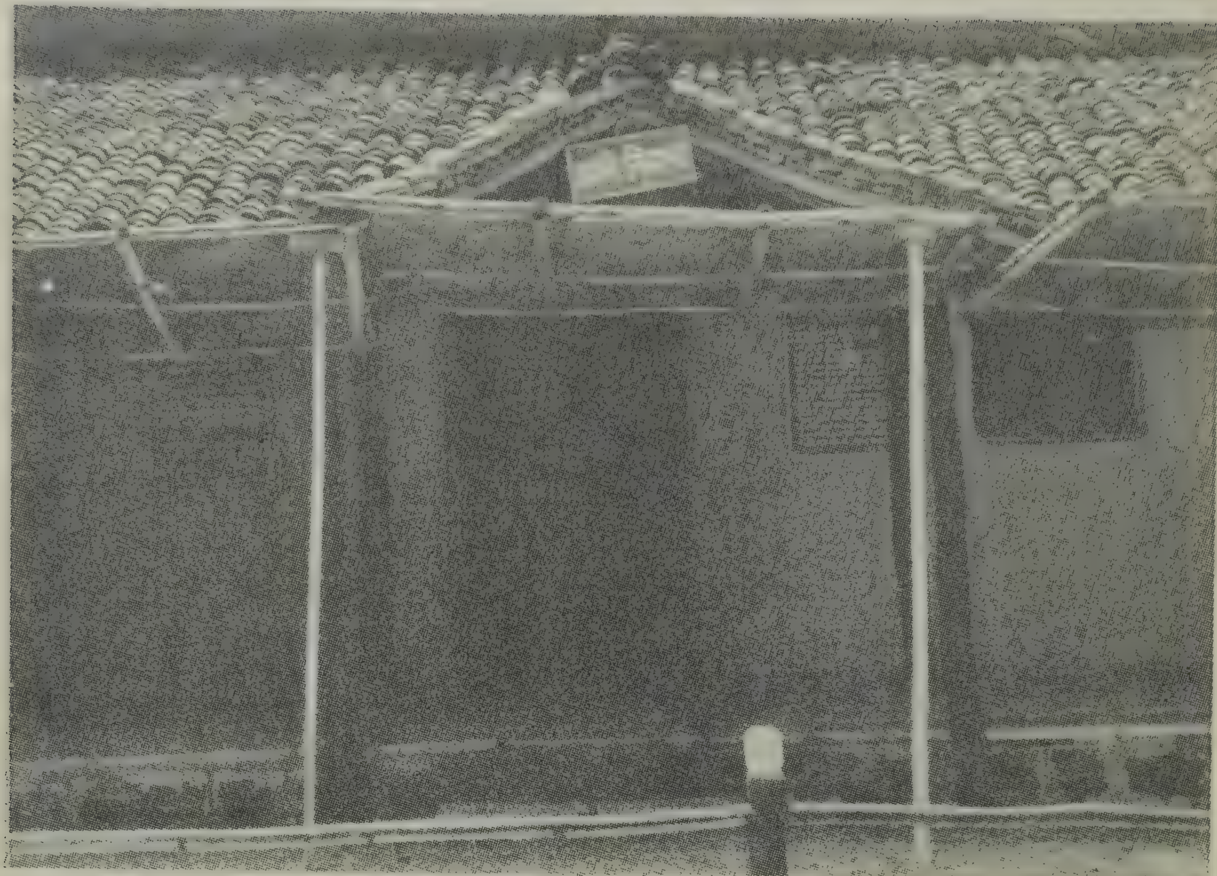
किन्तु गांधीजी का मन वहां से भी उचट गया। वह तो आस-पास के किसी ऐसे गांव में बसना चाहते थे जहां वह 'ग्राम-स्वराज्य' विषयक अपने विचारों को अमली जामा पहना सकें, और उस प्रक्रिया में आने वाली समस्याओं का प्रत्यक्ष अनुभव कर सकें। उनकी अनुयायी मीरा बहन ने इसमें पहल की और वर्धा से कोई दस किलोमीटर पूर्व एक गांव, जिसका तब नाम था 'सेगांव' में अपनी झोपड़ी बना वहीं रहने लगीं। एक दिन गांधीजी भी घूमते-घूमते वहां जा पहुंचे। वह जगह उन्हें जंच गयी और वहीं 'सेगांव' में बसने का उन्होंने भी अपना मन बना लिया।

यह सन १९३६ की बात है। जून की १६ तारीख थी। आकाश में मेघ मंडरा रहे थे। गांधीजी बैलगाड़ी में बैठकर वर्धा से सेगांव रवाना हुए। तब आज जैसी पक्की सड़क तो थी नहीं। पगडंडी पर चलती उस गाड़ी में झटके खाने के बजाय गांधीजी ने पैदल चलना बेहतर समझा। रास्ते में मूसलाधार पानी बरसने लगा, किन्तु गांधीजी चलते गये और उस पावस-परीक्षा में खरा उतर, उन्होंने सेगांव पहुंच कर ही दम लिया।

सेगांव के अधिकांश भाग के तब जमनालाल मालगुजार थे। उन्होंने आश्रम-स्थापना के लिए अपेक्षित ज़मीन तो दी ही, उसके निर्माण में भी पूरा हांथ बंटाया। देखते-देखते वह आम्र-कुंज एक 'ऋषि-कुल' में परिवर्तित हो गया। सेगांव का नया नामकरण हुआ "सेवाग्राम" और गांधीजी की उपस्थिति ने उस सुनसान, अनजाने गांव को भारत की 'गैर सरकारी राजधानी' बना दिया।

संयोग से चौवन साल बाद उसी तिथि के आसपास सन ९० के जून में अपने श्रद्धा-सुमन चढ़ाने मैं सेवाग्राम पहुंचा। पावस का वही माहौल उस दिन भी था— आश्रम के ऊपर मंडराते कजरारे मेघ, यदा-कदा बूंदा-बांदी भी। बरसाती हरियाली पूरे परिसर को अपने अंक में समेटे हुई थी। उस बीहड़ बाग में गांधीजी शुरूआती दिनों में कैसे रहे होंगे, यह कल्पना कर मैं सिहर उठा। खैर।

आश्रम-परिसर में प्रवेश कर सर्वप्रथम मैं 'बापूकुटी' पहुंचा। एक छोटा-सा कमरा, मिट्टी की दीवालें, खपरैल की छत और लिपा-पुता फर्श। एक ओर गांधीजी का आसन और दूसरी ओर आगंतुकों के बैठने के लिए बिछी चटायी। दूधिया खद्दर में आवेष्ठित गांधीजी की वह पांच फुटी संकरी गद्दी, पीछे पीठ टेकने के लिए लकड़ी के पट के सहारे टिका गाव-तकिया। गद्दी के पास फर्श से उभरता लकड़ी का एक



आदि निवास (बाह्य विभाग)

गोल खम्भा और वहीं पास में रखी एक बड़ी-सी लालटेन। बगल में वह चौकी जिस पर गांधीजी लिखा-पढ़ा करते। और वहीं एक किताबदान भी जिसमें रखे थे ''बाइबिल'' ''कुरान'' और ''गीता'' आदि धर्मग्रंथ। दूसरी तरफ शीशे के एक छोटे-से सन्दूक में रखी थीं, वो चीजें जिनका गांधीजी इस्तेमाल किया करते थे। जप करने की उनकी माला, टेकने की उनकी लाठी, उनका खड़ाऊं आदि भी वहां करीने से रखे थे। और हां, वहीं उन तीनों बंदरों की मूर्तियां भी थीं, जिन्हें गांधीजी अपना शिक्षक मानते थे। कान मूंदे बन्दर का अर्थ था ''बुरी बात मत सुनो'', आंखें ढके बंदर की सीख थी, ''बुरी चीज़ मत देखो''और मुंह बंद किये बन्दर का संकेत था, ''बुरी बात मत कहो''। पास ही में वह टेलीफोन भी था, जिसे भारत सरकार ने गांधीजी से सीधा सम्पर्क बनाये रखने के लिए लगवा रखा था।

खयालों में खोया, मैं उस आसन के समक्ष न जाने कितनी देर खड़ा रहा। मानस-पटल पर एक के बाद एक कितने चित्र उभरते रहे। यही वह कक्ष है न, जहां भारत-भाग्य विषयक अनेक निर्णय

लिये गये थे। इसी ताड की चटायी पर बैठकर हमारे राष्ट्रीय दिग्गज गांधीजी से विचार-विमर्श किया करते थे। यहीं उनकी योजनायें बनती थीं, और यहीं विश्व के प्रबलतम साम्राज्य के विरुद्ध अहिंसक लड़ाई जारी रखने के लिए संकल्प लिये जाते थे। गांधीजी के दर्शनार्थ आये विदेशी मेहमान भी इसी चटायी पर बैठा करते थे। हां, जिन्हें फर्श पर बैठने में असुविधा होती, उन्हें मोढ़ा अथवा छोटी तिपायी दे दी जाती थी।

मेरी तन्द्रा तो तब टूटी जब गाइड ने आगे चलने का संकेत दिया। मैं बाहर आने लगा तो सहसा मेरी निगाह भीतरी दीवाल पर टंगी तख्तियों पर अटक गयी। इन पर वे सूक्तियां अंकित थीं जो गांधीजी को निरन्तर प्रेरणा देती रहती थीं। उनमें एक उक्ति थीं प्रसिद्ध विचारक रस्किन की:—

'शब्दों में नहीं, बल्कि मौन में ही झूठ का तत्व छिपा है। चुप रहकर, दो अर्थ वाली बात कह कर, किसी शब्द-विशेष पर ज़ोर देकर, आंख के इशारे से किसी वाक्य को महत्व देकर असत्य बोला जा सकता है, और ये सब तरीके स्पष्ट शब्दों में बोले गये झूठ से ज्यादा बुरे हैं।'

एक दूसरी सूक्ति थी:—

'जब आप सही हों, तब तैश में आने का सवाल ही नहीं और जब आप गलत हों तब तैश में न आना और भी ज़रूरी हो जाता है।'

इन पंक्तियों को पढ़ता-गुनता अब मैं उस कक्ष से जुड़े गांधीजी के स्नानागार में पहुंचा, एक ओर स्नान की जगह, दूसरी ओर कमरे में वह टेबुल जिस पर नित्य गांधीजी की मालिश हुआ करती थी। बीच में था सेप्टि टैंक वाला कमोड जिसे गांधीजी नित्य अपने हाथ से मांजा करते थे। पास ही अखबार की कतरनें, पत्र आदि रखने की भी व्यवस्था थी। शौच में जो समय लगता उसमें वह इन्हें पढ़ा करते थे। आगे जो कमरा था उसमें गांधीजी की तखतनुमा चारपायी भी रखी थी। इस कमरे में कभी नज़दीकी ठहरते और कभी वे रोगी जिनका उपचार गांधीजी की देख-रेख में होता था।

आगे "आदि निवास" था— मिट्टी का वह आवास, जहां गांधीजी शुरू में रहा करते थे। इसमें उनकी पत्नी कस्तूरबा तथा अन्य कई लोग भी रहते थे। बाद में जब भीड़ बढ़ गयी तो गांधीजी अपनी उक्त कुटी में आ गये और 'बा' साथ की उस कुटी में जो उनके लिए खास तौर पर बनवायी गयी थी। इन तीनों आवासों के बीच है वह खुला मैदान जहां नित्य सुबह-शाम प्रार्थना हुआ करती थी। जाड़े और बरसात में तो गांधीजी अपनी कुटी के उत्तरी बरामदे में सोते थे। बाकी दिनों में इसी

प्रार्थना-प्रांगण में खुले आकाश के नीचे वह आश्रमवासियों के साथ सोया करते थे। प्रकृति-उपासक गांधी अपना अधिकांश समय प्रकृति की गोद में ही बिताते थे।

आश्रम-परिसर में उन दिनों सांप-बिच्छू अकसर निकला करते। अहिंसक गांधी भला उन्हें क्यों मारने देते। वह उन्हें बांस के चिमटे से पकड़वा कर एक लकड़ी के संदूक में डलवा देते थे। बाद में कोई उन्हें दूर जंगल में छोड़ आता था। यह पिटारी गांधी-कुटी के पास अब भी यथावत् रखी हुई है– उन चिमटों के साथ।

उस आश्रम में गांधीजी की दिनचर्या क्या रहती? इसका उत्तर एक जानकार के शब्दों में:–

'गांधीजी सुबह चार बजे उठते, मुंह-हाथ धोकर गरम पानी में नीबू के रस के साथ शहद मिलाकर पीते और ४-२० पर प्रार्थना में जाते थे। प्रार्थना-समाप्ति पर नैमित्तिक कार्य करना, थोड़ा आराम करना, या पत्र-व्यवहार देखना होता था। नाश्ते में बकरी का दूध व फल लेकर वह घूमने निकल जाते। लौटने पर वह बीमारों के इलाज में कुछ समय लगाते।

फिर मालिश होती। उसमें करीब एक घंटा लग जाता। इसके बाद गुनगुने पानी में स्नान करते हुए वह नज़दीकी साथियों के साथ आवश्यक चर्चा किया करते। फिर ग्यारह बजे तक काम चलता रहता। तब वह दोपहर का खाना खाते। उनका भोजन बहुत सादा होता था। कच्ची व उबली सब्जियां, फल, बकरी का दूध तथा चोकर की रोटियां। उसके बाद वह अखबार पढ़ते और कुछ देर आराम करते। वह पेट पर मिट्टी का लेप किया करते थे। फिर गरम पानी में नीबू-रस और शहद लेकर वह काम पर लग जाते। ढाई और चार बजे के बीच नित्य कताई करते थे। तत्पश्चात् मिलने वालों का समय होता था। साढ़े पांच व छः बजे के बीच शाम का भोजन कर लेने पर वह घूमने निकल पड़ते। वहां से लौटने पर वह दोपहर के बाद की तरह का गरम पेय लेते। साढ़े सात बजे सायंकालीन प्रार्थना होती। उसके बाद नौ-साढ़े नौ बजे तक वह काम करते और फिर सो जाते। सोने से पहले उनके सिर-पैर की फिर मालिश होती।'

गांधी-कुटी के इर्द-गिर्द मिट्टी से बने और खपरैल से छाये और भी कई आवास हैं– महादेव कुटी, परचुरे-कुटी, रुस्तम भवन आदि। इनमें एक है 'आखिरी निवास'। १९४६ ई. में जब गांधीजी खांसी से पीड़ित हो उठे थे, तो इसी आवास में रहने लगे थे। प्रकृति-चिकित्सक गांधी को इस कक्ष के पूर्वी बरामदे में धूप-स्नान की अपेक्षाकृत अधिक सुविधा थी। गांधीजी को

कुदरती इलाज में बड़ी श्रद्धा थी और वह साथियों का इसी पद्धति से इलाज किया करते थे। देश के कई जाने-माने नेता भी सेवाग्राम आकर बापू की देख-रेख में अपनी चिकित्सा करवाया करते थे। वैसे वहां एक ''कस्तूरबा अस्पताल'' भी था, जो अब एक वृहद और आधुनिक चिकित्सालय बन गया है।

सोमवार गांधीजी के मौन-व्रत का दिन होता। हफ्ते भर का अधूरा काम वह इसी दिन पूरा करते। वह वक्त के बड़े पाबन्द थे– खासतौर से प्रार्थना में। 'राम-नाम' में उनकी अगाध श्रद्धा थी। वह इसे सारी व्याधियों की अचूक औषधि मानते थे। उनके भोजन-विषयक विचार 'आदि निवास' के बरामदे में तख्तियों पर लिखे टंगे हैं। उनका कहना था कि भोजन स्वाद के लिए नहीं, स्वास्थ्य के लिए औषधि के रूप में ग्रहण करना चाहिये। 'कम खाना, गम खाना' इस कहावत पर वह सतत आचरण करते।

आश्रम की संचालन-समिति की सदस्या, गांधीजी की पुत्रवधू श्रीमती निर्मला बहन को प्रणाम कर, जब परिसर से विदा हुआ तो मानस में तिरने लगे वे तीन चित्र जिन्हें मीरा बहन ने बापू-कुटी में उनके आसन के सिरहाने दीवार पर उकेर रखे थे। एक ताड़ का पेड़, दूसरा चरखा और तीसरा उनके बीच उभरता 'ॐ'। लगा, इन तीनों में समूचा गांधी-दर्शन समाया हुआ है। ताड़ परिचायक था बापू की प्रकृतिनिष्ठा का, चरखा उनके ग्राम-स्वराज्य का और ''ॐ'' उनकी आध्यात्मिकता का। काश, भारत उस दर्शन को एक बार फिर अपना पाता। उसके सामने आज जो इतनी सारी समस्यायें मुंह बाये खड़ी हैं, उनका स्थायी समाधान इसी दर्शन में निहित है। किन्तु क्या कहा जाये– 'पानी में भी मीन पियासी!'

– 'मानस' बी- १२८
रामसागर मिश्रा नगर,
लखनऊ, उ.प्र.

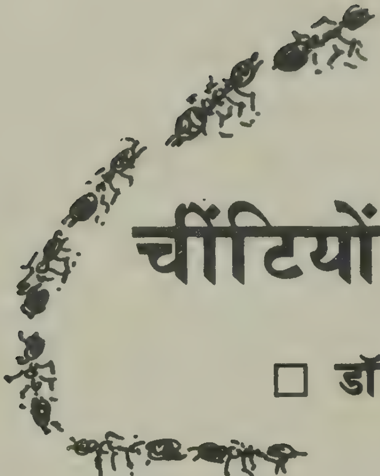
□

'प्रदर्शनी में हम सिर्फ आपके ही बनाये चित्र देखते रहे,' एक युवती ने चित्रकार से कहा।

'धन्यवाद! पर यदि आप दूसरों की कलाकृतियां भी देखतीं, तो मेरी कला के गुण और भी स्पष्ट हो जाते!'

'सच तो यह है कि दूसरों के चित्रों के सामने भीड़ बहुत लगी थी।' उस युवती ने कहा।

– डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'



चींटियों की बस्ती में

□ डॉ. सुशील जोशी

चींटी की तरह मसलने को कहना आसान है, पर करना मुश्किल है। बहरहाल कथनी और करनी में अंतर तो रहता है। आपको शायद अंदाज़ भी न होगा कि दुनिया में कितनी चींटियां हैं, वे कितनी तरह की होती हैं, कहां-कहां रहती हैं। शायद एकाध चींटी को मसलने तक तो ठीक है, पर अगर सारी दुनिया की चींटियों को मसलने निकलेंगे तो बड़ी दिक्कत में फंस जायेंगे। बहुत ताकतवर होती हैं चींटियां! मसलन एक चींटी अपने वजन से पचास गुना बोझ उठा सकती है। आप उठा पायेंगे करीब २५ क्विंटल का बोझ? चींटियों की और भी कई खासियतें हैं। जैसे ये बहुत सुंदर-सुंदर घर बनाती हैं, खेती करती हैं, पशुपालन करती हैं, और भी न जाने क्या-क्या करती हैं। कुल मिलाकर बहुत ही सामाजिक प्राणी है चींटी। पर आगे बात करने से पहले एक बात समझना बहुत ज़रूरी है कि जब हम चींटी कहते हैं तो चींटियों की कई किस्में होती हैं और हम उन सभी क़िस्मों की बात कर रहे होते हैं। दुनिया भर में इनकी करीब १२-१४ हज़ार किस्में हैं और कुल संख्या शायद ३० खरब के आसपास होगी। ये ध्रुवों और पहाड़ों की बर्फीली चोटियों को छोड़कर बाकी सब जगह पायी जाती हैं।

अगर आप किसी एक चींटी का पीछा करते जायें तो आप उसके घर पहुंच जायेंगे। जी हां, घर! और घर भी सीधा-सादा नहीं – बड़ा करीने से बना हुआ घर होगा वह – वास्तुकला का सुंदर नमूना। बल्कि इसे घर न कहकर शहर कहना ही बेहतर होगा। चींटियां बड़ी जबर्दस्त कामगार होती हैं। ब्राज़ील में चींटी की एक जाति है जो एक साल में प्रति एकड़ १६ टन मिट्टी को

ऊपर-नीचे कर देती है। अक्सर चींटियों के घरौंदे ज़मीने के अंदर बनते हैं। उनमें कमरे होते हैं, रास्ते होते हैं, हवा आने-जाने की जगह होती है, गोया पूरा साज़ो-सामान होता है। लेकिन कई चींटियां ज़मीन के ऊपर भी घर बनाती हैं। जैसे वीरबहूटी पेड़ के ऊपर घर बनाकर रहती है। यह पेड़ की पत्तियों को आपस में इस तरह जोड़ लेती है कि एक तरह का घोंसला बन जाता है। पत्तियों को आपस में जोड़ने के लिए इसके शरीर में विशेष तरह के रसायन बनते हैं।

चींटी की बस्ती में पहुंचकर आपको दिखेगा कि वहां बड़ी गहमागहमी है। अलग-अलग किस्म की चींटियां तरह-तरह की उठापटक में व्यस्त हैं। पर यह कोई बेतरतीब उठापटक नहीं चल रही है। यहां तो बड़ी व्यवस्थित गतिविधियों को अंजाम दिया जा रहा है। पर पहले अलग-अलग किस्म की चींटियों से तो मिल लें।

एक तो है रानी। यह आकार में बहुत बड़ी है, यानी इसका पेट वाला हिस्सा बहुत फूल गया है। इस पेट में बेशुमार अंडे भरे हुए हैं। होता यह है कि हर बस्ती में एक ही रानी होती है। शुरू में यह पंख वाली होती है और कई नर चींटियों से संबंध कर लेती है। रानी के शरीर में एक शुक्राणु कोष होता है जिसमें नर चींटियों के अंडे इकट्ठे होते रहते हैं। अब यह रानी अंडे देने के लिए तैयार है– प्रति दस मिनट एक अंडा।

चींटियों की एक बात बहुत मज़ेदार है। जब वे अंडे देती हैं तो हर अंडा शुक्राणु से निषेचित हो यह ज़रूरी नहीं। जब अंडे का शुक्राणु से मेल होता है, तो ऐसे निषेचित अंडे में से मादा चींटी पैदा होती है। जब निषेचन नहीं होता, तो चींटा पैदा होता है। परंतु रानी लगातार निषेचित अंडे ही देती जाती है और मादा चींटियां बनती जाती हैं। निषेचित अंडे तो तभी दिये जाते हैं, जब नर की ज़रूरत हो अर्थात् कोई नयी बस्ती शुरू करनी हो।

प्रश्न यह उठता है कि जब इतनी सारी चींटिया पैदा होती जा रही हैं तो रानी एक ही कैसे है? इसका एक कारण है। जैसे ही रानी अंडे देना शुरू करती है, उसके शरीर से एक रासायनिक पदार्थ निकलना शुरू हो जाता है। इस रासायनिक पदार्थ को अंडों में से निकली इल्लियां चाटती हैं। यह पदार्थ बहुत लुभावना होता है, पर इसे चाटने वाली इल्लियां जब वयस्क चीटियां बनती हैं तो इनमें प्रजनन क्षमता नहीं होती। इस तरह से एक ही रानी बस्ती में रहती है।

नर चींटी तो पैदा होती नहीं, क्योंकि सारे अंडे निषेचन के बाद ही रानी के शरीर से निकलते हैं। इसलिए चींटियों की बस्ती ''मादा बस्ती'' होती है।

अब ये ढेरों चींटियां (१ प्रति मिनट के

हिसाब से) पैदा हो गयीं। जैसे ही चीटियों की पहली खेप पैदा होती है, वैसे ही रानी सारा कामकाज छोड़कर बस अंडे देने में लग जाती है। बाकी कामकाज ये नयी चींटियां संभाल लेती हैं। घर बनाना, भोजन का इंतज़ाम करना, बस्ती की सुरक्षा करना, अंडों को सहेजना, इल्लियों को भोजन कराना, रानी की देखभाल करना, रानी के शरीर से निकलने वाला "प्रजनन रोधी पदार्थ" इल्लियों को खिलाना, वगैरह सारे काम ये चीटियां संभालती हैं। इन अलग-अलग कामों के लिए इनमें अलग-अलग गुण पैदा हो जाते हैं।

कुछ चींटियों को सिपाही बनाया जाता है, कुछ को मज़दूर। इनकी शरीर की रचनायें भी अलग-अलग हो जाती हैं। मज़दूर चींटियां बस्ती से बाहर निकलती हैं और भोजन ढूंढ़-ढूंढ़ कर लाती हैं। जब वे वापिस आती हैं तो सिपाहियों द्वारा उनकी जांच की जाती हैं। यदि उसी बस्ती की हैं तो ठीक, वरना उन्हें मार दिया जाता है। कुल मिलाकर बात यह है कि "श्रम का विभाजन" हो जाता है और अपनी-अपनी भूमिका के अनुसार उनकी शरीर रचना भी बन जाती है।

भोजन का इंतज़ाम करना एक बड़ा काम होता है, और इसके तरीके भी विचित्र होते हैं। शकर के दाने, मरे हुए कीड़े-मकोड़े, पत्तियां, फूलों का रस वगैरह तो हैं ही पर यहां हम दो बहुत जबर्दस्त तरीकों की बात करेंगे, एक है "खेती" और दूसरा है "पशुपालन"।

चींटियों की कुछ प्रजातियां ऐसी हैं, जो नियमित रूप से "खेती" करती हैं। इन्हें खेतिहर चींटी कहें, तो अनुचित न होगा। ये चींटियां (याने उनके मज़दूर) पत्तियां काटकर उठा लाती हैं। इन पत्तियों को थोड़ा चबाकर, थोड़ा पचाकर अपने "घर" में बिछा दिया जाता है। अब इन पर एक किस्म की फफूंद "बोयी" जाती है। जब यह फफूंद उग आती है, तो यह भोजन का एक अच्छा साधन बन जाती है। इस भोजन के लिए कोई प्रतिस्पर्धा भी नहीं होती, अन्य प्रजातियों के साथ। इस प्रकार की खेतिहर प्रजातियां सबसे पहले पूना में १८२९ में एक अंग्रेज़ फौज़ी अफसर ने देखी थीं। आज इस तरह चींटियों की १०० प्रजातियां हम जानते हैं, जो खेती करती हैं। इसके अलावा कई प्रजातियां ऐसी भी हैं जो खुद "खेती" तो नहीं करतीं, पर अनाज इकट्ठा करके रखती है। कई बार ऐसा देखा गया है कि इनकी बस्तियों के आसपास ऐसे पौधे उगे होते हैं जो आमतौर पर उस इलाके में नहीं उगते। परंतु वैज्ञानिकों का मानना है कि चींटियां जानबूझकर इन्हें बोती हों, ऐसा नहीं लगता।

फिर दूसरा धंधा है "पशुपालन" का। कुछ चींटियां होती हैं जो अन्य

कीटों को ''पालती'' हैं, उन्हें घास-फूस खिलाती हैं और उनके द्वारा पैदा किये गये पदार्थों को दुहती हैं। जैसे कुछ चींटियां एफिड नामक एक कीट को इस तरह से पाल लेती हैं। इनमें से जो शहद के समान पदार्थ हनीड्यू बनता है, उससे इन चींटियों के भोजन का काम चल जाता है।

इसी तरह के कई विस्मयजनक काम ये चींटियां करती हैं। लूट-पाट, दूसरी प्रजातियों को गुलाम बनाकर काम करवाना, इत्यादि कामों के लिए आपसी संचार की एक सुगठित प्रणाली जरूरी है। यहां इसमें जाना संभव नहीं है, क्योंकि यह अपने आप में एक बहुत ही विस्तृत विषय है। इतना ही कहना काफी होगा कि संचार प्रणाली का मुख्य हिस्सा रासायनिक संकेतों के ज़रिये पूरा होता है। इसके अलावा शारीरिक हाव-भाव, नाच इत्यादि के द्वारा भी ''बातचीत'' होती है।

जब बस्ती में ज़रूरत होती है कि एक नयी रानी पैदा की जाये तो कुछ इल्लियों की देखभाल विशेष तरह से की जाती है। ये प्रजननक्षम मादायें बनती हैं। साथ ही साथ कुछ अनिषेचित अंडे भी रानी देती है, जो नर बनते हैं। रानी और नर चींटियां फिर से एक बार उड़ जाते हैं अपनी मिलन-यात्रा पर और फिर से शुरू हो जाती है एक नयी बस्ती। **(स्रोत फीचर्स)**

गीत

सुंदर-सी मासूम कली को
कैदी आज बनाया किसने ?

अरमानों के पंख पसारे
चाह रही थी चांद-सितारे
ना जाने बेवक्त घड़ी में
धीरे से समझाया किसने,

सुन्दर-सी मासूम कली को
कैदी आज बनाया किसने ?

बाग-बगीचों में तितली-सी
खेल रही थी मैं भोली-सी
ना जाने आज़ाद घड़ी में
उलझन में भटकाया किसने,

सुंदर-सी मासूम कली को
कैदी आज बनाया किसने ?

रस दीवाने हैं भौंरे भी
गाते हैं फूलों के गाने
ना जाने मस्ती के क्षण में
जादू आज चलाया किसने,

सुंदर-सी मासूम कली को
कैदी आज बनाया किसने?

– मुरलीधर पाण्डेय
देना बैंक भवन, दूसरी पास्ता गली,
कुलाबा, बंबई-५

स्वास्थ्य

कब्ज से कैसे बचें ?

□ प्रकाशचन्द्र गंगराड़े

आम धारणा यह है कि कब्ज एक साधारण रोग है। अतः लोग इसकी ओर ध्यान नहीं देते। वास्तविकता यह है कि मात्र इस एक रोग के कारण व्यक्ति अनेक रोगों की गिरफ्त में आ जाता है। कब्ज पेट का एक ऐसा भयानक रोग है, जो आरंभ में भले ही कष्टप्रद न लगे, लेकिन कालांतर में उपचार न किये जाने से गंभीर रोग का कारण बन सकता है।

आम तौर पर कब्ज का मतलब मल का निश्चित समय पर न आना, कम मात्रा में आना या बिल्कुल ही न आना से समझा जाता है, लेकिन वास्तव में इन लक्षणों के अलावा मल का सूखापन और कड़ापन होना भी होता है। कब्ज को मलावरोध, मलबन्ध, कोष्ठबद्धता, कांस्टीपेशन आदि नामों से भी जाना जाता है।

अंतड़ियों में भोजन के अनावश्यक और बिना पचे अंश काफी समय तक पड़े रहते हैं, इससे सड़न पैदा होती है और उसके विषैले प्रभाव रक्त में मिल कर कई दोष व विकार पैदा करना शुरू कर देते हैं। अतः यह जरूरी है कि मल आंतों में अधिक समय तक बना न रहे। हमारी खानपान संबंधी असावधानियों और स्वास्थ्य के नियमों की अवहेलना करने से ही आंतों की स्वाभाविक गति में शिथिलता आ जाती है, जिसके परिणाम स्वरूप मल बहुत देर में आगे बढ़ता है और बहुत थोड़ी मात्रा में ही बाहर आ पाता है। इसी कारण स्वाभाविक हाजत महसूस नहीं होती।

वैसे कब्ज दो प्रकार का होता है - पहला अस्थाई कब्ज, जो किसी आकस्मिक कारण से पैदा होता है, जबकि दूसरा स्थाई पुराना कब्ज हमेशा बना रहता है। इन्हें यूं भी जाना जाता है – एक बड़ी आंतों के दोष के कारण उत्पन्न कब्ज और दूसरे मलाशय के कारण उत्पन्न कब्ज। बड़ी आंतों का कब्ज खानपान का दोषपूर्ण और जुलाब जैसी दवाओं के असर से होता है। मलाशय में होने वाले कब्ज का मुख्य

कारण शौच जाने की आदत का नियमित रूप से पालन न करना होता है।

रोग के लक्षण

इस रोग में भूख नहीं लगती, सिर दर्द बना रहना, आलस्य, सुस्ती, नींद न आना, शौच में अधिक समय लगना, शौच साफ न होना, मल सूखा व कम आना, शौच की हाजत बनी रहना, घबराहट होना, जीभ पर मैल की तह जमना, मुंह का स्वाद बिगड़ना, कमर दर्द, पेट का भारी रहना, मुंह से दुर्गन्ध आना, पिंडलियों में दर्द होना, अधिक दिनों तक शिकायत बनी रहने के कारण बवासीर और गृध्रसी रोग का होना आदि लक्षण देखने को मिलते हैं।

रोग के कारण

चाय, कॉफी, धूम्रपान, मदिरा का अधिक सेवन, गरिष्ठ भोजन का अधिक प्रयोग, मानसिक कार्य की अधिकता, समय पर मल त्याग न करके रोकने की कोशिश करना, अप्राकृतिक रहन-सहन, खानपान, भोजन की अनियमितता, जल्दबाजी में भोजन करना, रात में अधिक जागरण करना, पैदल नहीं घूमना, पानी कम मात्रा में पीना, विभिन्न रोग जैसे - बवासीर, बुखार, पीलिया, आमाशय शोथ, यकृत शोथ, मोटापा, आंतों का कैंसर की वजह से भी कब्जियात की शिकायत हो जाती है।

चिकित्सा

अक्सर कब्ज की शिकायत से पीड़ित व्यक्ति दवाओं का सहारा लेकर इस रोग से छुटकारा पाने की नाकामयाब कोशिश करते हैं। वे अपने आहार-विहार में किसी प्रकार का परिवर्तन करना पसंद नहीं करते। ऐसे में वे कब्ज के चक्कर से छूट नहीं पाते और बाद में दवाएं भी अपना असर खो देती हैं।

यूं देखा जाये तो कब्ज का सही इलाज उसको उत्पन्न करने वाले कारणों को दूर करना है। ये खानपान संबंधी भूलों व गलत रहन-सहन को सुधार कर ठीक किया जा सकता है। शौच की हाजत होने पर उसे टालें नहीं। नियमित समय पर शौच जाने की आदत बनायें। बच्चों को माता-पिता ऐसी शिक्षा दें कि वे सही समय पर इस क्रिया के लिए जायें।

आयुर्वेदिक मतानुसार कब्ज की चिकित्सा के लिए उचित आहार-विहार का ध्यान रख कर पाचन क्रिया ठीक रखनी चाहिये। प्रातः उठते ही मुंह हाथ धोकर एक गिलास पानी पीना फिर शौच जाना, दोनों समय ठीक वक्त पर भोजन खूब चबा-चबा कर करना, भोजन के बीच पानी न पीकर डेढ़ घंटे बाद पानी पीना, गरिष्ठ व तले खाद्य पदार्थ कम से कम खाना, हरी शाक-सब्जी व कच्चा सलाद अधिक सेवन करना, सोने से तीन घंटे पूर्व भोजन कर लेना, सोते समय कुनकुना दूध पीना, सुबह जल्दी उठ कर दैनिक क्रियाओं से निपटने के बाद नियमित सूर्य नमस्कार करना और दोनों

समय शौच जाने वाला व्यक्ति तथा उपरोक्त नियमों का पालन करने वाला कभी कब्ज का शिकार नहीं होता।

कब्ज दूर करने के लिए जुलाब की जगह गाजर, अमरूद, बेल, पके आम, पपीता, सेव कारगर साबित हुए हैं। इसके अलावा मौसम के फल संतरा, नाशपाती, अंजीर, चीकू, खजूर तथा सब्जियों में टमाटर, मूली, ककड़ी, खीरा, नींबू, शलजम आदि का नियमित सेवन भी कर सकते हैं।

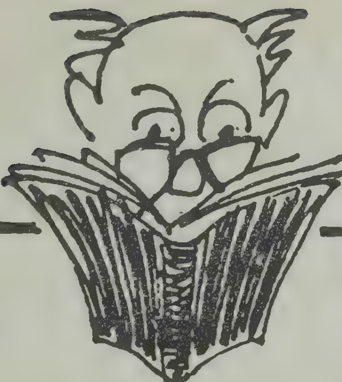
कब्ज का रोगी जहां तक हो सके देर तक पचने वाले, वातकारी और गैस पैदा करने वाले पदार्थ जैसे - उड़द, मसूर, गोभी, बैंगन, मटर, सेम, आलू, मिठाइयां, पूरी, कचौरी, मिर्च मसालेदार चाट, बिस्कुट, मैदे की चीजें, हलवा, खोया आदि चीजों का सेवन न करें।

नीचे कुछ घरेलू नुस्खे दिये जा रहे हैं, जिन्हें अपना कर आप अपनी कब्ज की शिकायत दूर कर सकते हैं:-

* एक नींबू का रस एक गिलास गर्म सहनीय पानी में मिलाकर सोते समय नियमित पीने से कब्ज हमेशा के लिए दूर हो जाता है।
* पांच-छह मुनक्का एक गिलास गर्म दूध के साथ सोने से पूर्व सेवन करने से पेट साफ हो जाता है।
* पुराने कब्ज के रोगी एक कप दूध में दो चम्मच ईसबगोल की भूसी मिलाकर सोने से पूर्व कुछ दिनों तक नियमित लें।
* पचास ग्राम गुलकन्द एक गिलास दूध के साथ सोते समय सेवन करने से पेट साफ हो जाता है।
* त्रिफला का चूर्ण एक से दो चम्मच की मात्रा में सोने से पूर्व पानी से लें। पेट साफ करने और कब्ज दूर करने की यह एक आयुर्वेदिक प्रसिद्ध दवा है। इसके अलावा लवणभास्कर चूर्ण, इच्छाभेदी रस जैसी विरेचन की दवाएं भी लाभप्रद हैं।
* आठ-दस दिन तक खाली पेट दो संतरों का रस पीने से पुराने से पुराना कब्ज दूर हो जाता है।
* अरंडी का तेल (कास्टर आइल) दो चम्मच एक गिलास दूध के साथ सोते समय पीने से सुबह कब्जियात से छुटकारा मिल जाता है। यह एक उत्तम हानि रहित जुलाब है।

— ९०२/N२, हबीबगंज,
कस्तूरबा अस्पताल,
भोपाल-४६२ ०२४.

असाधु व्यक्ति हमारा कोई अपकार नहीं कर रहा है, इतने ही से साधु पुरुष को सन्तुष्ट होना चाहिये। सर्प मनुष्य को लपेट कर ही रह जाये और काटे नहीं तो क्या यह लाभ नहीं है?



ग्रंथलोक

*** विज्ञान : नई राहें * लेखक : जयप्रकाश भारती एवम् रचना कुमार; प्रकाशक : शुभकामना, कलानिकेतन नवीन शाहदरा, दिल्ली-३२; मूल्य : ५५ रुपये ।**

आज हम विज्ञान के युग में जी रहे हैं। विज्ञान की उपलब्धिया इतनी तीव्रता से बदल रही हैं कि आज की उपलब्धि आने वाले कल में फीकी पड़ जाती है। ऐसी स्थिति में विज्ञान लेखकों का कर्तव्य है कि वे विज्ञान की उपलब्धियों को जन सामान्य तक पहुंचायें। यह पुस्तक इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए एक प्रभावशाली कदम है।

पुस्तक में आधुनिक विज्ञान के १८ शीर्षकों पर जानकारी दी गयी हैं। इनमें प्रक्षेपास्त्र, यंत्रमानव लेसर, अति-चालकता, चन्द्रअभियान, खगोलविज्ञान आदि जैसे कठिन विषयों कों जनसामान्य की रोचक भाषा में प्रस्तुत किया गया है। पुस्तक में कहीं पर भी विज्ञान के कठिन सूत्रों और जटिल संकल्पनाओं को प्रयोग नहीं किया गया है। इसलिये पुस्तक को पढ़ते समय पाठक ऊबता नहीं है। पुस्तक में दिलचस्प उदाहरण प्रस्तुत किये गये हैं।

यह पुस्तक केवल जनसामान्य के लिये ही नहीं बल्कि बच्चों के लिए भी बहुत उपयोगी है – **डॉ. सी. एल.**

* * *

*** 'अंतस की यादें' (गीत संग्रह)* रचनाकार : मधुकर गौड़; सार्थक साहित्य प्रकाशन, डी/३, शांति नगर, दत्त मंदिर रोड, मालाड़ (पूर्व), बम्बई - ८७; मूल्य : ३५ रुपये ।**

पुरानी पीढ़ी के उन गीतकारों में जो निरन्तर लिखते चले जा रहे हैं और जिन्होंने सभी गीत-आन्दोलनों के प्रभाव को अपने में समेटा है, श्री मधुकर गौड़ का नाम बड़े आदर एवं आस्था के साथ लिया जाता है। उन्होंने जीवन में भोगे कटु-मधु यथार्थ को जिस बेबाक एवं ईमानदार सोच के साथ गीतों में ढाला है, उसकी जितनी प्रशंसा की जाये, कम है। मानो वे गीत को समर्पित हैं। समय के धनुष, अन्तस की यादें

उनके गीतों के सशक्त संग्रह हैं। 'अन्तस की यादें' तो मधुकरजी के कोमल मन की उन सभी स्मृतियों और प्रतिच्छायाओं का गीत-कोश है, जिन्हें उनके प्रेमाकुल मन ने वर्षों से सहेजकर रखा है। वस्तुतः इस संग्रह के मीठे गीतों में मधुकरजी ने अपने नाम को सार्थक किया है।

'अंतस की यादें' में उनके ७२ गीत संग्रहीत हैं। ये गीत, गीत और नवगीत के बीच की कड़ी जैसे लगते हैं। इन गीतों में कवि की अतृप्त उत्सुकता, उर्वर जिज्ञासा, नये मुहावरे की तलाश, किसी दरार को शब्दों से सी देने की लयात्मक ललक—सब कुछ है।

कवि का रहस्यवादी मन समर्पण और जिज्ञासा के दो किनारों के बीच बह रहा हैं – **'बह रहा मन फिर समर्पण की नदी में। कौन-सी धारा कहां ले जायेगी।'** यह अनिर्णय की स्थिति उसके खंडित मन को और अधिक सन्नाटे से भर देती है – **'बिना तुम्हारे लगता जैसे यह जीवन निष्प्राण है। घायल हैं मन की आशायें, खण्डित हर मुस्कान है।'**

इस संग्रह की एक विशेषता सब पाठकों को पहली ही दृष्टि में हृदयंगम हो जाती है और वह यह कि सभी गीतों के मुखड़े अद्भुत हैं। प्रत्येक गीत की प्रथम चार पंक्तियां जैसे पूरा गीत कह जाती हैं। **– डॉ. किशोर काबरा**

*** अमृत पुत्र (उपन्यास)* लेखक : प्रणव कुमार वन्द्योपाध्याय; प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली; मूल्य : ७५ रुपये।**

प्रणव कुमार वन्द्योपाध्याय उपन्यास-जगत में जाने-माने हस्ताक्षर हैं। १९९० में प्रकाशित 'अमृतपुत्र' उनका नवीनतम उपन्यास है, जिसमें रामायण के बाल-काण्ड को आधार बनाकर तत्कालीन सामाजिक वातावरण का सुन्दर एवं तर्क संगत चित्रण किया गया है। महाराजा दशरथ द्वारा आयोजित पुत्रेष्टि यज्ञ से लेकर राम-परशुराम संवाद और राजा दशरथ का पुत्रों और पुत्रवधुओं समेत अयोध्या वापस लौटने तक की प्रमुख घटनाओं का ऐसा तर्क पूर्ण चित्रण किया गया है, जो निश्चित ही उपन्यासकार के गहन-पौराणिक अध्ययन का परिचायक है। रामायण सामान्यतया एक पौराणिक रचना है और इसी कारण उसमें कुछ ऐसे भी प्रसंग मिलते हैं जो तर्क के धरातल पर प्रबुद्ध पाठकों को ग्रहच नहीं हैं। ऐसे अनेकों प्रसंगों का चित्रण प्रस्तुत उपन्यास- 'अमृतपुत्र' में इस तर्क पूर्ण ढंग से किया गया है जो मनोवैज्ञानिक एवं मनोविश्लेषणात्मक दोनों ही दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

ऐसे सुन्दर-सारगर्भित उपन्यास के लिए उपन्यासकार को साधुवाद।

* * *

*** मौसम की पाण्डुलिपि(काव्य संग्रह)* डॉ. कृष्ण विहारी सहल; चिन्मय प्रकाशन, जयपुर; मूल्य : ३० रुपये ।**

प्रस्तुत काव्य संग्रह 'मौसम की पाण्डु-लिपि' की कवितायें उतनी ही विविध हैं, जितना मौसम, जो निरन्तर परिवर्तित तो होता रहता है, किन्तु उस परिवर्तन के पीछे एक सनातनता का सूत्र भी बना रहता है। समय की पहचान और समय के बीच से गुजरते हुए जीवन को पहचानने का अनवरत प्रयास, अपने भीतर सोच और भावों की बदलती हुई धूप-छांव और उनसे भीगती-सूखती बाहर की जमीन। कवि की प्रायः सभी कविताओं में 'मैं' पर बहुत जोर दिया गया है, परन्तु यह हर मौसम के तेवर से सामन्जस्य स्थापित करता हुआ बाहर की पूरी जिन्दगी से, भीतर के पूरे अहसास से इतने सशक्त रूप से जुड़ा हुआ है कि कवि का वह 'मैं' समय की पहचान बन गया है।

कवि ने संवेदना के कई धरातलों को पार कर एक गहन अन्तर्विरोध के बीच से अपनी राह निकाल कर जीवन के यथार्थ को पकड़ने की सफल कोशिश की है। प्रायः समस्त रचनाओं में कवि का दार्शनिक पक्ष उभर कर सामने आया है, जो पाठकों को चिन्तन की एक नवीन धारा की ओर मोड़ने में सफल हुआ है— 'दर्द की सीमायें', 'मेरा आसमान,' 'सत्यावरण,' 'नया व्याकरण' 'लाकर में बंद शिकायतें', 'मित्र के नाम', एवं 'पेशोवर' आदि अनेकों ऐसी रचनायें हैं जो हमें सोचने को मजबूर कर देती हैं।

समझ से परे हो गया है
मेरे लिए देश का व्याकरण
चारों ओर या तो सर्वनाम हैं
(वह, मैं, वे, तू, तू, मैं, मैं)
या फिर कोरे विशेषण
(भ्रष्ट, बेईमान, चोर, कमीने)
कहीं कोई संज्ञा नहीं
क्रिया के नाम पर बस
जड़ता या शून्यता
...... क्या करूं
इस संज्ञा शून्य....
क्रिया शून्य.....
व्याकरण वाले देश का ।

सार्थक शीर्षक एवं सुन्दर मुद्रण से युक्त नयी कविता का यह संकलन वस्तुतः काव्य जगत एवं कविता प्रेमियों के द्वारा सराहा जायेगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

* * *

*** राष्ट्रपति के संस्मरण * लेखक : नीलम संजीव रेड्डी; प्रकाशक: राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, नयी दिल्ली; मूल्य : ५० रुपये ।**

भारत जैसे विशालतम प्रजातांत्रिक राष्ट्र में यद्यपि राष्ट्रपतीय

शासन प्रणाली नहीं है और भारतीय संविधान के अनुसार सभी विधायी शक्तियां प्रधानमंत्री पद में निहित हैं; फिर भी भारत के राष्ट्रपति का अपना गौरव है और वह भारत का प्रथम नागरिक है। एक प्रमुख राजनीति शास्त्री के अनुसार भारतीय संविधान उधार का थैला है, इसीलिए अधिक पेचीदा, जटिल और लचीला हो गया है।

परन्तु इतना होते हुए भी राष्ट्रपति का अपना मौलिक स्वायत्ततापूर्ण स्थान है और इसी के फलस्वरूप कभी-कभी राष्ट्रपति के सम्मुख ऐसे प्रश्न उठ खड़े होते हैं, जिनका समुचित उत्तर एवं समाधान अत्यावश्यक हो जाता है। प्रस्तुत आत्मकथात्मक शैली में लिखी गयी पुस्तक में भारत के एक भूतपूर्व राष्ट्रपति श्री नीलम संजीव रेड्डी के संस्मरणों को प्रकाशित किया गया है, जो निश्चित ही प्रेरणादायक हैं। आपात् कालीन स्थिति के बाद जनता सरकार का सत्ता में आना और फिर समय से पूर्व ही लोक सभा का विघटन हो जाना तथा नये चुनाव करवाने का निर्णय देना, आदि कुछ ऐसी परिस्थितियां थीं, जिनका समाधान तत्कालीन राष्ट्रपति ने जिस बुद्धिमत्ता एवं धैर्यपूर्वक किया, उसे भुलाया नहीं जा सकता।

अपनी विदेश यात्राओं के दौरान भी राष्ट्रपति श्री नीलम संजीव रेड्डीजी ने देश की गरिमा और संस्कृति को सर्वोपरि माना और उसका सही रूप से प्रतिनिधित्व भी किया जिसकी झलक प्रस्तुत पुस्तक में देखी जा सकती है।

* * *

*** नयी शिक्षा नीति : आधार एवं क्रियान्वयन * सं. : डॉ. राम शकल पाण्डेय; प्रकाशक : विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा; मूल्य : ५० रुपये।**

'नई शिक्षा नीति : आधार एवं क्रियान्वयन' साहित्य परिचय १९८८ का सोलहवां सामयिक विशेषांक है, जिसमें देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों के प्रमुख विद्वानों एवं शिक्षा शास्त्रियों के सारगर्भित निबन्धों को प्रकाशित किया गया है। पुस्तक में संकलित प्रायः सभी लेख राष्ट्रीय शिक्षा नीति, नयी शिक्षा नीति के परिप्रेक्ष्य में लिखे गये हैं, जिनमें विद्वान लेखकों ने भारतीय शिक्षा के विविध आयामों एवं देश में नयी शिक्षा नीति के प्रभाव को बड़े सारगर्भित ढंग से प्रस्तुत किया है।

पुस्तक में संकलित सभी निबंध अपने आप में एक खजाना हैं, परन्तु 'नई शिक्षा नीति और मूल्यों की शिक्षा' 'विद्यालय संकुल', 'नवोदय विद्यालय', 'उन्मुक्त विश्वविद्यालय - एक महत्व-पूर्ण उपलब्धि,' 'दूर शिक्षा का सापेक्ष महत्व,' 'उपाधि को सेवा से अलग करना कितना सार्थक?' 'हिन्दी

शिक्षण,' 'महाराष्ट्र सरकार की नयी भाषा नीति,' 'शिक्षक प्रशिक्षण का स्वरूप' आदि कुछ ऐसे निबन्ध हैं जो न केवल सूचना पूरक हैं, बल्कि हमें सोचने पर मजबूर कर देते हैं।

प्रस्तुत पुस्तक में नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति के विविध आयामों की चर्चा विस्तार से की गयी है। साथ ही साथ इसके गुण-दोषों का भी विवेचन किया गया है। — **डॉ. किशोरीलाल त्रिवेदी**

* * *

*** इतिहास प्रश्नोत्तरी * लेखक : सुरेश शर्मा, उमेश ठाकुर, नितिन वशिष्ठ; प्रकाशक : डायमंड पॉकेट बुक्स (प्रा.) लि.,२७१५,दरियागंज,नयी दिल्ली, मूल्य : २० रुपये।**

इतिहास बहुत व्यापक विषय है। पूर्वकाल की घटनाओं और उसके परिणामों का अध्ययन भविष्य की नीति निर्धारित करने के लिए भी आवश्यक हैं। इतिहास के पृष्ठ हमारे पूर्वजों के पद्चिह्न हैं, जो हमें बताते हैं कि हम कहां से चले थे और हमारा मार्ग हमें किस ओर ले जायेगा।

लेकिन इस इतिहास की व्यापकता विद्यार्थियों को भयभीत करती है। उन्हें इतिहास सबसे अधिक अरुचिकर विषय प्रतीत होता है। इसी कारण एक बड़ा विद्यार्थी वर्ग इतिहास के महत्वपूर्ण तथ्यों को जानने से वंचित रह जाता है। बड़ी-बड़ी बातों को रटना उसे अच्छा नहीं लगता।

इस दृष्टि से ही इस उपयोगी पुस्तक की रचना की गयी है। इस पुस्तक में प्रश्न और उनके छोटे-छोटे उत्तरों के माध्यम से इतिहास की सभी महत्वपूर्ण घटनाओं की रोचक जानकारी देने का प्रयास किया गया है।

पाठकों की सुविधा हेतु लेखक त्रय ने पुस्तक को १० अध्यायों में विभाजित कर दिया है- प्राचीन विश्व, प्राचीन भारत, मध्यकालीन विश्व (क, ख), मध्यकालीन भारत, आधुनिक विश्व, आधुनिक भारत, भारत का स्वतंत्रता संग्राम, द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद का विश्व, स्वतंत्रता के बाद का भारत।

यह पुस्तक विद्यार्थी समुदाय, इतिहास के प्रति जिज्ञासु प्रत्येक पाठक और प्रतियोगी परीक्षाओं में सम्मिलित होने वाले हर युवक के लिए महत्वपूर्ण है।

* * *

*** १९९० की हास्य-व्यंग्य रचनाएं * संपादक : डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल; प्रकाशक : डायमंड पॉकेट बुक्स, २७१५, दरियागंज, नयी दिल्ली; मूल्य: १५ रुपये।**

संपादक की अपनी कुछ सीमाएं हैं, लेखकों की अपनी अनेक विवशताएं हैं, किंतु संपादक का यह प्रयास

लगातार बना हुआ है कि संबंधित वर्ष में प्रकाशित हास्य-व्यंग्य की रोचक रचनाएं इस संग्रह में स्थान प्राप्त कर सकें और यह संकलन वर्ष का प्रतिनिधि संकलन बन सके। संकलन को दो भागों में विभाजित किया गया है। पद्य खंड में ४१ कवियों की हास्य-व्यंग्य कविताएं तथा गद्य खंड में १७ गद्य रचनाएं संगृहीत हैं। इसमें दो एकांकी भी हैं। इसकी विशेषता यह है कि अल्हड़ बीकानेरी, अशोक चक्रधर, काका हाथरसी, जैमिनी हरियाणवी, प्रेम-किशोर पटाखा, बालकवि बैरागी, मधुप पांडेय, माणिक वर्मा, सरोजिनी प्रीतम, सूर्यकुमार पांडेय, हुल्लड़ मुरादाबादी, के. पी. सक्सेना, चिरंजीत, रवींन्द्रनाथ त्यागी, लतीफ घोंघी, शरद जोशी, श्रीकांत चौधरी तथा सूर्यबाला जैसे सुप्रसिद्ध गद्य-पद्य लेखकों के अतिरिक्त अनेक ऐसे लेखक भी इसमें सम्मिलित किये गये हैं जो हास्य-व्यंग्य क्षेत्र में अपनी पहचान बनाने में लगे हुए हैं।

निश्चय ही जो व्यक्ति तनावों की दुनिया से मुक्ति का इरादा लेकर हर्ष और उल्लास के सागर में गोते लगाना चाहते हैं, साथ ही व्यंग्य-स्थलों पर तिल-मिलाना भी चाहते हैं, उनके लिए यह संकलन पूरे वर्ष आनंद का साधन बना रहेगा। **— डॉ. मीना अग्रवाल**

*** जागी नदिया नैन की * डॉ. अब्दुल अजीज "अर्चन"; माडर्न प्रिंटर्स, राय-बरेली; मूल्य : १५ रुपये ।**

जागी नदिया नैन की डॉ. अब्दुल अजीज 'अर्चन' की सद्यः प्रकाशित काव्यकृति है, जिसमें लगभग ५०० से अधिक दोहे संग्रहीत हैं। ये दोहे अपने शब्द शिल्प एवं भावगांभीर्य में सर्वथा अनूठे एवं श्रेष्ठ हैं। इनके पढ़ने से रहीम, कबीर और बिहारी की दोहा परम्परा की स्मृति बरबस सजीव हो उठती है।

हिन्दी साहित्य में मुस्लिम कवियों का योगदान विशिष्ट और सराहनीय रहा है। डॉ. अर्चन इस योगदान में एक नयी कड़ी बनकर हमारे सामने आते हैं।

मानवीय जीवन दर्शन पर उनका एक अति भावप्रवण दोहा यहां दृष्टव्य है—

छोर न कोई दूर तक,
निसि-दिन भटकें नैन ।
जीवन ज्यों भव-सिंधु में,
एक लहर बेचैन ।।

प्रस्तुत काव्य की भाषा अवधी और खड़ी बोली है, जिसमें बहुप्रचलित हिन्दी, उर्दू, और फारसी शब्दों का प्रयोग भी यत्र-तत्र किया गया है। दोहों की विविधता पाठकों का मनोरंजन भी करती है और ज्ञानवृद्धि भी।

- आनन्द स्वरूप श्रीवास्तव

गुणों की खान : हींग

□ अनिता जैन

* ज़ख्म यदि कुछ समय तक खुला रहे तो उसमें छोटे-छोटे कीड़े पड़ जाते हैं। अतः ज़ख्म पर हींग का चूर्ण डालने से ये कीड़े मर जाते हैं ।
* यदि शरीर के किसी हिस्से में कांटा लग गया हो तो उस स्थान पर हींग का घोल भर दें। कुछ समय में कांटा स्वतः बाहर निकल आयेगा ।
* पेट के दर्द, अफारे और ऐंठन में अजवाइन और नमक के साथ हींग का सेवन करें, लाभप्रद रहेगा ।
* निमोनिया होने की दशा में गुनगुने गर्म पानी में जरा-सी हींग घोलकर सेवन करने से लाभ होगा ।
* दांतों में कीड़ा लग जाने पर रात्रि को हींग दबाकर सोयें। कीड़ा खुद-ब-खुद निकल जायेगा ।
* पेट में कीड़े हो जाने पर हींग को पानी में घोलकर एनिमा करने से पेट के कीड़े मरकर शीघ्र ही बाहर निकल जाते हैं ।
* हींग का लेप बवासीर, तिल्ली और उदरशोथ आदि रोगों में अत्यंत लाभप्रद है ।
* हींग भूनकर गुड़ के साथ सेवन करने से दाद, खाज व खुजली में लाभ होता है ।
* यदि आपको कब्जियात की शिकायत है तो हींग के चूर्ण में थोड़ा-सा मीठा सोडा मिलाकर फांक लें ।
* थोड़ी-सी भुनी हुई हींग, रुई के फोहे में लपेटकर दाढ़ पर रखने से दाढ़ का दर्द कम हो जाता है ।
* अधिक खा लेने या कोई भारी चीज खा लेने से अफारा हो गया हो तो हींग को पीसकर उसमें काला नमक मिलाकर हल्के गर्म पानी से सेवन करने से लाभ होगा ।
* हींग में रोग-प्रतिरोधक (एण्टीसेप्टिक) गुण काफी अधिक होते हैं। दाद, खाज व खुजली व अन्य चर्म रोगों में इसको पानी में घिसकर उन स्थानों पर लगाने से आश्चर्यजनक लाभ होगा ।

— द्वारा श्री कैलाश जैन
मनोज मार्ग, भवानीमण्डी,
राजस्थान.



सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन; क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई–४००००७ के लिए प्रकाशित तथा एसोसियेटेड एडवरटाइजर्स एंड प्रिन्टर्स, बम्बई ४०००३४ में मुद्रित।